'साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं का एक समाजवैज्ञानिक अध्ययन''

(झाँसी जनपद के विशेष सन्दर्भ में)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की समाजशास्त्र विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध

2008

शोध निर्देशक-

डॉ. बी.डी.एस. गौतम

उपाचार्य,

स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग,

नारायण कॉलेज, शिकोहाबाद - 205135

अनुसंधित्सु-

कु० चन्द्रकान्ता दत्तात्रेय
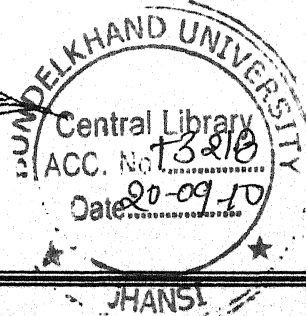
शोध केन्द्र

आर्य कन्या महाविद्यालय, झाँसी (उ०प्र०)

डॉ० बी०डी०एस० गौतम
उपाचार्य, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग,
नारायण कॉलेज, शिकोहाबाद - 205135
(सम्बद्ध : डॉ० बी०आर०ए० विश्वविद्यालय, आगरा)

Ph. : (05676) 235486
Mob. : 9410043300
निवास- 1550, शम्भूनगर,
शिकोहाबाद (उ०प्र०)

दिनांक : ....

प्रमाण – पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि अनुसंन्धित्सु ***कु0 चन्द्रकान्ता दत्तात्रेय*** शोध पंजीकरण संख्या 3282-2005/4366-68 दिनांक 15.07.2005 ने मेरे द्वारा प्रस्तावित शोध विषय ***"साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं का एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन" (झाँसी जनपद के विशेष संदर्भ में)*** बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी द्वारा अनुमोदित शोध प्रकरण पर समाज विज्ञान संकाय के अन्तर्गत समाजशास्त्र विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि प्राप्त करने हेतु प्रस्तुत अनुसंन्धान कार्य पूरा किया है। मैं यह भी प्रमाणित करता हूँ कि (1) मेरी पूर्ण जानकारी एवं विश्वास में यह आपका मौलिक अनुसन्धान कार्य है (2) प्रस्तुत अनुसंधान कार्य बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की शोध परिनियमावली के समस्त अनुबन्धों तथा अधिनियमों की पूर्ति करता है। दो सौ दिन शोध केन्द्र पर रुक कर कार्य किया है।

अतः उपरोक्त समस्त तथ्यों के प्रकाश में मैं इस शोध प्रबन्ध के परीक्षण एवं मूल्यांकन की प्रबल संस्तुति तथा अनुशंसा करता हूँ। अनुसन्धित्सु के प्रति अनेकानेक हार्दिक सद्भावनाओं और उज्जवल भविष्य की मंगल कामनाओं सहित।

B.D.S. Gautam

(डॉ. बी.डी.एस. गौतम)

निर्देशक

डॉ. आनन्द खरे,
उपाचार्य एवं विभागाध्यक्ष समाजशास्त्र,
डी० वी० कॉलेज, उरई (जालौन)

Mob. : 9450297403
निवास- न्यू रामनगर, उरई

दिनांक : ....

प्रमाण - पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि अनुसंन्धित्सु ***कु0 चन्द्रकान्ता दत्तात्रेय*** शोध पंजीकरण संख्या 3282-2005/4366-68 दिनांक 15.07.2005 ने मेरे द्वारा प्रस्तावित शोध विषय ***''साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं का एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन'' (झाँसी जनपद के विशेष संदर्भ में)*** बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी द्वारा अनुमोदित शोध प्रकरण पर समाज विज्ञान संकाय के अन्तर्गत समाजशास्त्र विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि प्राप्त करने हेतु प्रस्तुत अनुसंन्धान कार्य पूरा किया है। मैं यह भी प्रमाणित करता हूँ कि (1) मेरी पूर्ण जानकारी एवं विश्वास में यह आपका मौलिक अनुसन्धान कार्य है (2) प्रस्तुत अनुसंधान कार्य बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की शोध परिनियमावली के समस्त अनुबन्धों तथा अधिनियमों की पूर्ति करता है।

अतः अनुसन्धित्सु के प्रति अनेकानेक हार्दिक सद्भावनाओं और उज्जवल भविष्य की मंगल कामनाओं सहित।

(डॉ. आनन्द खरे)
सह-निर्देशक

<u>घोषणा – पत्र</u>

मैं ***कु0 चन्द्रकान्ता दत्तात्रेय*** घोषणा करती हूँ कि समाजशास्त्र विषय के अन्तर्गत ***'साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं का एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन'' (झाँसी जनपद के विशेष संदर्भ में)*** डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पी-एच.डी.) उपाधि हेतु प्रस्तुत यह शोध प्रबन्ध मेरी स्वयं की मौलिक रचना है। इसके पूर्व ये शोध कार्य किसी अन्य के द्वारा कहीं भी प्रस्तुत नहीं किया गया है अपना यह शोध कार्य मैंने अपने सुयोग्य निदेशक ***डॉ0 बी.डी.एस. गौतम*** उपाचार्य, समाजशास्त्र विभाग, नारायण कॉलेज, शिकोहाबाद के पथ प्रदर्शन में किया है।

(कु0 चन्द्रकान्ता दत्तात्रेय)

"उपोद्घात एवं आभार"

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति होने के साथ-साथ अपने में अनेक धरोहर समेटे हुए। एक ओर जहाँ यूनान, मिस्त्र और रोम आदि की प्राचीन संस्कृतियाँ इतिहास बन चुकी है। वही दूसरी ओर हमारी संस्कृति काल के विभिन्न सोपानों से गुजरते हुए आज भी अपने मूल रूप में विद्यमान है। भारतीय संस्कृति के मूल में हमारी गौरवशाली भारतीय सामाजिक प्रणाली है। इस सामाजिक प्रणाली में संयुक्त परिवारों का चलन एवं वृद्धों का संरक्षण एक अनुपम विशेषता है। वास्तव में हमारी इस अदभुत संस्कृति के जन्मदाता और संरक्षक हमारे वृद्धजन है। जिनकी छत्रछाया में हमारा विकास होता है। भारतीय समाज में आ रहे परिवर्तनों के कारण परिवार में साठोत्तर वृद्धों की देखभाल करने की क्षमता घटती जा रही है। क्योंकि भारतीय मूल्य शिथिल पड़ते जा रहे है। जो वृद्धों की देखभाल का समर्थन करते है। क्योंकि बुजुर्गो ने समाज को शिखर तक पहुँचाने की असीम वौद्धिक क्षमता है। वृद्ध हमारी संस्कृति की अनमोल धरोहर है। इनको सुरक्षित रखना हमारा परम कर्तव्य है।

यह निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक युवा को निश्चित आयु सीमा एवं पारिवारिक प्रक्रियानुसार एक न एक दिन वृद्धावस्था में पर्दापण करना ही है। तथा सुखी एवं शान्तिमय जीवन हेतु नवीन मूल्य व्यवस्था पुरातन एवं अद्यतन व्यवहार प्रतिमानों के साथ तादात्मन स्थापित करना है। श्रेयष्कर प्रतीत होता है। अतः शोध ज्ञान संवर्धन के क्षेत्र में अद्वितीय महत्व रखता है। किसी भी स्तर पर एक शोध किसी भी विषय वस्तु की वास्तविकता के ओर अधिक निकट पहुँचने का एक वैज्ञानिक साधन है।

प्रत्येक शोध कार्य एक सामूहिक कार्य है प्रस्तुत शोध प्रबन्ध भी एक प्रयत्न का प्रतिफल है इस शोध प्रबन्ध को तैयार करने में अनेक महानुभवों एवं विद्वत जनों का सहयोग मुझे प्राप्त हुआ है। उनके प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करना मेरा प्रथम कर्तव्य है।

सर्वप्रथम मैं इस शोध-प्रबन्ध को प्रस्तुत करने का सम्पूर्ण श्रेय मेरे निर्देशक श्रद्धेय गुरुजी ***डा० बी.डी.एस. गौतम,*** उपाचार्य, समाजशास्त्र विभाग को देती हूँ। जिन्होनें "साठोत्तर वृद्धों की जीवन चर्या एवं समस्याओं का एक समाज वैज्ञानिक

अध्ययन'' (झाँसी जनपद के विशेष सन्दर्भ में) इस विषय के प्रति मेरा ध्यान आकर्षित कर शोध करने हेतु साहस एवं प्रेरणा प्रदान की। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध एक विनम्र प्रयास है जो उन्हीं के आर्शीवाद का फल है मैं उनके प्रति हृदय से आभारी हूँ।

आभार ज्ञापन के अगले चरण में मैं अपने माता-पिता एवं गुरू के रूप में डा0 आनन्द खरे विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, डी.वी. कॉलेज, उरई के प्रति विशेष आभारी हूँ। जिन्होंने शोध कार्य हेतु मुझे प्रेरित एवं दिशा निर्देशित करते रहे हैं। साथ ही अपना अमूल्य समय देकर मेरा कार्य पूरा कराने में मेरी मदद की।

अन्तः में आभार प्रसून के अन्तिम शब्दों के रूप में इस शोध-प्रबन्ध का सारा श्रेय अपने पति को देना चाहती हूँ जिन्होंने मेरी इस कृति को पूर्ण कराने में पूर्ण आर्थिक सहयोग दिया एवं मेरी सभी जरूरतों को इस शोध कार्य हेतु पूर्ण किया है। मैं उनके प्रति सदैव श्रद्धानत रहूँगी।

अनुसंन्धित्सु

Kanta

(कु० चन्द्रकान्ता दत्तात्रेय)

अनुक्रमणिका एवं अध्यायीकरण

क्रमशः.......२

क्रमशः.......३

अध्याय-१

प्रस्तावना

मनुष्य के जीवन में वृद्धावस्था का आगमन एक अफाट्य सत्य है। उसके आयु चक्रों में शैशवास्था, किशोरावस्था, युवावस्था सरलता से व्यतीत हो जाती है। परन्तु वृद्धावस्था का समय व्यतीत होना उतना ही कठिन प्रतीत होता है। इसका कारण स्पष्ट है। शैशवास्था, किशोरावस्था एवं युवावस्था में हम जिन अपनों से घिरे रहते है। जिनसे हमें प्रेम, अपनापन और सुरक्षा प्राप्त होती है यही ऊष्मा हमें जीने की प्रेरणा प्रदान करती है। परन्तु वृद्धावस्था में यही भीड़ शनैः शनैः छँट जाती है। और वृद्ध व्यक्ति अपने को नितान्त अकेला महसूस करने लगता है।

विश्व के सभी समाजों में वृद्धावस्था स्वयं एक बड़ी सामाजिक समस्या है। संसार का कोई भी व्यक्ति यह नहीं चाहता कि वह वृद्ध हो और यदि चह वृद्ध हो तो समस्याग्रस्त एवं पराश्रित नहीं हो। वृद्धावस्था प्राकृतिक आयु का एक शाश्वत नियम है जिसे समाप्त नहीं किया जा सकता। यह अवश्य है कि वृद्धावस्था की समस्याओं को बड़ी ही सूझबूझ के साथ सुलझाया जा सकें। अकेलेपन से ग्रसित वृद्ध व्यक्ति को प्रेम, सुरक्षा तथा सम्मान की आवश्यकता होती है। जो उसे भौतिकवादी एवं व्यक्तिवादी मूल्यों के वर्चस्व के कारण नहीं मिल पाता। जिससे उसका शेष जीवन समस्याग्रस्त हो जाता है।

प्रस्तुत अध्ययन साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं से सम्बन्धित है। प्रस्तुत अध्याय में भारतीय समाज में वृद्धों की प्रस्थिति का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, वृद्धावस्था की प्रक्रिया एवं विविध पक्ष, वृद्धावस्था की अवधारणा सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन तथा अध्ययन समस्या का प्रस्तुतीकरण, अध्ययन के उद्देश्य व प्राकल्पना जैसे पक्षों पर प्रकाश डाला जा रहा है।

(१) भारतीय समाज एवं वृद्धों का परिवर्तित परिदृश्य :

मानव ईश्वर की सृष्टि का सबसे बुद्धिमान प्राणी है। प्राचीन समय से ही

मानव की औसत आयु शत् वर्ष मानी गई है। इससे उसके जीवन की प्रथम तीन अवस्थाओं– शैशवास्था, किशोरावस्था, एवं यौवनावस्था में तो वह असम्भव को भी सम्भव बनाने की शक्ति एवं योग्यताएँ अर्जित कर लेता है परन्तु वृद्धावस्था के आते ही वह अनेक समस्याओं से भयाक्रान्त हो जाता है। वस्तुतः वृद्धजन आयु के आधार पर बनने वाला वह सबसे महत्त्वपूर्ण वर्ग है जिसकी प्रस्थिति का परिवार की संरचना से विशेष सम्बन्ध होता है। परिवार समाज की आधारभूत, मौलिक एवं सार्वभौमिक इकाई है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति में सम्पूर्ण मानव जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया गया– ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम एवं सन्यासाश्रम। जीवन के प्रारम्भिक भाग में शिक्षा प्राप्त करना तदोन्तर गृहस्थ जीवन में धार्मिक, पारिवारिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्वों को सौंपकर ईश्वरोपासना हेतु वानप्रस्थाश्रम में प्रवेश किया जाता था। वानप्रस्थाश्रम में त्याग–तप आदि के द्वारा आध्यात्मिक उत्कर्ष, भौतिक इच्छाओं से मुक्ति प्राप्त की जाती थी तथा वानप्रस्थाश्रम में आयु पूर्ण करने के उपरान्त शेष जीवनयापन हेतु सन्यासाश्रम में प्रवेश किया जाता था। इस प्रकार प्राचीन समाज व्यवस्था में आश्रम व्यवस्था धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष सम्बन्धी प्रवृत्तियों को सन्तुलित रखने तथा समाज में वृद्धों की स्थिति एवं सम्मान की दृष्टि से पूर्णतः तर्कसंगत थी।

भारतीय समाज में वैदिक काल से ही वृद्धों को अत्याधिक सम्मानित स्थान देने तथा उन्हें आदर्श मार्ग दर्शक के रूप में स्थापित करने के लिए अनेक व्यवस्थाएँ बनाई गयी। समाज में संयुक्त परिवार व्यवस्था वह सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्था थी जिसमें परिवार के समस्त सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक अधिकार परिवार के सबसे वृद्ध व्यक्ति को सौंपकर दूसरे सदस्यों को उन्हीं के निर्देशानुसार कार्य करना एक सामाजिक प्रतिमान बना दिया गया था। यह प्राचीन भारतीय मनीषियों का एक विशेष चिन्तन था। जिसके फलस्वरूप यहाँ एक गौरवपूर्ण संस्कृति का विकास सम्भव हो सका। वैदिक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि मर्यादा पुरुषोत्तम राम अपनी पत्नी सीता के साथ अपने पिता राजा दशराथ के आदेश पालनार्थ चौदह वर्ष के वनवास पर चले गये थे, माता कुन्ती के भ्रमादेश के परिपालनार्थ पाण्डवों ने द्रोपदी से विवाह किया, एकलव्य ने गुरु द्रोणाचार्य को

गुरुदक्षिणा में अपना अँगूठा समर्पित कर दिया था। इस प्रकार प्राचीन काल से आज तक वृद्धों, वृद्ध माता–पिता, ऋषिमुनियों के सम्मान की परम्परा रही है।

कोई भी सामाजिक व्यवस्था चाहे कितनी भी उपयोगी रही हो समय के साथ उसमें अनेक ऐसे तत्व जुड़ने लगते हैं जिनके परिणाम स्वरूप उसकी उपयोगिता कम होने लगती है।

भारत में मध्य काल के आरम्भ से ही निरक्षरता एवं रुढ़िवादी व्यवहारों के कारण धीरे–धीरे जब संयुक्त परिवारों की संरचना बहुत दोषपूर्ण होने लगी तो परिवार के अधिकांश सदस्य इसे एक अनुपयोगी संस्था के रूप में देखने लगे जिसके परिणाम स्वरूप वृद्धों की प्रस्थिति में भी परिवर्तन आने लगा तथा वृद्ध पुरुषों की अपेक्षा वृद्ध नारी की सामाजिक स्थिति अत्यन्त त्रासद हो गई।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से जब औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया में वृद्धि होना आरम्भ हुई तो पहली बार लोगों को संयुक्त परिवार से अलग होकर अपना अलग परिवार (एकाकी परिवार) बनाने के अवसर मिलना आरम्भ हो गये और यहीं से संयुक्त परिवार का विघटन आरम्भ होने लगा। परिणामतः एक माता–पिता की युवा सन्तानें अपने लिए जब नये केन्द्रक परिवार की स्थापना करती है तो नई जगह में स्थान की कमी तथा स्वतन्त्र जीवन जीने की लालसा के कारण वे अपने वृद्ध माता–पिता को साथ नहीं रखती यहीं से वृद्धों का जीवन एक समस्या का रूप लेने लगता है। सामान्यतः वृद्धावस्था को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। (i) प्रारम्भिक वृद्धावस्था 60 से 70 वर्ष (ii) अग्रवर्ती वृद्धावस्था 70 वर्ष से मृत्युपर्यन्त तक। वास्तव में वृद्धावस्था एक स्वाभाविक और प्राकृतिक स्थिति है प्रत्येक बालक कुछ समय बाद युवा और फिर प्रौढ़ बनकर अन्त में वृद्धावस्था तक पहुँचता है। अतः इस प्रकार हमें ज्ञात होता है कि वृद्धजन हमारी संस्कृति के जन्मदाता तथा संरक्षक हैं। प्रो. योगेन्द्र सिंह का मानना है कि बुजुर्गों में समाज को शिखर तक पहुँचाने की असीम बौद्धिक क्षमता है। वृद्धजन हमारी संस्कृति की अनमोल धरोहर हैं उनको सुरक्षित रखना हमारी आवश्यकता तथा परम् धर्म है।

(२) वृद्धावस्था की प्रक्रिया एवं विभिन्न पक्ष :

वर्तमान में साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या तथा उनसे जुड़ी अनेक समस्याएँ

सामाजिक चिन्तन का विषय बन गई है। वृद्धावस्था के अन्तर्गत मुख्यतः परिवार में वृद्धों की प्रभुसत्ता, एवं प्रभाव निर्णय लेने की शक्ति, सहभागिता, परिवार के बजट पर नियन्त्रण, सम्पत्ति का निस्तारण, कार्य-कलाप, सामाजिक सुरक्षा, परम्परागत मूल्यों का विचलन, रिश्तेदारों एवं मित्रों की सम्बद्धता, सम्प्रेक्षण रिक्तता, आर्थिक समस्याओं का भार, पारिवारिक उत्तरदायित्व, अलगाव तथा समाज में घटित होने वाले सामाजिक परिवर्तनों के प्रति वृद्धों का दृष्टिकोण आदि को सम्मिलित किया जाता है।

भारत में वृद्ध जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है। सन् 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में 5.56 प्रतिशत वृद्ध जनसंख्या थी जबकि सन् 2001 की जनगणना के अनुसार यह जनसंख्या बढ़कर 7.18 प्रतिशत हो गई जिसकी सन् 2021 में 9.8 प्रतिशत होने की सम्भावना है। जन्मदर में कमी होने तथा स्वास्थ्य सुविधाएँ बढ़ने के कारण जीवन प्रत्याशा में बढ़ोत्तरी के कारण एक ओर जहाँ वृद्ध जनसंख्या बढ़ रही है वहीं दूसरी ओर भौतिकवादी एवं व्यक्तिवादी मूल्यों के वर्चस्व, पारिवारिक विघटन, औसत आयु में वृद्धि, अन्तर्विस्थापन आर्थिकी पर आधारित बदलते मानव सम्बन्धों के कारण वृद्धों की सामाजिक, आर्थिक एवं मानसिक समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं जिस कारण शनैः शनैः वृद्धजनों की समस्याओं की ओर समाजशास्त्रियों का ध्यान आकर्षित हुआ है।

आज सम्पूर्ण विश्व में वृद्धों की समस्याओं के प्रति नई जागरुकता उत्पन्न हुई है। अमरीका तथा अनेक यूरोपीय देशों में भी वृद्ध माता-पिता ने केवल अपने बच्चों द्वारा पूरी तरह परित्यक्त होने लगे हैं बल्कि अस्वस्थता या असमर्थता की दशा में अपना ही जीवन उनके लिए बोझ बन जाता है। अतः परिवर्तन के युग में वृद्धों की समस्याओं का समाधान करने के लिए सर्वप्रथम 1948 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने वृद्धावस्था के अधिकार पर एक घोषणा-पत्र तैयार किया तथा इस पर विस्तारपूर्वक विचार किया गया। इसी घोषणा-पत्र के आधार पर सन् 1982 में वृद्धों के लिए पियना में होने वाले अधिवेशन में एक अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम तैयार किया गया जिसमें इस बात पर बल दिया गया कि वृद्धों को आर्थिक सहायता देने के साथ ही उन्हें सामाजिक सुरक्षा भी उपलब्ध करायी जाये; विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा वृद्धों को रोगों से सम्बन्धित चिकित्सकीय सुविधाएँ दी जाए;

सामाजिक गतिविधियों में वृद्ध पुरुषों तथा स्त्रियों की सहभागिता बढ़ायी जाये तथा उनके आवास एवं पर्यावरण में सुधार किया जाये। परिणामतः सभी देशों में वृद्धों के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन् 1999 को अन्तर्राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष घोषित किया गया तथा इसी तारतम्य में भारत सरकार ने सन् 2000 को राष्ट्रीय वृद्ध वर्ष घोषित करते हुए प्रतिपालन एवं निर्वाह अधिनियम के तहत सरकार ने Criminal Procedure Code (C.R.P.C.) एवं Adoption and Maintenance Act के 20(3) में 42 वाँ संविधान संशोधन कर नई पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी के प्रति दायित्वों के निर्वाहन हेतु कटिबद्ध किया।

विगत वर्षों में विज्ञान, तकनीकी एवं चिकित्सकीय सुविधाओं ने व्यक्ति को अधिक आयु प्रदत्त की है। इस सन्दर्भ में यूनेस्को की अध्ययन आख्या विशेष महत्त्वपूर्ण है जिसके अनुसार सन् 1975 में विश्व में 60 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति की संख्या 3500 लाख थी जो सन् 2006 में बढ़कर 6000 लाख हो गई। इन वृद्धों का लगभग 50 प्रतिशत भाग विकासशील देशों में निवास करता है। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार भारतवर्ष में 24.01 प्रतिशत वृद्ध रहते हैं।

विगत दशकों के जनगणना संमकों का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि सामान्य जनसंख्या की वृद्धि दर की तुलना में वृद्धों की वृद्धि दर अधिक है जिससे यह अनुमानित होता है कि भारत में वृद्धों की वृद्धि–दर प्रवृत्ति आने वाले वर्षों में निरन्तर सततीकृत रहेगी या पहले की अपेक्षा अधिक हो जायेगी।

तालिका संख्या-१.१

भारत में वृद्धों की वृद्धि-दर का विवरण

दशक	सम्पूर्ण जनसंख्या की वृद्धि का प्रतिशत	वृद्धों की संख्या में वृद्धि का प्रतिशत
1951–1961	21.51	22.40
1961–1971	24.80	32.32
1971–1981	24.75	31.60
1981–1991	23.09	38.02
1991–2001	24.01	40.02

स्त्रोत– भारत की जनगणना रिपोर्ट वर्ष 1961, 1971, 1981, 1991 एवं 2001 के अनुसार–

सन् 1991 की भारतीय जनगणना के अनुसार भारत में 556.05 लाख वृद्ध जनसंख्या थी जो सन् 2001 में बढ़कर 716.70 लाख हो गई तथा कुल जनसंख्या के अनुपात में वृद्धों का औसत सन् 1991 में 5.56 प्रतिशत से बढ़कर सन् 2001 में 7.18 प्रतिशत हो गया।

विश्व स्तर पर वृद्धावस्था का अध्ययन अनेक पक्षों से किया गया जैसे– जीवशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, शरीरविज्ञान एवं स्वास्थ्य, समाज–आर्थिक आदि। इन पक्षों के द्वारा वृद्ध एवं वृद्धावस्था का व्यापक संज्ञान सम्भव है क्योंकि समाज में सभी वृद्धों की समस्याएँ एक जैसी नहीं होती अतः आवश्यक है कि वृद्धों की दशाओं और समस्याओं का अध्ययन किया जाये जिसके लिए यहाँ कुछ अध्ययन निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

(i) वृद्धावस्था के जीवशास्त्रीय पक्ष :

यह पक्ष सामान्यतः व्यक्ति के शरीर में होने वाले उन सभी परिवर्तनों से सम्बन्ध रखता है जो वृद्धावस्था के सूचक होते हैं तथा जिनकी माप (जाँच) करना सम्भव है। **वर्जन एफ.** (1963)[1] एवं **नॉक** (1960)[2] ने स्पष्ट किया कि किसी व्यक्ति की जैविकीय अवस्था उसकी सबसे अधिक क्रियाशील जीवनकाल की क्षमता के सापेक्ष वर्तमान प्रस्थिति की सूचक होती है जो उन क्रियाओं के अध्ययन पर आधारित है जो व्यक्तियों एवं वृद्धों के जीवनकाल को पृथक–पृथक सीमावद्ध कर देती है। अथवा यह जानने पर आधृत है कि अलग–अलग व्यक्तियों की जीवन अवधि अलग–अलग क्यों होती है। **एम.एस. कॉनूगो** (1982)[3] का मानना है कि जीवन में बहुत सी घटनाएँ निश्चित समय पर ही घटित होती हैं जैसे–जैसे उत्पादन क्षमता में कमी; मस्तिष्क, हृदय, गुर्दा आदि की क्रियाशीलता में 30 से 32 वर्ष की अवस्था के उपरान्त कुछ ह्रास होने लगता है। जीवनशास्त्री मुख्यतः वृद्धावस्था के कारणों से सम्बद्ध रखते हैं; जैसे किस निश्चित आयु से वृद्धापन आरम्भ होता है; क्या प्रत्येक अवयव एक साथ प्रभावित होकर व्यर्थ में शिथिल होने लगते हैं या भिन्न–भिन्न जैविकीय अंग विभिन्न अवस्थाओं में क्षीण होने लगते हैं। अतः इस अवस्था में बहुत से असाध्य रोग वृद्ध को जकड़ लेते हैं जो मृत्युपर्यन्त तक पीछा नहीं छोड़ता तथा कभी–कभी यह व्यक्ति की मृत्यु का कारण भी बन जाता है। जैविकीय आधार पर वृद्धावस्था का संज्ञान करना कठिन कार्य है

क्योंकि 40 वर्ष का व्यक्ति कभी–कभी वृद्ध जैसा प्रतीत हो सकता है और कभी 60 वर्ष का वृद्ध भी एक युवा के समान ऊर्जावान एवं कार्यक्षमता का प्रकटीकरण करता है। अतः यह व्यक्ति की शारीरिक बनावट एवं परिस्थितियों पर निर्भर करता है कि वह किस अवस्था में वृद्ध जैसा परिलक्षित होगा।

(ii) वृद्धावस्था के मनोवैज्ञानिक पक्ष :

वृद्धावस्था का यह पक्ष मूलतः व्यक्ति के विचार सीखने की भावना, संवेग, सामर्थ्य, क्षमता, वृद्धि चातुर्य समस्या समाधान एवं सामाजिक व्यवहार जैसे सन्दर्भो के अध्ययन से सम्बद्ध माना जाता है। **आनन्द रमन आर.एन.** (1982)[4] का विचार है कि व्यक्ति तब से अपने को वृद्ध मानने लगता है जब उसे वस्तुनिष्ठ अवलोकन, अवधान एवं बौद्धगमवता में परिवर्तन दिखाई देने लगता है साथ ही व्यक्तिनिष्ठ आत्मावलोकन निर्बल हो जाता है। जिससे उसमें हीन भावना का अभ्युदय आरम्भ होने लगता है। वृद्धापन शब्द से ऐसी स्थिति का संकेत मिलता है जिसमें वृद्ध और युवा में अन्तर किया जाता है साथ ही वे सन्दर्भ आते हैं जो संरचना तथा प्रकार्य की दृष्टि से कुछ विशिष्ट घटनाओं को जन्म देते हैं जो स्थाई रूप से व्यक्ति की मनोवृत्ति एवं दिनचर्या को प्रभावित करती है।

बिरेन जेम्स ई. (1964)[5] ने स्पष्ट किया है कि केन्द्रीय स्नायु व्यवस्था में होने वाले आंशिक या पूर्ण परिवर्तन, चेतनात्मक ग्राहयता की क्षीणता आदि के प्रभाव से ऐन्द्रियक चेतनता में ह्रास का आभास ही वृद्धावस्था का सबसे प्रबल संकेत होता है यदि वृद्धों एवं युवाओं में तुलनात्मक अध्ययन करें तो ज्ञात होगा कि प्रायः उत्तेजना की निम्न तीव्रता वृद्धों में होती है जो उन्हें युवाओं से अलग करती है। याददाश्त एवं कार्य में निपुणता का अवस्थानुसार कम होना, सीखने की क्षमता में कमी होना आदि वृद्धावस्था के कुछ मनोवैज्ञानिक सूचक हैं अतः मनोवैज्ञानिक पक्ष स्वयं जैविकीय एवं समाज–सांस्कृतिक पक्षों से प्रभावित होते हैं।

(iii) शरीर रचना एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी पक्ष :

वृद्ध अवस्था की प्रक्रिया को समझने के लिए अन्य पक्षों की भाँति शरीर रचना एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी स्थितियों को भी महत्त्वपूर्ण माना जाता है। **पाठक जे. डी.** (1982)[6] के अनुसार मानव शरीर करोड़ों कोशिकाओं से निर्मित है। यदि किसी कारण से सूक्ष्म छिद्र वाले अवयवों की क्रियाशीलता अथवा विकास में

शिथिलता आती है। तो वृद्धापन की प्रक्रिया गति पाकर शरीर रचना को प्रभावित करती है। माँस पेशी, मस्तिष्क की कोशिकाएँ तथा सुषम्ना नाड़ी एक बार नष्ट होने या कमजोर होने पर पुनः प्रभावी रूप से उत्पादक नहीं होती जबकि यकृत आदि की कोशिकाएँ सरलतापूर्वक पुनः उत्पादक हो सकती है। अतः इन्हीं स्थितियों से वृद्धापन के लक्षण लक्षित होने लगते है। विश्व में ऐसा कौन सा व्यक्ति है जो स्वेच्छा से वृद्ध होना चाहेगा प्रत्येक व्यक्ति की यह प्रबल इच्छा होती है। कि वह चिरयौवन रहे। जीवन के प्रति प्रत्येक व्यक्ति का दृष्टिकोण सर्वोच्च महत्व का है। एक क्रियाशील व्यक्ति अधिक समय तक जीवित रहने के लक्ष्य से जीवन यापन नहीं करना अपितु वह पूर्ण सन्तुष्ट जीवनयापन के लिए निरन्तर सक्रिय रहता है। तेजी से परिवर्तित होते वर्तमान समाज में व्यक्ति अपनी देखभाल तब ही कर सकेंगे जब उनके पास स्व-अर्जित पर्याप्त साधन होगें। वे व्यक्ति जो अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति अधिक परिश्रम करने के पश्चात् भी नहीं कर पाते है। वे शीघ्र ही वृद्ध हो जाते है। इसी प्रकार वे व्यक्ति जो अधिकाधिक भौतिक साधनों का अर्जन तो कर लेते है। परन्तु वे स्व से सन्तुष्ट नहीं हो वे भी जल्दी ही वृद्ध प्रतीत होने लगते है।

(iv) वृद्धावस्था के सामाजिक-आर्थिक पक्ष :

वृद्धावस्था की प्रघटना को समझने के लिए सामाजिक आर्थिक पक्षों को समझना आवश्यक है। परिवर्तित परिस्थितियों एवं समस्याओं से निरन्तर जूझते रहने से प्रायः व्यक्ति आयु से पूर्व ही वृद्ध लगने लगता है। व्यक्ति जैसे-जैसे वृद्धावस्था की ओर अग्रसर होता है। वैसे-वैसे उसके वैयक्तिक सम्बन्धों में तीव्रता से परिवर्तन परिलक्षित होने लगते है। उसके कुल के सदस्यों से जो उसके सम्बन्धी रहे है। क्रमशः उनमें परिवर्तन होने लगता है। उसके माता पिता प्रायः मृत हो जाते है; उसकी सन्ताने युवा होकर अपने स्वतन्त्र अस्तित्व के लिए प्रयासरत होने लगती है। समाज में तीसरी सन्तति (नाती) के जन्मोपरान्त व्यक्ति दादा के नाम से सम्बोधित किया जाने लगता है। प्रायः जीवन साथी की मृत्यु के उपरान्त व्यक्ति वैद्यव्य जीवन व्यतीत करने लगता है। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता है। मैत्री सम्बन्धों में भी बदलाव आने लगता है। शारीरिक शैथिल्यता के कारण कार्य करने की शक्ति एवं क्षमता का ह्रास होने के कारण सामुदायिक सहभागिता

भी कम होने लगती है। इसके अतिरिक्त वृद्धापन में व्यक्ति विभिन्न आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक प्रक्रियाओं एवं घटनाओं के प्रभाव से भी प्रभावित होता है। वृद्ध की रूचियाँ, इच्छाएँ एवं आवश्यकताएँ आदि समाज के अन्य व्यक्तियों की तुलना में अलग प्रकृति की होने लगती है। जनांकिकीय, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारणों के जटिल संयोग एवं सम्बन्धों से प्रभावित वृद्धापन के सन्दर्भ में कतिपय समाज वैज्ञानिकों (जेरंटोलोस्टि्स) ने महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किये है। जो इस पक्ष को समझने में अत्यन्त उपयोगी जैसे- **एपिल डॉरियन** (1956)[7], **ब्लाऊ जेना** (1956)[8] ; **डिन्कल राबर्ट एम.** (1944)[9] आदि ने जो अध्ययन निष्कर्ष प्रस्तुत किये वे निम्नानुसार है।

(1) जनसंख्यात्मक भार एवं सामाजिक स्थिति के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्ध प्रायः विपरीत प्रकृति के होते है।

(2) समाज में उत्पादन स्तर एवं वृद्धों के कल्याण सम्बन्धी सम्बन्धों के मध्य प्रत्यक्ष सम्बन्ध लक्षित होते है।

(3) वृद्धो के ज्ञान, तकनीकी, यॉंत्रिकी एवं बौद्धिक कुशलता सम्बन्धी प्रकार्य, जो वृद्धों द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित किये जाते है। इस तथ्य पर आघृत होते है कि समाज में ज्ञान, तकनीकी एवं विज्ञान आदि का किस गति से विकास एवं प्रसार हो रहा है या इन क्षेत्रों में किस सीमा एवं दर से परिवर्तन हो रहा है।

(4) नातेदारी व्यवस्था पर आधारित समाज में वृद्धों की स्थिति प्रायः सुदृढ़ होती है तथा उनकी देखभाल भी अच्छी तरह होती है।

निष्कर्षतः यही मानना उचित है कि वृद्धापन का संज्ञान विविध पक्षों के समन्वित सम्बन्धों एवं प्रभावों द्वारा ही सम्भव है। शरीर रचना के अन्तर्गत विभिन्न अंगो में परिलक्षित होने वाले परिवर्तन, व्यक्तियों का आक्रमण व आगमन, व्यक्ति की मनः स्थिति तथा सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों से जनित विरोधी या विषम परिस्थितियाँ आदि वे सन्दर्भ है जो वृद्धावस्था एवं वृद्ध को समझने में सहायक प्रतीत होते है।

(3) वृद्धावस्था की अवधारणा :

वस्तुतः वृद्धावस्था की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए कोई भी सिद्धान्त

अत्यधिक स्पष्ट नहीं है। प्रायः इस सन्दर्भ में दो कारकों को अधिक उपयुक्त माना जाता है– प्रथम भौतिक (शारीरिक) एवं द्वितीय–सामाजिक! उपर्युक्त दोनों ही कारकों को वृद्धावस्था हेतु विचार–विमर्श का आधार माना गया है। भौतिकीय वृद्धापन मुख्यतः उन शारीरिक दशाओं में होने वाले परिवर्तनों से सम्बन्धित है। जिनके कारण व्यक्ति को वृद्ध की पद्वी प्राप्त होती है। जैसे नेत्र ज्योति का निर्वल हो जाना, दन्त क्षय, बालों का श्याम से श्वेत होना व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूर्ण करने में असमर्थता आदि शारीरिक दौर्बल्यता से जनित कारक वृद्धावस्था के परिचायक सन्दर्भ माने जाते है। इसी प्रकार सामाजिक वृद्धापन सामाजिक सुरक्षा सामाजिक कार्य क्षेत्र से निवृत्ति, मूल्य परिवर्तन के प्रति दृष्टिकोण, नाते–रिश्तेदारों से सम्बद्धता की प्रकृति, इष्ट मित्रों से मेल मिलाप की स्थिति; पारिवारिक अधिसत्ता, प्रस्थिति, नियंत्रण एवं संगठनात्मक क्षमता आदि प्रमुख आधार है जिनसे वृद्धावस्था का मूल्यांकन किया जाना सम्भव होता है।

इस सन्दर्भ में वडुक सिलविया (1980) ने समाज में अस्तित्व पाने वाले सांस्कृतिक आदर्शो को वृद्धापन के निर्धारण हेतु प्रभावी माना है। यथा जिस समय पुत्र विवाहोपरान्त वहू को घर लाता है। वैसे ही माँ सास की स्थिति प्राप्त कर वृद्ध की श्रेणी में आ जाती है जिसके परिणाम स्वरूप उस स्त्री की पारिवारिक प्रस्थिति एवं भूमिका में बदलाव आने लगता है। इसी प्रकार पिता की पारिवारिक प्रस्थिति ससुर की हो जाती है। तथा उसकी भूमिका में भी बदलाव आने लगता है।

इस प्रकार परम्परागत सामाजिक मूल्यों के आधार पर परिवर्तित प्रस्थिति एवं भूमिका, शारीरिक परिवर्तन कार्य सम्पादन की क्षमता का क्रमशः ह्रास आदि ही वृद्धापन की अवधारणा को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध होते है।

(4) सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन :

मनुष्य की आयु चक्र के अन्तिम चरण को वृद्धावस्था के रूप में माना जाता है। किसी भी समाज में वृद्धावस्था का आगमन समय भूमिका एवं सम्बन्धों पर वृद्धापन का प्रभाव एवं इससे सम्बद्ध अभिप्राय सदैव समान नहीं होता है। तात्पर्य यह है। कि अलग–अलग समाजों एवं भिन्न–भिन्न उपसमूहों में अलग–अलग प्रकार का लक्षित हो सकता है। इस सन्दर्भ में **सक्सेना, पी. सी.,**

(1964)[10] ने स्पष्ट किया है। कि भारतवर्ष में वृद्धों पर किये गये समाजशास्त्रीय अध्ययन अल्प संख्या में है। जबकि विदेश में किये गये अध्ययनों की संख्या अधिक है। जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वृद्धावस्था स्वयं सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं जैविकीय सन्दर्भो की संयुक्त समस्या प्रतीत होती है। जिसकी पृष्ठभूमि में जटायु की विचलित प्रक्रियाएँ तथा रहस्यात्मक अथवा अस्वाभाविक परिस्थितियों का जटिल दबाव ही प्रमुख है। **जेम्स ई विरेन (1946)[11]** का मानना है। कि अनेक प्रतिकूल स्थितियों के बोझ से बोझिल वृद्ध प्रायः अपने अतीत एवं वर्तमान जीवन की तुलना तथा उसका पुर्नमूल्यांकन करते हुए पाये जाते है। उनका अतीत जितना निशचित एवं सुखद रहा वे उतने ही भविष्य के प्रति चितित प्रतीत होते है।

इस सन्दर्भ में जो प्रारम्भिक अध्ययन किये गये वे प्रायः पश्चिमी देशों के वृद्धो को विविध पक्षों से सम्बन्धित एवं वही तक सीमित रहे है। इनमें मुख्यतः **आर. सी आचले (1976)[12], यिरेन जेन्मई (1964)[13], टिब्बटिस क्लार्क (1951)[14], क्यूमिंग एवं विलियम (1961)[15], टी. वी. हरमैन (1962)[16], जान ई. एण्डरसन (1956)[17], कर्ट वूल्फ (1956)[18], रिचार्ड एच विलियम्स (1960)[19] टानसेण्ड पीडर (1957)[20], विलियम डॉनह्यू (1962)[21]** का अध्ययन आधारभूत प्रतीत होते है। उपरोक्त सन्दर्भो के अध्ययनों से प्राप्त निष्कर्ष यह संकेत करते है कि वृद्धावस्था स्वयं में विभिन्न समस्याओं का आगार माना गया है। परम्परानुसार वृद्धो का सम्मान करना उनकी उचित देखभाल करना, उनके कुशल निर्देशन में पारिवारिक कार्यो का संचालन करना प्रतिष्ठा एवं सुख समृद्धि का प्रतीक माना जाता है। यदि इसके विपरीत उनका जीवन कष्टकर या समस्याग्रस्त हुआ तो यह परिवार के व्यक्तियों के लिए अप्रतिष्ठा तथा पतन का कारण बन जाता है। इन्हीं अनेकानेक सन्दर्भो के अध्यानुसार वृद्धो के जीवन को उपयोगी एवं सामान्य बनाने के लिए जन दृष्टिकोण को परिवर्तित करने के प्रयासों को भी किया गया इस दिशा में भारतीय अध्ययनों में प्रमुखतः के साथ **तरन (1968)[22], कृपाल सिंह (1975)[23], नायर (1980)[24], देसाई (1982)[25], डिसूजा (1982)[26], भाटिया (1983)[27], पूनिया (1987)[28], सरस्वती (1987)[29], आर. एन. पाती (1989)[30], चौधरी डी. पी. (1992)[31]**, आदि का अध्ययन महत्वपूर्ण प्रतीत होता है।

भारतीय अधेताओं द्वारा किये गये अनेक अध्ययनों द्वारा यह ज्ञात होता है। कि भारतीय समाज अपनी प्रकृति से अत्यधिक जटिल, गतिशील एवं परम्परावादी है। यहाँ की परम्परागत नैतिक–आधार व्यवस्था परिवर्तन की विविध प्रक्रियाओं एवं कारकों के समन्वित प्रभाव एवं परिणाम से औधोगिक नैतिक आचार व्यवस्था की ओर स्थानान्तरित होती जा रही है। इन दोनों ही व्यवस्थाओं में सम्याभाव दृष्टिगत होता है। जहाँ वृद्धजन परम्परागत नैतिक आधार व्यवस्था के पोषक रहे है। वही आज की नवीन सन्तति औद्योगिक नैतिक आचार व्यवस्था के अस्तित्व को स्वीकार रही है। भारतीय परम्परागत जीवन शैली ने संयुक्त परिवार एवं विस्तृत परिवार को उपादेय माना तथा बच्चों को वृद्धों ने अपने शारीरिक अवयव (आँख, हाथ) आदि मानकर अत्यधिक स्नेह दिया तथा यह अपेक्षा अपनी सन्तान से की यह उनका नैतिक दायित्व होगा कि वे वृद्धजन को अधिक से अधिक सम्मान, संरक्षण, सुरक्षा तथा सहयोग प्रदान करेंगे जिससे वृद्धजन अपनी विविध आवश्यक आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकें। **साइमन्स एल. डब्लू. (1960)**[32] का मानना है। कि शायद इसीलिए भारतीय समाज में वृद्धों को ईश्वर तुल्य मानकर उनको परिवार में सर्वोच्च पद दिया तथा समाज के श्रेष्ठ अनुभवी परामर्शदाता, शक्तिशाली नेतृत्व की भूमिकाएँ और पारिवारिक निर्णयों का उत्तरदायित्व सौंपा गया। यह इसलिए भी आवश्यक था कि समाज परिवार समुदाय के विभिन्न जटिल पक्षों के निदान हेतु वृद्धजन को अपेक्षाकृत अधिक अनुभवी, ज्ञानवान, क्षमतावान तथा संयमी माना गया था।

विज्ञान–तकनीकी, प्रौद्योगिकी तथा परिवर्तन की प्रक्रिया ने इन परम्परागत मान्यताओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन करना आरम्भ किया जिसके परिणाम स्वरूप सामाजिक संस्तरण, पारिवारिक अधिसत्ता, संरचना , प्रस्थिति एवं भूमिका आदि पक्षों के मध्य दूरियाँ स्थापित होने लगी जिस कारण अन्तः वैयक्तिक सम्बन्धों, अधिसत्ता एवं भूमिका सम्बन्ध आदि जटिल परीक्षण की कसौटी पर कसे जाने लगे इस सम्पूर्ण उथल–पुथल ने समाज में वृद्धों की स्थिति पर अनेक प्रश्नचिन्ह लगाकर उन्हें समस्याग्रस्त जीवनयापन हेतु विवश कर दिया है जो निरन्तर चिन्ता का विषय बनता जा रहा है।

पूर्ण औद्योगिक ग्रामीण भारतीय समाज में वृद्धों का कृषि पर स्वामित्व तथा परम्परागत व्यावसायिक प्रतिष्ठानों पर आधिपत्य था; जिससे वृद्धजन अपनी सामर्थ्यनुसार अनेक उत्पादन क्रियाओं में सहभागिता करते हुए जीवनपर्यन्त तक आर्थिक रूप से अनाश्रित रहते थे। यही वह सन्दर्भ है। जो उनके सम्मान व प्रभुत्व का आधार रहा है। वर्तमान में स्थिति विपरीत होती जा रही है। जिससे वृद्धों के अनुभवों को अनुपयोगी माना जाने लगा है। यह स्थिति अत्यन्त चिन्तनीय एवं कष्टकर है।

भारतवर्ष में तीव्र परिवर्तित तकनीकी ज्ञान एवं प्रवीणता ने वृद्धों के उस अधिकार को प्रभावित किया है कि जिसके कारण वे ज्ञान एकाधिकार, विवेक एवं परम्परागत तकनीकि जैसे क्षेत्रों में अग्रणी रहे हैं। अभी भी भारत जैसे देश में परम्परा एवं आधुनिकता के मध्य संक्रमणता की स्थिति दिखाई देती है। यहाँ का व्यक्ति दोनों ही व्यवस्थाओं को मान्यता दे रहा है परिणामतः अन्तर सन्ततीय संघर्ष की स्थिति अस्तित्व में आती जा रही है। समाज में अस्तित्व एवं प्रसार पा रहे अनेकों सामाजिक निदर्शक इस सन्दर्भ में प्रेरक सिद्ध हो रहे हैं। इस सन्दर्भ में चौधरी, डी.पी. (1992)33 ने स्पष्ट किया कि भारतवर्ष में वृद्धो का क्रमवद्ध अध्ययन नहीं मिलता क्योंकि इस पक्ष के अध्ययन के प्रति विशेष रूचि नहीं रही है। वर्तमान में स्थिति कुछ भिन्न है। अब देश के चिकित्सकों एवं समाज वैज्ञानिकों ने वृद्धों की स्थिति पर चिन्ता व्यक्त करते हुए इनके अध्ययनों को महत्त्वपूर्ण माना है। सन् 1992 में सर्वप्रथम वृद्धों पर एवं विश्व ज्ञानकोश प्रत्याशित किया गया। भारतीय समाज में वृद्ध पुरुषों एवं वृद्ध महिलाओं से सम्बन्धित अध्ययनों में वृद्ध महिलाओं की स्थिति को भी जानने का प्रयास किया गया। यद्यपि हिन्दू पारिवारिक जीवन विधि बहुत कुछ हिन्दुत्व द्वारा नियन्त्रित, निर्देशित एवं नियमित होती है। विभिन्न प्रकार के धार्मिक विश्वास, प्रथाएँ एवं परम्पराएँ हिन्दुओं के मस्तिष्क में गहराई तक स्थापित है अतीत से वर्तमान तक नारी–जीवन–वृत्त इस तथ्य का संकेत करता है कि पुरुष प्रभुत्व वाले भारतीय समाज में नारी की अस्मिता एवं प्रस्थिति अनेक उतार–चढ़ावों से गुजरती रही है। भारतीय समाज में सैद्धान्तिक रूप से नारी को देवी माँ जैसे सम्बन्धों से सम्मानित किया गया किन्तु व्यवहार में कुछ और ही प्रतिमान किये गये।

परिणामतः समाज में नारी को अनेक अन्ध-विश्वासों कुरीतियों के आवरण से आवृत्त होकर नारकीय जीवनयापन हेतु बाध्य होना पड़ा। सम्प्रति स्थिति कुछ बदलती सी प्रतीत होती है। किसान, तकनीकी, संचार, यातायात के साधनों में वृद्धि आदि के समन्वित प्रभावों एवं परिणामों से भारतीय समाज में न्यूनाधिक परिवर्तन दृष्टिगत होने लगा है। बिम्वन अल्तेकर (1962)[34], पद्मिनी (1974)[35], आर. के. शर्मा (1981)[36], सुशीला मेहता (1982)[37], सी. आर. रेड्डी (1986)[38], कृष्ण (1987)[39], रमा मेहता (1987)[40], रमा सिंह (1988)[41], मीना शुक्ला (1990)[42], सुष्वमषा (1992)[43], अंजना (1993)[44], वी. एस. झा (1994)[45] आदि का अध्ययन किया गया है। वर्तमान में नारी ने यह सिद्ध कर दिया है कि वह किसी भी दशा में पुरुषों से पीछे नहीं है परन्तु पुरातन एवं अद्यतन मूल्यों की संघर्षात्मक स्थिति प्रायः सास-बहू के मध्य तनाव, संघर्ष, ईर्ष्या, घृणा जैसे अनेकानेक प्रवृत्तियों एवं स्थितियों को जन्म देकर पारिवारिक व्यवस्था को अस्वस्थ बनाने का प्रयास करती है। अतः शक्ति परीक्षण अस्मिता की रक्षा, प्रतिष्ठा, प्रभुत्व-प्रक्षेपण, स्वाभिमान का वर्चस्व अक्षुण्य बनाये रखने की प्रतिस्पर्धाएँ अन्ततः वृद्धा के सामाजिक समायोजन को पंगु बनाती है।

साहित्य का पुनरावलोकन करने पर प्रतीत होता है कि अभी भी वृद्धों के जीवन से सम्बन्धित विविध पक्षों पर किये गये अध्ययनों का अभाव सा प्रतीत होता है यद्यपि कुछ ऐसे भी अध्ययन हो सकते है जो प्रकाशन के अभाव में सुधी पाठकों तक नहीं पहुँच पाये हैं। आधुनिक परिदृश्य में वृद्धों की चिन्तनीय स्थिति को दृष्टिगत करते हुए मैं यह पुनीत कर्त्तव्य समझती हूँ कि साठेत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं का शोध अध्ययन करुँ। इसी आशय से मैंने प्रस्तुत शोध विषय का चयन किया है।

अध्ययन समस्या का प्रस्तुतीकरण :

यह निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक युवा को एक निश्चित आयु सीमा एवं पारिवारिक प्रक्रियानुसार एक न एक दिन वृद्धावस्था में पदार्पण करना ही पड़ता है तथा सुखी एवं शान्त जीवन हेतु नवीन मूल्य व्यवस्था, पुरातन एवं अद्यतन व्यवहार प्रतिमानों के साथ तादात्म्य स्थापित करना ही श्रेयस्कर प्रतीत होता है।

अतः आवश्यक है कि साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं उनकी समस्याओं से सम्बन्धित विभिन्न महत्त्वपूर्ण पक्षों का सम्यक् समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया जाये जिससे इस अध्ययन द्वारा प्राप्त निष्कर्षो से भावी समस्याओं से सुरक्षित रहने सहायता मिल सकती है। इसी आशय से मैंने निम्नलिखित अध्ययन समस्या का चयन किया है।

''साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं का एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन''

प्रस्तावित अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित है।

(1) अध्ययन इकाईयों की परिचयात्मक पृष्ठभूमि का संज्ञान करना।

(2) सामाजिक रीति–रिवाजों, परम्पराओं अन्धविश्वासों, रुढ़ियों एवं वृद्धों की मनोवृत्तियों को उजागर करना।

(3) वृद्धों द्वारा अपने दैनिक जीवन में विभिन्न क्रिया–कलापों के क्रियान्वयन में आने वाली समस्याओं को उजागर करना।

(4) वृद्धों के जीवन में परिवर्तन की प्रक्रियाओं से सामाजिक आस्थाओं पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करना।

(5) वृद्धों के सामाजिक व आर्थिक जीवन के विविध पक्षों पर पड़ने वाले जीवन के प्रभाव का अध्ययन करना।

प्रस्तावित अध्ययन में निम्नलिखित प्राकल्पना का परीक्षण किया गया है।

आधुनिक भौतिकवादी युग में सह शिक्षा की मान्यता एवं वैधानिक चेतना ने प्रायः वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं को प्रभावित कर उनके समक्ष अनेक समस्याओं एवं चुनौतियों को प्रस्तुत किया है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

(1) वर्जन फ्रिग्येस (1963) : लेक्चर्स ऑन एक्सपेरीमेन्टल जेरेन्टालॉजी, स्प्रिगफील्ड इल : थॉमस

(2) नॉक नटरन डब्ल्यू (1960) : एजिंग : सम सोशल एण्ड बॉयोलॉजिकल आस्पेक्टस इन इन्टरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया ऑफ द सोसल साइन्सेस भाग I & II

(3) एम. एस. घार्नूगो (1982) : द वायोलाजिकल आस्पेक्टस ऑफ एंजिग इन इण्डिया सम्पादक के.जी. देसाई, टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेस, बम्बई

(4) आर. एन. आनन्द रमन (1982) : एडजेस्टमेन्ट एण्ड इट्स कोरिलेटस इन ओल्डएज इन इण्डियन जनरल ऑफ क्लिनिकल साइकोलॉजी (165-168)

(5) पिरेन जेम्स ई. (1964) : द साइकोलॉजी ऑफ एजिंग इंग्लेवुड फिलफ्स एन.जे. प्रिटिस हाल।

(6) जे. डी. पाठक (1982) : द फिजियालाजिकल एण्ड हेल्थ आस्पेक्ट्स ऑफ एजिंग इन एजिंग इन इण्डिया सम्पादक के.जी. देसाई, टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेस, बम्बई।

(7) एपिल डॉरियन (1956) : द सोशल स्ट्रक्चर ऑफ ग्राण्ड पैरेण्ट हुड, अमेरिकन एन्थ्रापालाजिस न्यू सीरीज 58।

(8) ब्लाऊ हेना (1956) : चेन्जेज इन स्टेप्स एण्ड एज आइडेन्टीफि-केशन अमेरिकन सोशियोलाजीकल रिव्यू न्यू सीरीज-21।

(9) डिन्कल रावर्ट एम. (1944) : एटीट्यूडस ऑफ चिल्डस टूवार्डस सपोर्टिंग एजेड पैरेण्ट्स, अमेरिकन सोशियोलाजिकल रिव्यू न्यू सीरीज–9

(10) पी. सी. सक्सेना एण्ड ए.बी. बोस (1964) : सम करेक्टरिस्टिक्स ऑफ द एजेड पापुलेशन इन रुरल सोसायटी, जनरल ऑफ फैमिली वेलफेयर जून भाग 10

(11) विरेन जेन्म ई. (1964) : सम करेक्टरिस्टिक्स ऑफ द एजेड पापुलेशन इन रुरल सोंसायटी, जनरल ऑफ फैमिली वेलफेयर जून भाग 10

(12) आर. सी. आचले (1976) : द सोशियोलाजी ऑफ रिटायरमेन्ट कैम्ब्रिज मास सेन्कमैन।

(13) विरेन जेन्म ई. (1964) : द सोशियोलाजी ऑफ रिटायरमेन्ट कैम्ब्रिज मास सेन्कमैन।

(14) टिब्बिट्स क्लार्क (1951) : लिविंग थ्रू द ओल्डर इअर्स, यूनीवर्सिटी ऑफ मिशीगन प्रेस, एन अरबर।

(15) क्यूमिग इलेन एण्ड हेनरी विलियम (1961) : ग्रोविंग ओल्ड द प्रोसेस ऑफ डिसइन्गेजमेन्ट, बेसिक बुक्स, न्यूयार्क

(16) टी. वी. हरमैन (1962) : एजिंग एराउण्ड द वर्ल्ड : मेडिकल एण्ड क्लिनिकल आस्पेक्ट्स ऑफ एजिंग कोलम्बिया यूनीवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क।

(17) जान ई. एन्डरसन (1956) : साइक्लोजिकल आस्पेक्ट्स ऑफ एजिंग अमेरिकन सोशियोलाजीकल एसोशिएशन, वाशिंगटन।

(18) कर्ट वूल्फ (1959) : द वायोलाजिकल, सोशियोलाजिकल एण्ड साइक्लोजिकल आस्पेक्ट्स ऑफ एजिंग, स्प्रिगफील्ड, इल चार्ल्स सी. थामस।

(19) रिचार्ड एच. पिलियम्स (1960) : प्रोसेस ऑफ एजिंग : सोशल एण्ड साइकोलाजिकल प्रास्पैक्टिवस, भाग–2 शिकागो अथर्टन प्रेस, न्यूयार्क।

(20) टॉनसेण्ड पीटर (1957) : द फैमिली लाइफ ऑफ ओल्ड प्युपुल, ग्लेन्कोइल फ्री प्रेस, लन्दन।

(21) विलियम डान्ह्यू (1962) : न्यूफ्रण्टियर्स ऑफ एजिंग, यूनीवर्सिटी ऑफ मिशीगन प्रेस एन्न अरबर।

(22) नारंग तसजीत (1968) : एडजेस्टमेण्ट ऑफ द एजेड विद स्पेशल रिपसेन्स टू फैमिली टाइप्स, पंजाब यूनीवर्सिटी, चण्डीगढ।

(23) सिंह कृपाल (1975) : एजिंग इन इण्डिया, द मिनर्व एसोशिएट्स, कलकत्ता।

(24) नायर, पी. के. बी. (1980) : ए स्टडी ऑफ द बर्किंग ऑफ ओल्ड एज पेन्शन स्कीम्स इन केरल, यूनीवर्सिटी ऑफ केरल।

(25) देसाई, के. जी. (1982) : एजिंग इन इण्डिया, टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज, बम्बई।

(26) डिसूजा एलफ्रेड (1982) : द सोशल आर्गेनाइजेशन ऑफ एजिंग एमंग द अरबन पुअर, इण्डिन सोशल इन्स्टीट्यूट, नई दिल्ली।

(27) भाटिया, एच. एस. (1983) : एजिंग एण्ड सोसायटी, आर्याज बुक सेन्टर पब्लिशर्स, उदयपुर।

(28) पूनिया, आर. के. (1987) : एजिंग प्रोब्लम्स : ए स्टडी ऑफ रुरल अरबन डिपरेन्सियल्स इन एजिंग इन इण्डिया सम्पादक शर्मा एण्ड डक अजन्ता पब्लिकेशन, दिल्ली।

(29) मिश्रा सरस्वती (1987) : सोशल एडजेस्टमेन्ट इन ओल्ड एज डी.के. पब्लिकेशन प्रा. लि., नई दिल्ली।

(30) **पाती आर. एन. (1989)** : एजेड इन इण्डिया आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

(31) **चौधरी डी. पी. (1992)** : एजेड इन इण्डिया आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

(32) **साइमस, एल. डब्ल्यू (1960)** : एजिंग इन प्रि इण्डस्ट्रियल सोसायटी इन हैण्डबुक ऑफ सोशल जेरेन्टोलाजी, सम्पादक क्लार्क टिब्वदस यूनीवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

(33) **चौधरी डी. पी.** : एजिंग इन प्रि इण्डस्ट्रियल सोसायटी इन हैण्डबुक ऑफ सोशल जेरेन्टोलाजी, सम्पादक क्लार्क टिब्वदस यूनीवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

(34) **अल्तेकर, ए. एस. (1962)** : द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।

(35) **गुप्ता सेन पदिमनी (1974)** : द स्टोरी ऑफ वीमेन इन इण्डिया इण्डियन बुक कम्पनी, नई दिल्ली।

(36) **शर्मा, आर. के. (1981)** : नेशनलिज्म सोशल रिफार्म एण्ड इण्डियन वीमेन जानकी प्रकाशन, पटना।

(37) **मेहता सुशीला (1982)** : रिपोलूशन एण्ड स्टेटस ऑफ वीमेन इन इण्डिया मेट्रोपोलिटन बुक कम्पनी, नई दिल्ली।

(38) **रेड्डी सी. आर. (1986)** : चेजिंग स्टेट्स ऑफ एजेकेटेड वर्किंग वीमेनः ए केस स्टडी वी. आर. पब्लिशिंग कापरोपेशन, दिल्ली।

(39) **कुमारी कृष्णा (1987)** : स्टेटस ऑफ सिंगला वीमेन इन इण्डिया उप्पल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

(40) **मेहता रमा (1987)** : सोशियोलीगल स्टेट्स ऑफ वीमेन इन इण्डिया मित्तल पब्लिकेशन, दिल्ली।

(41) **सिंह रमा (1988)** : शिक्षित हिन्दू महिलायें एवं धर्म, वी. आर. पब्लिशिंग कारपोरेशन, दिल्ली।

(42) **शुक्ला मीना (1990)** : ग्रामीण महिलाओं के धार्मिक विश्वास एवं सांस्कृतिक क्रिया-कलाप मित्तल पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

(43) **मल्लादी सुब्बम्मा (1992)** : हिन्दूइज्म एण्ड वीमेन अजन्ता पब्लिकेशन, दिल्ली।

(44) **सिन्हा मैत्रा अंजना (1993)**: वीमेन इन ए चेजिंग सोसायटी ए. पी. एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, नई दिल्ली।

(45) **झा वी. एस. (1994)** : स्टेट्स ऑफ वीमेन इन चेजिंग अरबन हिन्दू फैमिली अविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर।

अध्याय-२

शोध अभिकल्प एवं पद्धतिशास्त्र

प्रस्तावना :

मानव की क्रियाओं के क्षेत्र में सामाजिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य उसके सामाजिक जीवन के विषय में ज्ञान प्राप्त करना है। किसी वर्ग की समस्त प्रक्रियाओं, परिवर्तनों एवं गति को समझने के लिए उसका विश्लेषण एवं सामान्यीकरण करने हेतु प्रत्येक अनुसंधानकर्ता को यह जानना अति आवश्यक है कि वह सामाजिक घटनाओं, समूहों एवं मानवीय व्यवहार एवं उसकी प्रकृति–प्रवृत्ति तथा उनमें होने वाले परिवर्तनों तथा गतिविधियों को समझें। इन सभी को समझने का अभिप्राय यही है कि मानव–व्यवहार एवं सामाजिक व्यवहार के विषय में कुछ सामान्य सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सकें। एक सामाजिक अनुसंधानकर्ता इसी उद्देश्य से सम्बन्धित रहता है। सामाजिक अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग से सामाजिक जीवन में ज्ञान प्राप्त करता है एवं तत्पश्चात मानव व्यवहार के बारे में प्राप्त तथ्यों के आधार पर कुछ सामान्य सिद्धान्तों का निर्माण करता है।

वस्तुतः सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति वैज्ञानिक है पूर्ण विवेचना से जैसा कि स्पष्ट हो चुका है कि सामाजिक अनुसंधान सामाजिक घटनाओं से अन्तः सम्बद्ध प्रक्रियाओं की व्यवस्थित खोज तथा विश्लेषण की एक वैज्ञानिक पद्धति है अन्तः इस अर्थ में सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति के सम्बन्ध में भी कही जा सकता है। सामाजिक जीवन को समझना इसका प्रमुख कार्य है। और ऐसा वह ज्ञान प्राप्ति के उद्देश्य से करता है। ज्ञान की प्राप्ति, ज्ञान की वृद्धि तथा ज्ञान का पुनः परीक्षण करना ही अपना लक्ष्य मानकर वह सदा अनुसंधान में क्रियाशील रहता है। यद्यपि व्यावहारिक लक्ष्यों की पूर्ति की दिशा में इसका कुछ योगदान रहता है पर वह आकस्मिक होता है न कि उद्देश्यपूर्ण।

एक वैज्ञानिक पद्धति होने के नाते सामाजिक अनुसंधान निरीक्षण परीक्षण,

तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण एवं निष्कर्ष की व्यवस्थित विधि से गुजरता है। तात्पर्य यह है कि वैज्ञानिक पद्धति के अनुसार सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करना सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति की एक और उल्लेखनीय विशेषता है। इससे भी इसकी वैज्ञानिक प्रकृति का स्पष्टीकरण होता है **(श्री एन.पी. श्रीवास्तव)**[1]

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति यह भी है कि यह मात्र नवीन तथ्यों या घटनाओं के विषय में खोज करके ही चुप नहीं बैठता अपितु पुराने तथ्यों से सम्बन्ध अनुसंधान में भी रुचि रखता है। यह इसकी मान्यता है कि केवल नवीन तथ्यों के विषय में अध्ययन करना अथवा विद्यमान पुराने निष्कर्षो को ही सच मान लेना ही काफी नहीं है। अपितु पुराने निष्कर्षो की पुनः परीक्षा पर सामाजिक शोध दो कारणों से बल देता है प्रथम तो यह कि शोध की प्रविधियों में अनेक नये सुधार होते जा रहे हैं इसलिए यह अति आवश्यक है कि नवीन प्रविधियों की सहायता से पुराने सिद्धान्त या सामाजिक घटनाओं की फिर से जाँच की जाए जिससे यह ज्ञात हो सकें कि वे वर्तमान में सही है अथवा नहीं। दूसरी बात यह है कि सामाजिक जीवन व उससे सम्बद्ध घटनाएँ भी परिवर्तनशील है और सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन भी तीव्रता से होते जा रहे है। पुराने तथ्यों, घटनाओं और सिद्धान्तों में सामाजिक शोध की यह रूचि उसकी प्रकृति के एक महत्वपूर्ण पक्ष को उदघाटित करती है।

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति के सम्बन्ध में अन्तिम बात यह है कि यह सामाजिक जीवन या घटनाओं पर अधिकाधिक नियन्त्रण पाने का प्रयत्न करता है। यहाँ नियन्त्रण का अर्थ यह कदापि नहीं है। कि समाज के सदस्यों को भयभीत करके अपने वश में कर लिया जाए। यहाँ नियन्त्रण से तात्पर्य यह है कि अपने शोधाकार्य में प्रयोगात्मक पद्धति का उपयोग करने के लिए कुछ सामाजिक घटनाओं को नियन्त्रित करके उसी प्रकार की अन्य सामाजिक घटनाओं पर विभिन्न कारकों के प्रभावों को दृष्टिगत करना है। इस प्रकार का नियन्त्रण विषय के सम्बन्ध में शोधकर्ता के उत्तरोतर ज्ञान पर निर्भर होता है। सामाजिक जीवन व घटनाओं के सम्बन्ध में अधिकाधिक ज्ञान व तद् द्वारा उन पर अधिक नियन्त्रण पाना सामाजिक शोध का प्राथमिक लक्ष्य है।

एक अनुसंधानकर्ता को निम्नलिखित पक्षों का भी संज्ञान होना आवश्यक है।

प्रयुक्त शोध-अभिकल्प का स्पष्टीकरण :

किसी भी शोधकार्य में कार्य करने की योजना या अनुसंधान-प्रक्रिया की रूपरेखा को ही शोध अभिकल्प कहा जाता है। इसका स्वरूप समस्या एवं प्राकल्पना के निर्धारण के अनुसार ही होता है। यह पूर्णतः स्पष्ट है कि योजनानुसार शोधकार्य करने से धन, समय, श्रम इत्यादि का अनावश्यक प्रयोग बच जाता है। शोध अभिकल्प तथ्यों के संकलन एवं विश्लेषण से सम्बन्धित दशाओं को इस प्रकार आयोजित करता है कि वे कार्य विधि से बचत करती है। जिससे शोध के समस्त प्रयोजन तर्कसंगत हो सकें।

सेनफोर्ड लेवोविध एवं हैगडार्न की कृति 'इन्ट्रोडक्शन टू द सोशल रिसर्च' से स्पष्ट होता है। कि "एक अनुसंधान प्ररचना उस तार्किक ढंग को प्रस्तुत करती है। जिसमें व्यक्तियों एवं अन्य इकाइयों की तुलना एवं विश्लेषण किया जाता है। यह आकंडों के लिए विवेचना का आधार बनता है। प्ररचना का मुख्य उद्देश्य ऐसी तुलना का आश्वासन दिलाना है जो विकल्पीय विवेचनाओं से प्रभावित न हो।

अनुसंधान प्ररचना का वर्गीकरण एवं प्रचार :

विभिन्न अनुसंधान प्ररचनाओं को अनेक आधारों पर वर्गीकृत किया गया है। सामान्यतः अनुसंधान का वर्गीकरण दो आधारों पर किया जा सकता है।

(i) अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर

(ii) अध्ययन के उपागम् के आधार पर

(i) अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर :

(क) अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना

(ख) विवरणात्मक या निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना

(ग) प्रयोगत्मक अनुसंधान प्ररचना

(घ) मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्ररचना

(ङ) विश्लेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना

(ii) अध्ययन के उपागम के आधार पर :

अध्ययन के उपागम् के आधार पर भी अनुसंधान प्ररचना को निम्नानुसार विभक्त किया जा सकता है।

(क) सर्वेक्षणात्मक अनुसंधान प्रचना

(ख) क्षेत्र अध्ययन सम्बन्ध अनुसंधान प्रचना

(ग) प्रयोग सम्बन्धी अनुसंधान प्रचना

(घ) ऐतिहासिक अनुसंधान प्रचना

(ङ) वैयक्तिक अध्ययन सम्बन्धी अनुसंधान प्रचना।

शोध अभिकल्प सम्बन्धी उपरोक्त विवेचना के अनुसार ही प्रस्तुत अध्ययन हेतु विश्लेषणात्मक शोध प्रचना का चयन मेरे द्वारा किया गया है। क्योंकि अध्ययन समस्या (विषय) के सम्बन्ध में वास्तविक तथ्यों (प्राथमिक आँकड़ों) के आधार पर ही सारणीयन करते हुए वर्णनात्मक। विश्लेषणात्मक अनुसंधान प्रचना का प्रयोग ही उत्तम माना जाता है।

तथ्यों के संचयन की विधियाँ :

शोध कार्य से सम्बन्धित तथ्यों का संचयन करने के लिए निम्न विधियों को प्रयोग में लाया गया है।

(i) साक्षात्कार अनुसूची :

अनुसूची तथ्य संकलन की एक प्रमुख प्रविधि है संक्षेप में अनुसूची वह प्रपत्र है जिसमें कि विषय से सम्बन्धित प्रश्न लिखे रहते है। तथा शोधकर्ता एवं सम्बन्धित व्यक्तियों से उन प्रश्नों का उत्तर पूछ कर लिखता है। अनुसूची का निर्माण अनुसंधानकर्ता अध्ययन-विषय की प्रकृति के अनुरूप ही करता है। इस प्रकार यह विधि तथ्य एकत्रित करने में उपयोगी है।

गुडे एवं हॉट[2] के अनुसार, " अनुसूची साधारणतः उन प्रश्नों के एक समूह का नाम है जो एक साक्षात्कार कर्ता के द्वारा दूसरे व्यक्ति से आमने-सामने की स्थिति में पूछे एवं भरे जाते है।

थामस[3] का मानना है कि अनुसूची प्रश्नों की एक सूची से अधिक कुछ नहीं है। जिसका उपकल्पनाओं के परीक्षण के लिए उत्तर देना आवश्यक होता है।

(ii) साक्षात्कार :

साक्षात्कार सामाजिक अनुसंधान में तथ्य संकलन हेतु प्रयोग में लायी जाने वाली सबसे अधिक प्रचलित प्रविधि है। इस प्रविधि में आपस में बातचीत एवं आमने-सामने के सम्बन्ध के आधार पर मनुष्य की भावनाओं, मनोवृत्तियों एवं

मूल्यों आदि के विषय में अधिक से अधिक जाना जा सकता है। इस प्रविधि में शोधकर्ता सूचनादाताओं के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आता है। तब शोधकर्ता घटना या समस्या के विषय में उत्तरदाता से अनौपचारिक वार्ता करता है। तथा सूचनादाताओं की प्रतिक्रियाओं, विचारों को सुनकर तथ्य एकत्रित करता है। साक्षात्कार प्रविधि का अर्थ और भी स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्न परिभाषाओं का अध्ययन करना पड़ेगा **(आर. एन. त्रिवेदी)**[4]।

डा. पी. वी. भंग के शब्दों में, " साक्षात्कार को एक व्यवस्थित पद्धति के रूप में माना जा सकता है जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के आन्तरिक जीवन में अधिक या कम काल्पनिक रूप से प्रवेश करता है। जो कि उसके लिए तुलनात्मक रूप से अपरिचित है।"

गुडे एवं हॉट के अनुसार[5], " साक्षात्कार मूल रूप से एक सामाजिक अन्तः क्रिया की एक प्रक्रिया है।"

(iii) दैव निदर्शन :

दैव निदर्शन पद्धति से तात्पर्य उस निदर्शन से है जो कि मानव की अपनी इच्छाओं से नहीं अपितु दैवयोग या संयोग से चुना जाए इस निदर्शन पद्धति में समग्र इकाइयों को चुनने के लिए समान अवसर प्रदान किये जाते है। जिससे कि शोधकर्ता द्वारा इकाइयों के पक्षपात पूर्ण चुनाव के दोष को दूर किया जा सकें। दैव निदर्शन को परिभाषित करते हुए गुडे एवं हॉट का मानना है कि दैव निदर्शन में समग्र इकाइयों को इस प्रकार क्रमवद्ध किया जाता है कि चयन प्रक्रिया उस समय तक कि प्रत्येक इकाई को चुनाव की समान सम्भावना प्रदान करती है

(iv) सविचार निदर्शन :

जब शोधकर्ता जान–बूझकर किसी विशिष्ट उद्देश्य से समग्र में से अध्ययन हेतु कुछ इकाइयों का चुनाव करता है। तो उसे उद्देश्यपूर्ण अथवा सविचार निदर्शन कहते है। इस प्रकार के चुनाव में चयनकर्ता की इच्छा, उसका निर्णय तथा उद्देश्य ही मुख्य होता है। इस प्रविधि का मुख्य आधार यह है। कि शोधकर्ता पहले से ही समग्र की इकाइयों के विषय में परिचित होता है। एडोल्फ जान्स के शब्दों में "सविचार निदर्शन से तात्पर्य इकाइयों के समूहों को इस प्रकार

चुनने से ही कि चुने हुए वर्ग मिलकर जहाँ तक हो सकें वही औसत अथवा अनुपात प्रदान करें जो समग्र में है।''

(v) प्राथमिक समंक / स्त्रोत :

प्राथमिक समंक वे भौतिक आँकड़ा तथा सूचनाएँ होते है जिन्हें एक शोधकर्ता द्वारा अध्ययन स्थल पर जाकर जीवित व्यक्तियों से किसी भी मान्य तकनीकि द्वारा (प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार आदि) एकत्र किया जाता है। शोधकर्ता प्रत्यक्ष निरीक्षण द्वारा जो कुछ भी देखता सुनता है। और सूचनादाता जो कुछ बताता है। या लिखित रूप में (प्रश्नों के उत्तर देना) जो कुछ लिखकर देता है। वही प्राथमिक समंक एवं प्रयुक्त तकनीकि को प्राथमिक स्त्रोत के रूप में सम्बोधित किया जाता है।

(vi) द्वैतीयक समंक / स्त्रोत :

द्वैतीयक समंक वे सूचनाएँ और आँकड़े है जो कि शोधकर्ता को प्रकाशित व अप्रकाशित प्रलेखों, रिपोर्ट, सांखिकी, पाण्डुलिपि, पत्र, डायरी आदि से प्राप्त होते है। द्वैतीयक तथ्यों, सूचनाएँ या आँकड़े, स्वयं शोधकर्ता अपने कार्य में उपयोग करने के लिए एकत्रित कर लेता है। द्वैतीयक तथ्यों के भी दरे प्रमुख स्त्रोत होते है। एक तो व्यक्तिगत प्रलेख जैसे रिकार्ड, पुस्तकें, जनगणना, रिपोर्ट, विशिष्ट कमेटियों की वार्षिक, अर्द्ध वार्षिक रिपोर्ट समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं में प्रकाशित सूचनाएँ आदि। **श्री लुण्डवर्ग**[5] के अनुसार शिलालेख, स्तूप, विभिन्न खुदाइयों से प्राप्त अस्थिपिंजर, भौतिक वयस्क आदि ऐतिहासिक स्त्रोत से प्राप्त तथ्य या सूचनाएँ भी द्वैतीयक तथ्यों के अन्तर्गत आते है।

अध्ययन इकाइयों के प्रतिचयन की विधियाँ :

प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्राथमिक तथ्य एकत्र करने के लिए प्रतिचयित अध्ययन इकाइयों की तहसील वार तालिका बनायी गयी तथा यह निश्चय किया गया कि प्रतिदिन लगभग 6 साठोत्तर वृद्धों से सम्पर्क किया जायेगा। सम्पर्क करके पूर्व निर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अपेक्षित सूचनाएँ एकत्र की गयी। इन समस्त साठोत्तर सूचनादाताओं से अनौपचारिक बातचीत भी की गयी। विषय से हटकर उनके जीवन से सम्बद्ध कतिपय महत्वपूर्ण (नितान्त व्यक्तिगत) सन्दर्भो को भी जानने-समझने का प्रयास किया गया। क्षेत्र सर्वेक्षण (साक्षात्कार) का यह कार्य

2 अक्टूबर 2006 को प्रारम्भ किया गया तथा 24 जनवरी 2007 को अनेक कठिनाइयों का सामना करने के पश्चात् सम्पन्न हो पाया क्योंकि कई बार सम्बन्धितों द्वारा इसे व्यर्थ का कार्य समझ कर उपहासात्मक व्यवहार किया गया। कतिपय परिवार के युवाओं द्वारा ऐसा कड़ा नियन्त्रण वृद्ध व्यक्ति पर रखना चाहा कि वह कुछ ऐसी बात न बता दे जिससे उनकी पारिवारिक प्रतिष्ठा धूमिल हो या उनके द्वारा किये जाने वाले अमानवीय व्यवहार प्रकाश में आ जाए। क्षेत्र सर्वेक्षण का कार्य प्रायः शीतकाल में हुआ अतः घर के बाहर खुले स्थान में (धूप में) ही साक्षात्कार करना पत्र जो अन्य नागरिकों (विशेषकर युवा) के लिए तमाशे का काम करता रहा। इस प्रकार अनेक व्यावहारिक कठिनाइओं के पश्चात् प्राप्त तथ्यों का सारणीयन कर विज्ञान सम्मत तरीके से विश्लेषण किया गया तथा निष्कर्ष प्राप्त कर सामान्यीकरण किया गया।

अध्ययन क्षेत्र का संक्षिप्त परिचय :

झाँसी जनपद का सृजन 1956 को हुआ तथा झाँसी मण्डल का यह प्रमुख नगर है। यह जनपद 25^0, 10', 20'' से 26^0,00' उत्तरी अंक्षाशों तथा 78^0, 12', 30'' से 79^0, 15' 25'' पूर्वी देशान्तर के मध्य विस्तृत है।

इस जनपद की उत्तरी सीमा पर जालौन जनपद–दक्षिणी सीमा पर ललितपुर जनपद, पश्चिमी सीमा पर मध्यप्रदेश राज्य के दतिया एवं शिवपुरी जनपद, तथा पूर्वी सीमा पर हमीरपुर एवं महोबा जनपद की सीमाएँ है।

क्षेत्रफल एवं जनसंख्या :

जनपद झाँसी का क्षेत्रफल 5024 वर्ग किमी. है तथा वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार जनपद की कुल जनसंख्या 1746715 व्यक्ति है जिसमें 934118 पुरूष तथा 812597 स्त्रियाँ है। जनपद का जनसंख्या घनत्व 348 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है तथा साक्षरता 66.06 प्रतिशत है।

तहसील एवं विकासखण्ड :

जनपद में 5 तहसीलें, झाँसी, मौंठ, मऊरानीपुर, गरौठा तथा महरोली है तथा विकास खण्डों की संख्या 8 चिरगांव, गुरूसराय, बामौर, बंगरा, बबीना, बड़ागांव, मौंठ, मऊरानीपुर स्थिति है।

जनपद का मुख्य झाँसी नगर है तथा झाँसी तहसील का मुख्यालय भी झाँसी में है। मौठ तहसील का मुख्यालय मौठ में मऊरानीपुर तहसील का मुख्यालय मऊरानीपुर, महरोली तहसील का मुख्यालय महरोली में है। इसी प्रकार चिरगांव विकास खण्ड का मुख्यालय गुरूसराय, बामौर विकास खण्ड का मुख्यालय बामोर, बंगरा विकास खण्ड का मुख्यालय बंगरा, बवीना विकास खण्ड का मुख्यालय बबीना, बड़ागांव विकास खण्ड का मुख्यालय बड़ागांव मौठ विकास खण्ड का मुख्यालय मौठ तथा मऊरानीपुर विकास खण्ड का मुख्यालय मऊरानीपुर में स्थिति है। जनपद में कुल आबाद 837 गांव है। तथा नगर निगमों की संख्या 06 है।

अध्ययन इकाइयों का प्रतिचयन :

अध्ययन इकाइयों के प्रतिचयन में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा जिसका मुख्य कारण नौकर शाही का उदासीन दृष्टिकोण रहा है। अनेक बार नगरपालिका, नगर निगम कार्यालय के अधिकारियों से सम्पर्क करना पड़ा किन्तु सही–सही आँकड़े प्राप्त नहीं हो सकें। अतः जनगणना रिपोर्ट, संसदीय निर्वाचन क्षेत्र झांसी के लिए मतदाता सूची, नगर निगम के सांख्यिकीय विभाग आदि की सहायता से साठोत्तर वृद्धों का प्रतिचयन किया गया।

(i) सर्वप्रथम तहसील क्षेत्रों में विभिन्न जातीय बाहुल्य क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त की गयी।

(ii) इन क्षेत्रों में कुल स्त्री–पुरुष साठोत्तर वृद्धों की संख्या नोट की गयी।

(iii) सांख्यिकीय विभाग के माध्यम से हिन्दू परिवारों की संख्या ज्ञात की गई।

(iv) इस प्रकार समस्त हिन्दू परिवारों में साठोत्तर वृद्धों की संख्या द्वारा 300 वृद्धों का प्रतिचयन स्त्री–पुरुष की संख्यानुपात में किया गया।

(v) इन प्रतिचयित वृद्धों के परिवारों (मुखिया के आधार पर) की जानकारी प्राप्त कर उनसे सम्पर्क स्थापित करने की योजना बनायी गयी।

तालिका संख्या-२.१

जनसंख्यात्मक विवरण

क्र. सं.	तहसील का नाम	कुल जनसंख्या	कुल वृद्ध जनसंख्या
1	झाँसी	790187	39509
2	मौंठ	269887	13495
3	मऊरानीपुर	332584	16630
4	गरौठा	201071	10053
5	महरोली	151202	7560
	योग	**17,44,931**	

स्रोतः भारत की जनगणना–राज्य प्राथमिक जनगणना सार–2001 पृष्ठ 619–20 नगर निगम कार्यालयों से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

इस प्रकार उद्देश्यपूर्ण एवं दैव–निदर्शन पद्धति का सहारा लेकर 300 साठोत्तर वृद्धों का प्रतिचयन किया गया इनकी जातीय संरचना की स्थिति निम्नलिखित है।

तालिका संख्या-२.२

प्रतिचयित वृद्ध सूचनादाताओं की जातीय स्थिति का विवरण

क्र. सं.	जातीय प्रस्थिति	कुल संख्या	प्रतिशत
1	ब्राह्मण	145	48
2	क्षत्रिय	95	32
3	वैश्य	35	12
4	शूद्र	25	08
	योग	**300**	**300**

प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों को प्रथम स्थान पर (संख्या के आधार पर) ब्राह्मण दूसरे स्थान पर क्षत्रिय तीसरे स्थान पर वैश्य तथा अल्प संख्या में शूद्र जाति को सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त सम्प्रत्यय एवं चर :

(i) <u>जाति</u> :

वंश परम्परा पर आधारित ऐसा सामाजिक स्तर जो अपने सदस्यों की सामाजिक प्रतिष्ठा, व्यवसाय, सामाजिक सम्बन्धों, इत्यादि का निर्धारक बन जाता है जाति के सन्दर्भ में व्यक्ति की स्थिति अपरिवर्तनीय होती है। जाति–प्रथा पूरे समाज को ऊँची–नीची श्रेणियों में बांट देती है।

(ii) <u>परिवार</u> :

सामाजिक जीवन की मूलभूत इकाई जिसके सदस्य विवाह सम्बन्ध में बँधने के कारण, एक ही माता–पिता की सन्तान होने के कारण अथवा विधिवत गोद लिए जाने के कारण एक–दूसरे के साथ आपस में जुड़े होते हैं। परिवार के सदस्य परस्पर स्नेह, सहानुभूति, सेवा एवं त्याग की भावना से प्रेरित रहते हैं एवं सुख–दुःख, मान–अपमान आदि स्थिति में सभी भागीदार बनते हैं। ये सदस्य आपस में नैतिक मर्यादाओं से बँधे होते हैं जो अन्य सामाजिक सम्बन्धों एवं मर्यादाओं के लिए आदर्श प्रस्तुत करती है। परिवार ही संस्कृति के सम्प्रेषण का सर्वप्रथम प्रभावशाली सोपान है।

(iii) <u>एकांकी परिवार</u> :

एकांकी परिवार से तात्पर्य वह परिवार जिसमें केवल विवाहित स्त्री पुरूष अर्थात पति–पत्नी एवं उनकी सन्तान सम्मिलित होती है। इनमें सन्तान तभी तक सम्मिलित रहती है। जब तक वह अविवाहित हो। इन्हें दाम्पत्य मूलक परिवार भी कहा जाता है।

(iv) <u>सयुक्त परिवार</u> :

इसमें पितृ परम्परा के तीन या तीन से अधिक पीढ़ियों के सदस्य यथा पिता, पुत्र, पौत्र इत्यादि अपनी–अपनी पत्नी और सन्तान के साथ एक ही छत के नीचे निवास करते है तथा एक ही रसोई का बना भोजन; एक ही साथ धार्मिक अनुष्ठानों में सहभागिता करते है। यह सभी सदस्य अपनी आय एक ही स्थान पर जमा करके उसी एक स्त्रोत से अपना–अपना जीवन निर्वाह करते है। इस परिवार में एक ही मुखिया होता है।

(v) समायोजन :

यह स्थिति जिसमें विभिन्न व्यक्ति या समूह निरन्तर एक विशेष पर्यावरण में रहने के कारण या एक दूसरे के सम्पर्क में आने के कारण अपनी-अपनी अभिरूचियों, हितों और लक्ष्यों के मार्ग में आने वाली बाधाओं को सहन करने के अभ्यस्त हो जाते है। जिससे वे सभी सामाजिक प्रणाली की आशाओं के अनुरूप व्यवहार करते है तथा उनमें अपना समुचित स्थान बना सकें। इसका विपरीत रूप कुसुमायोजन होता है।

(vi) प्राककल्पना :

ऐसा विचार जिसमें दो या दो से अधिक परिवर्त्यों के मध्य अनुभवमूलक सम्बन्धों की कल्पना की गयी हो। साधारणतः यह विचार किसी सिद्धान्त से प्राप्त किया जाता है। परन्तु इसमें कोई नयी बात कही जाती है। जिसकी जाँच परख की जानी हो। अतः परिकल्पना से अनुसंधान का विषय निर्दिष्ट किया जाता है। परन्तु कोई प्राककल्पना सही है या गलत इसका निर्णय वास्तविक अनुसंधान के आधार पर ही किया जा सकता है।

(vii) अधिसत्ता :

विभिन्न सामाजिक सम्बन्धों में शक्ति का संस्थापित एवं विधि सम्मत प्रयोग ही अधिसत्ता है। व्यक्ति सत्ताधारी के आदेशों का पालन इसलिए करते है कि वे उसकी सामाजिक स्थिति को उचित और युक्ति संगत समझते है। साधारणतः सत्ता व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के साथ जुड़ी रहती है। परन्तु विशेष परिस्थितयों में सत्ताधारी का विलक्षण व्यक्तित्व भी उसकी शक्ति को बहुत बढ़ा देता है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री मैक्स बेबर ने अधिसत्ता के तीन रूप प्रतिपादित किये है।

(क) परम्परागत अधिसत्ता

(ख) करिश्माती अधिसत्ता

(ग) कानूनी-तर्क सम्मत अधिसत्ता **(गावा ओ. पी.)**[6]

सन्दर्भ-ग्रन्थ

(1) श्रीवास्तव जी. एन. पी. (1994) : एडवांस्ड रिसर्च मैथोडोलॉजी, राधा पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली।

(2) यंग पी. वी. (1960) : साइंटिफिक सोशल सर्वेज एण्ड रिसर्च एशिया पब्लिशिंग हाऊस, बम्बई।

(3) थामस, कार्सन एम. (1941) : एलिमेन्ट्री सोशल स्टेटिक्स, न्यूयार्क

(4) त्रिवेदी, आर. एन. (1992) : रिसर्च मैथोडोलॉजी, कालेज बुक डिपो, जयपुर।

(5) गुडे डब्ल्यू, जी. एण्ड हॉट पी. के. (1952) : मैथड्स इन सोशल रिसर्च एन.सी. ग्रा हिल बुक क., न्यूयार्क।

(6) गावा, ओ. पी. (1984) : समाजविज्ञान कोश, बी. आर. पब्लिशिंग कार्पोरेशन, दिल्ली।

अध्याय-३

अध्ययन इकाइयों की परिचयात्मक पृष्ठभूमि:

किसी भी मनुष्य के विचार तथा जीवन के प्रति उसके दृष्टिकोण की सही जानकारी में उससे सम्बन्धित परिचयात्मक पृष्ठभूमि महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। किसी भी मनुष्य का परिस्थितियों के साथ धनात्मक सह–सम्बन्ध होता है। अंतः अध्ययन को उपयोगी बनाने के लिए प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों की परिचयात्मक पृष्ठभूमि की विवेचना करना अत्यन्त प्रासंगिक प्रतीत होता है। इसी उद्देश्य की प्रतिपूर्ति के लिए प्रस्तुत अध्याय में साठोत्तर वृद्धों की परिचयात्मक पृष्ठभूमि, पारिवारिक संरचना, आयु संरचना, जातीय स्थिति, व्यवसायिक स्थिति, आवासीय स्थिति, शैक्षिक उपलब्धियाँ, सामाजिक स्थिति, राजनैतिक स्थिति, धार्मिक स्थिति एवं उनकी आर्थिक स्थिति का विश्लेषण किया गया है। जिसका विवरण निम्नानुसार है।

पारिवारिक संरचना :

जनसंख्या के आधार पर परिवार को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। इस सन्दर्भ में समस्त प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से जो तथ्य प्राप्त हुए हैं उन्हें तालिका संख्या 3.1 में प्रस्तुत करके विश्लेषित किया गया है–

तालिका संख्या-३.१

प्रतिचयित वृद्धों के परिवारों की प्रकृति

क्र.सं.	परिवार की प्रकृति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	संयुक्त परिवार	90	30
2	एकाकी परिवार	210	70
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 70 प्रतिशत हिन्दू साठोत्तर वृद्ध एकाकी परिवारों से है जबकि शेष 30 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह स्पष्ट करते हैं कि वह संयुक्त परिवार में निवास करते हैं।

यह जानने के लिए इन वृद्धों के परिवारों की प्रकृति क्या है उनसे यह प्रश्न किया गया कि उनके पारिवारिक सदस्य कितनी पीढ़ी के हैं। इस सन्दर्भ में प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 3.2 में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या-३.२

साठोत्तर वृद्धों के परिवारों में रहने वाले सदस्यों का विवरण

क्र.सं.	परिवारो की प्रकृति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	एक पीढ़ी के व्यक्ति	85	28
2	दो पीढ़ी के व्यक्ति	125	42
3	तीन पीढ़ी के व्यक्ति	65	22
4	तीन पीढ़ी से अधिक	25	8
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 28 प्रतिशत परिवारों में एक पीढ़ी के व्यक्ति (पति एवं पत्नी) निवास करते हैं जबकि 42 प्रतिशत परिवारों में दो पीढ़ी के व्यक्ति रहते हैं अतः कुल 70 (28+42) प्रतिशत परिवार एकाकी प्रकृति के हैं। जबकि 22 प्रतिशत परिवारों में तीन पीढ़ी के व्यक्ति निवास करते हैं एवं शेष 8 प्रतिशत परिवारों में ही तीन पीढ़ी से अधिक के सदस्य निवास करते हैं इस प्रकार 30 (20+8) प्रतिशत परिवार संयुक्त प्रकृति के हैं।

अतः उपरोक्तानुसार यह निष्कर्ष निकलता है कि अधिकांश परिवारों में एक या दो पीढ़ी के ही व्यक्ति निवास करते हैं।

आयु संरचना :

वर्तमान में यह चर्चा का विषय है कि किस आयु के व्यक्ति को वृद्ध कहा जाना चाहिए सामान्यतः व्यक्ति जब 55 वर्ष की अवस्था का हो जाता है तब वह अपने को वृद्ध मानने लगता है। इस सन्दर्भ में प्रतिचयित वृद्धों से जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें तालिका संख्या 3.3 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या-३.३
वृद्धों की आयु का विवरण

क्र.सं.	आयु समूह (वर्ष में)	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	55-60 वर्ष	50	17
2	60-65 वर्ष	90	30
3	65-70 वर्ष	112	37
4	70-75 वर्ष	40	14
5	75 वर्ष से अधिक	08	02
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 60 से 65 वर्ष की अवस्था के 30 प्रतिशत वृद्ध हैं; जबकि 37 प्रतिशत वृद्ध 65 से 70 वर्ष की अवस्था के हैं; 14 प्रतिशत वृद्ध 70 से 75 वर्ष की अवस्था के हैं; तथा 02 प्रतिशत व्यक्ति ही 75 वर्ष से अधिक अवस्था में चल रहे हैं।

अतः निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि लगभग 67 प्रतिशत वृद्ध 60 से 70 वर्ष की आयु के हैं जो वृद्धावस्था की मानक आयु मानी जाती है।

जातीय स्थिति :

भारत जाति प्रथा का आगार है और यहाँ शायद ही कोई सामाजिक समूह ऐसा हो जो इसके प्रभाव से अपने को मुक्त रख सका हो। अध्ययन के दौरान यह जानने का प्रयास किया गया कि प्रतिचयित वृद्धों की जातीय स्थिति क्या है? इस सन्दर्भ में जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 3.4 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या-३.४
साठोत्तर वृद्धों के परिवारों की जातीय स्थिति का विवरण

क्र.सं.	जातीय स्थिति	कुल संख्या	प्रतिशत
1	ब्राह्मण	145	48
2	क्षत्रिय	95	32
3	वैश्य	35	12
4	शूद्र	25	08
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 48 प्रतिशत वृद्ध ब्राह्मण जाति के; 32 प्रतिशत वृद्ध क्षत्रिय जाति के हैं; 12 प्रतिशत वृद्ध वैश्य जाति के हैं तथा 8 प्रतिशत वृद्ध शूद्र जाति के हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्रतिचयित वृद्धों में सर्वाधिक संख्या ब्राह्मण जाति के वृद्धों की है जबकि न्यूनतम संख्या शूद्र जाति के वृद्धों की है।

व्यावसायिक स्थिति :

जीवनयापन के लिए प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ कार्य अवश्य करता है शोध कार्य के समय जानने का प्रयास किया गया कि प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के परिवारों का मुख्य व्यवसाय क्या है? इस सन्दर्भ में जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 3.5 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या-३.५
साठोत्तर वृद्धों के परिवारों की व्यवसायिक स्थिति का विवरण

क्र.सं.	व्यवसाय का नाम	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	व्यक्तिगत व्यापार	66	22
2	नौकरी	115	38
3	श्रमिक	30	10
4	निजी काम	50	17
5	सफाई करना	07	02
6	अन्य	32	11
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि 22 प्रतिशत वृद्धों के परिवारों का मुख्य व्यवसाय निजी व्यवसाय है; 38 प्रतिशत वृद्धों के परिवारों की जीविका का आधार शासकीय सेवा (सर्विस) है; 10 प्रतिशत वृद्धों के परिवारजन मजदूरी करते हैं जबकि 17 प्रतिशत परिवारों के सदस्य छोटे स्तर पर निजी कार्य करते हैं यथा- फल/सब्जी बेचना, ऑटो/रिक्शा चलाना, कारीगरी करना आदि 2 प्रतिशत वृद्धों के परिवार के सदस्य सफाई का कार्य करते हैं जबकि 11 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जिनके वृद्ध ऐसे हैं जिन्हें गुजारे के लिए पेंशन मिलती है अथवा

उनके पास आय का कोई स्थायी साधन नहीं है (जैसे– मकान/दुकान का किराया आदि) है जिससे प्राप्त धन के द्वारा वह अपना जीवनयापन करते हैं। आज के इस भौतिकवादी युग में प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ धन अर्जित करना चाहता है। इसी प्रकार विभिन्न जातियों की कुछ वृद्धाएँ भी दस्तकारी करना, बीज छीलना, घरों में काम करना आदि कार्यों को करके अपनी जीविका चलाती रहती हैं।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि प्रायः वृद्धों के परिवार का मुख्य व्यवसाय निजी व्यापार नौकरी एवं निजी काम ही है।

आवासीय स्थिति :

नगरीय क्षेत्रों में आवास की समस्या निरन्तर बढ़ती जा रही है जिसका सीधा प्रभाव वृद्धों के जीवन पर पड़ता है। जो आवासीय सुविधा उपलब्ध भी होती है वह भी आवश्यक सुविधाओं के अभाव में समस्याग्रस्त हो जाती है। इसी उद्देश्य को दृष्टिगत करके प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों की आवासीय स्थिति सम्बन्धी तथ्य एकत्र किये गये तथा विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 3.6 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या-३.६

साठोत्तर वृद्धों की आवासीय स्थिति का विवरण

क्र.सं.	आवासीय स्थिति नाम	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	निजी आवास	145	48
2	सरकारी आवास	20	07
3	किराये का आवास	125	42
4	अन्य	10	03
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 48 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपने निजी आवास में निवास करते हैं तथा 42 प्रतिशत वृद्ध किराये के मकान में रहते हैं; 7 प्रतिशत वृद्ध सरकारी आवास में निवास करते हैं जबकि 3 प्रतिशत वृद्ध अन्य प्रकृति के आवासों– झुग्गी झोंपड़ी, नाते–रिश्तेदार या मंगनी (खेरात) के मकान में नितान्त अस्थायी रूप से निवास करते हैं। यहाँ यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि निजी एवं किराये के मकान में रहने वाले अधिकांश

55 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों के पास दो या तीन कमरों के आवास हैं तथा 17 प्रतिशत वृद्धों के पास तीन कमरों से अधिक के आवास हैं। जबकि 25 प्रतिश वृद्धों के पास एक से दो कमरों के आवास हैं जिनमें मूल सुविधाओं का अभाव सा प्रतीत होता है शेष 3 प्रतिशत आवास अन्य प्रकृति की श्रेणी में आते हैं जिनमें निवास करने वाले वृद्धों को नगरपालिका के नल के पानी का एवं शौच इत्यादि हेतु खुले आसमान का सहारा लेते हैं।

शैक्षिक स्थिति :

मनुष्य के जीवन में शिक्षा का विशेष महत्व होता है बिना शिक्षा के व्यक्ति का जीवन पशु समान होता है। अतः वर्तमान परिस्थितियों में यह आवश्यक हो जाता है कि समस्त प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों की शैक्षिक उपलब्धियों का पता लगाया जाये। इस सन्दर्भ में साठोत्तर वृद्धों से जो तथ्य संकलित हुए उन्हें तालिका संख्या 3.7 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या-३.७

साठोत्तर वृद्धों की शैक्षिक उपलब्धियाँ

क्र.सं.	शैक्षिक उपलब्धियाँ	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	अशिक्षित (निरक्षर)	40	14
2	शिक्षित (प्राइमरी एवं जूनियर हाईस्कूल)	70	23
3	हाईस्कूल से इण्टरमीडिएट	90	30
4	स्नातक	60	20
5	परास्नातक	30	10
6	अन्य	10	03
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 14 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों की स्थिति अशिक्षित जैसी है जिसमें अधिकांश महिलाएँ हैं तथा 23 प्रतिशत वृद्ध शिक्षित हैं जिनका शैक्षिक स्तर प्राइमरी एवं जूनियर हाईस्कूल स्तर का है। 30 प्रतिशत वृद्ध हाईस्कूल से इण्टरमीडिएट की शैक्षिक योग्यता रखते हैं; 20 प्रतिशत वृद्ध स्नातक तथा 10 प्रतिशत वृद्ध विभिन्न संकायों एवं विषयों में स्नातक एवं परास्नातक की शैक्षिक योग्यता रखते हैं जबकि 10 प्रतिशत वृद्ध अन्य प्रकार की शोध उपाधि, विभिन्न डिप्लोमा आदि की शैक्षिक योग्यता रखते हैं।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों में अशिक्षित वृद्धों का प्रतिशत कम है जबकि शिक्षित व्यक्तियों का प्रतिशत अधिक है।

सामाजिक स्थिति :

जीवन के अन्तिम चरण में जब साठोत्तर वृद्धों को अपने परिवार की सबसे ज्यादा आवश्यकता होती है तब वे औपचारिक देखभाल से वंचित किये जा रहे हैं। उनके अनुभव व परामर्श का लाभ युवा पीढ़ी को कितना मिलता है तथा समाज में उनकी स्थिति क्या है? यह जानने के लिए प्रतिचयित सूचनादाताओं से तथ्यों को ज्ञात किया गया जिन्हें तालिका संख्या 3.8 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या-३.८
साठोत्तर वृद्धों की सामाजिक स्थिति

क्र.सं.	सामाजिक स्थिति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	उच्च स्थिति	95	32
2	मध्यम स्थिति	120	40
3	निम्न स्थिति	85	28
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 32 प्रतिशत प्रतिचयित सूचनादाताओं की समाज में उच्च स्थिति है क्योंकि यह साठोत्तर वृद्ध उच्च वर्गीय या उच्च-मध्यम वर्गीय परिवारों से सम्बन्ध रखते हैं तथा आर्थिक रूप से सुदृढ़ है; 40 प्रतिशत सूचनादाता मध्यम सामाजिक स्थिति को समाज में रखते हैं जिनकी आर्थिक दशा सामान्य है तथा यदा-कदा पराश्रयता की स्थिति ही उत्पन्न हो पाती है। जबकि 28 प्रतिशत सूचनादाता निम्न सामाजिक स्थिति रखते हैं इनमें वे सूचनादाता सम्मिलित हैं जिनकी आर्थिक दशा निम्न है या वह जातीय संरक्षण में न्यून स्थिति रखते हैं अथवा वैधव्य जीवनयापन कर रहे हैं। ऐसे वृद्धों की सन्तानें इनका ध्यान नहीं रखती हैं जिस कारण यह अनेकों समस्याओं से घिरे रहते हैं।

राजनैतिक स्थिति :

समाज में विभिन्न आचार-विचार के व्यक्ति निवास करते हैं जिनका प्रत्यक्ष

एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव अन्य व्यक्तियों पर भी पड़ता है। राजनैतिक दशाएँ समाज की वह स्थितियाँ हैं जिनसे समाज का ढाँचा प्रभावित होता है तथा समाज की नई दिशा एवं गति प्रदान होती है। साठोत्तर वृद्धों में राजनीति के प्रति रुचि को जानने के लिए तथ्यों को एकत्र किया गया जिन्हें तालिका संख्या 3.9 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या-३.९
राजनीति में रुचि

क्र.सं.	अभिव्यक्ति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	राजनीति में रुचि रखते हैं।	190	63
2	राजनीति में रुचि नहीं रखते हैं।	110	37
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 63 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध राजनीति में रुचि रखते हैं। यहाँ यह बताना भी प्रासंगिक होगा कि राजनीति में रुचि रखने वाले सूचनादाताओं में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों की संख्या अधिक है। अधिकांश पुरुष सूचनादाता परिषद, पंचायत, विभिन्न संस्थाओं के अध्यक्ष आदि चुनाव लड़ने में रुचि रखते हैं तो कुछ सूचनादाता प्रत्याशियों का समर्थन कर अपना समय व्यतीत करते हैं। 37 प्रतिशत सूचनादाता किसी भी प्रकार की राजनैतिक गतिविधियों में रुचि नहीं रखते तथा वह इसे व्यर्थ मानते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है प्रतिचयित सूचनादाताओं में अधिकांश पुरुष सूचनादाता राजनैतिक गतिविधियों में रुचि रखते हैं।

धार्मिक स्थिति :

धर्म जीवन का आधार है तो वैयक्तिक विशेषताएँ पारिवारिक पृष्ठभूमि, आयु, वैवाहिक प्रस्थिति, लिंग, सामाजिक वर्ग आदि ऐसे कारक हैं जो व्यक्ति के खाली समय का मूल्यांकन करने में सहायक बनते हैं। कुछ व्यक्ति, अन्तर्मुखी व्यक्तित्व वाले एवं कुछ लोग बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाले होते हैं जिससे उनकी खाली समय की क्रियाएँ भी भिन्न-भिन्न प्रकृति की हो सकती हैं। प्रायः वृद्ध अपने खाली समय का सदुपयोग विभिन्न क्रियाएँ करके करते हैं परन्तु इस अवस्था में धर्म एवं आध्यात्मिक क्रियाओं का महत्व विशेष रूप से बढ़ जाता है क्योंकि

वृद्धावस्था को मोक्ष की सीढ़ी कहा गया है जिसका मार्ग धर्म एवं आध्यात्म से होकर गुजरता है। वृद्धों में धार्मिक रुचि को जानने के लिए प्रतिसूचनादाताओं से तथ्य प्राप्त कर उन्हें तालिका संख्या 3.10 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या-३.१०

धार्मिक रुचि का विवरण

क्र.सं.	अभिव्यक्ति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	ईश्वर का भजन आदि करके	105	35
2	सत्संग एवं प्रवचन में भाग लेकर	95	32
3	मित्रों के साथ धार्मिक चर्चा करके	65	21
4	तीर्थाटन करके	35	12
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 35 प्रतिशत प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध घर पर ही ईश्वर की आराधना भजन आदि करते हैं; 32 प्रतिशत वृद्ध अपने निकट के मन्दिर या किसी सत्संग, प्रवचन समारोह में भाग लेकर ईश्वर आराधना करते हैं 21 प्रतिशत वृद्ध अपने समायु मित्रों के साथ यथा सम्भव बैठकर धार्मिक चर्चाएँ किया करते हैं जिससे उनके ज्ञान में वृद्धि होने के साथ एकान्तता भी समाप्त हो जाती है जबकि 12 प्रतिशत वृद्ध तीर्थाटन करके ईश्वर के दर्शन तथा दान पुण्य करते हैं उनका मानना है इस अवस्था में तीर्थों के दर्शन करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है तथा मन प्रसन्न रहता है। ऐसे सूचनादाता अधिकांश वह वृद्ध थे जिनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ है तथा वह पूरी तरह से समस्त पारिवारिक उत्तरदायित्वों से मुक्त हो चुके हैं तथा स्वयं के धन को अपनी इच्छानुसार व्यय करते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है अधिकांश प्रतिचयित सूचनादाता अपने निवास पर; आस-पास के धार्मिक स्थलों या भवनों में तथा मित्र मण्डली के साथ धार्मिक चर्चा, सत्संग, प्रवचन आदि में भाग लेते रहते हैं।

आर्थिक स्थिति :

जीवनयापन के साधनों तथा अर्जित किये गये धन का सीधा सम्बन्ध होता है अतः प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से यह जानने का प्रयास किया गया कि उनके

परिवार की औसत मासिक आय क्या है? इस सन्दर्भ में प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 3 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या-३.११

साठोत्तर वृद्धों के परिवारों की मासिक आय का विवरण

क्र.सं.	औसत मासिक आय वर्ग (रुपये में)	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	2000 से कम	30	10
2	2000 - 4000	24	08
3	4000 - 6000	55	18
4	6000 - 8000	60	20
5	8000 - 10000	98	33
6	10000 से अधिक	33	11
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 33 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों के परिवारों की औसत मासिक आय 8000/- से 10000/- के मध्य है; जबकि 10 प्रतिशत परिवारों की औसत मासिक आय 2000/- से भी कम है। 18 प्रतिशत परिवारों की औसत मासिक आय 4000/- से 6000/- के मध्य है; 11 प्रतिशत परिवारों को ही सम्पन्नता की श्रेणी में रखा जा सकता है क्योंकि औसत मासिक आय 10000/- से अधिक है।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि लगभग 64 प्रतिशत परिवार आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं तथा शेष 36 प्रतिशत आर्थिक दृष्टि से कमजोर हैं तथा सामान्य एवं गैर सामान्य परिस्थितियों में जीवनयापन कर रहे हैं।

अध्याय-४

वृद्धों की सामाजिक दशायें

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तथा परिवार, समाज की आधारभूत, मौलिक एवं सार्वभौमिक इकाई है। परिवार में व्यक्तियों की सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन-पोषण एवं सामाजीकरण के साथ-साथ सदस्यों की शारीरिक रक्षा का कार्य भी होता है। शारीरिक रक्षा का संरक्षण से तात्पर्य वृद्ध अवस्था, बीमारी, दुर्घटना, अपाहिज होने आदि की अवस्था से परिवार द्वारा की गई देखभाल एवं सेवा से होता है। ऐसा होना आवश्यक भी है क्योंकि वृद्धावस्था व्यक्ति के जीवन का वह मोड़ होता है। जब व्यक्ति की इन्द्रियाँ कमजोर पड़ने लगती है तथा व्यक्ति की बहुत सी क्षमताएँ घटने लगती है। साथ ही व्यक्ति की समस्त जिम्मेदारियाँ जैसे सन्तानों का लालन-पालन, शिक्षा उनकी नौकरी विवाह आदि के उत्तरदायित्व समाप्त हो चुके होते है और जब व्यक्ति को अपने परिवार में स्नेह, सुरक्षा सेवा अपनेपन की भावना के साथ आराम चाहिए होता है। जिससे वह अपनी शेष आयु को अपने पारिवारिक सदस्यों के साथ आराम से व्यतीत कर सकें। इसी उद्देश्य की प्रतिपूर्ति के लिए प्रस्तुत अध्याय में साठोत्तर वृद्धों की विभिन्न सामाजिक दशाओं सूचनादाताओं की परिचयात्मक पृष्ठभूमि, पारिवारिक संरचना, पारिवारिक जीवन, अधिसत्ता एवं प्रभाव, खाली समय एवं मनोरंजन के क्षणों के कार्यकलाप, परिवर्तित पारिवारिक परिदृश्य, गृहस्थी के दायित्व एवं उनका निष्पादन, नाते-रिश्तेदारों के सह-सम्बन्धों की स्थिति तथा अन्तः सन्ततीय सम्बन्धों की प्रकृति का विश्लेषण किया गया है। जिसका विवरण निम्नलिखित है।

सूचनादाताओं की परिचयात्मक पृष्ठभूमि :

सूचनादाताओं की प्रकृति एवं उनसे प्राप्त होने वाले तथ्यों के मध्य अटूट सह-सम्बन्ध है। अतः अध्ययन इकाइयों के विषय में परिचयात्मक जानकारी प्राप्त करना आवश्यक तथा उपयोगी होता है। प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्रतिचयित साठोत्तर

वृद्धों की परिचयात्मक पृष्ठभूमि जानने के लिए जिन कारणों को आधार माना गया है उनमें पारिवारिक संरचना, पारिवारिक जीवन, अधिसत्ता एवं प्रभाव, एवं उनके कार्यकलाप, सन्ततीय स्थिति प्रमुख है इन कारकों से सम्बन्धित प्राप्त सूचनाओं को एकत्र करके विश्लेषित किया गया है।

<u>वृद्धों की पारिवारिक संरचना</u> :

साठोत्तर वृद्धों की पारिवारिक संरचना सामान्यतया पारिवारिक सम्बन्धों की प्रकृति पर आधारित होती है। अध्ययन के दौरान प्रायः यह पाया गया कि साठोत्तर वृद्धों की पारिवारिक प्रस्थिति एवं भूमिका मूलतः ऐसे अन्त वैयक्तिक सम्बन्धों के समूहों द्वारा प्रभावित होती है। जो उनकी सन्तानों या तीसरी पीढ़ी की सन्तानों के मध्य जाये जाते है हमारे देश में अधिकांश साठोत्तर वृद्ध तीन प्रकार की विस्तृत व्यवस्थाओं के अन्तर्गत जीवन–यापन करती प्रतीत होती है।

(i) अपनी सन्तानों (प्रायः पुत्र) के साथ या वैध्वय/विधुर की स्थिति में जीवनयापन करना।

(ii) अपनी सन्तानों (पुत्र या पुत्री) से दूर रहकर समय–समय पर उनसे मेल–मिलाप करते हुए जीवनयापन करना।

(iii) केवल अपने पति के साथ रहकर जीवनयापन करना।

भारतीय संस्कृति एवं समाज व्यवस्था की यह विशेषता एवं मूल्य व्यवस्था का यह आदर्श है कि यहाँ के लोगों ने वृद्धों के प्रति सदा ही प्रेम सम्मान एवं उनकी सेवा–सुश्रुषा तथा उन्हें देव तुल्य मानना आदि में अधिक लगाव रखा है, यही कारण है कि वृद्धावस्था में व्यक्ति अपनी विवाहित सन्तानों के यहाँ रहने लगते है। इसके विपरीत एक नवीन प्रवृत्ति भी अस्तित्व में आने लगी है जिसके अनुसार पुत्र के न होने पर या पुत्र के अन्यत्र (स्थानीय/विदेश) में बस जाने पर विवाहित पुत्रियाँ अपने वृद्ध माता–पिता के साथ रहने लगती है।

(१) साठोत्तर वृद्धों की पारिवारिक व्यवस्था का विवरण :

अध्ययन हेतु प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों की पारिवारिक संरचना का संज्ञान करने के लिए प्राप्त तथ्यों को सुविधा की दृष्टि से निम्नलिखित आठ श्रेणियों में प्रस्तुत किया गया :–

(अ) ऐसे साठोत्तर वृद्ध जो एकाकी जीवनयापन कर रहे हैं।

(ब) ऐसे साठोत्तर विधुर वृद्ध जो अपने अविवाहित बच्चों के साथ जीवनयापन कर रहे हैं।

(स) ऐसी साठोत्तर विधवा वृद्ध महिलायें जो अपने अविवाहित बच्चों के साथ जीवनयापन कर रहे हैं।

(द) ऐसे साठोत्तर वृद्ध जो अपने अविवाहित बच्चों के साथ जीवनयापन कर रहे हैं।

(य) ऐसे साठोत्तर वृद्ध जो अपने विवाहित बच्चों के साथ जीवनयापन कर रहे हैं।

(र) ऐसे साठोत्तर वृद्ध जो अपने विवाहित एवं अविवाहित बच्चों के साथ जीवनयापन कर रहे हैं।

(ल) ऐसे साठोत्तर वृद्ध-विधुर/विधवाएँ अपने विवाहित या अविवाहित बच्चों के साथ रहते हैं।

(व) ऐसे साठोत्तर वृद्ध जो मिश्रित ढ़ंग के परिवारों में रहते हैं अर्थात् जिनके साथ परिवार का कोई सदस्य रिश्तेदार या नौकर आदि रहता है।

इस सन्दर्भ में एकत्र तथ्यों को तालिका संख्या 4.1 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१

साठोत्तर वृद्धों की परिवारिक व्यवस्था का विवरण

क्र.सं.	पारिवारिक व्यवस्था	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	स्वयं (अकेले)	14	05
2	स्वयं एवं पत्नी	58	19
3	स्वयं, पत्नी एवं अविवाहित बच्चे	55	18
4	स्वयं एवं अविवाहित बच्चे	30	10
5	स्वयं, पत्नी, अविवाहित एवं विवाहित बच्चे	65	22
6	स्वयं एवं विवाहित व अविवाहित बच्चे	43	14
7	स्वयं एवं मिश्रित परिवार व्यवस्था	35	12
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 22 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपने जीवन साथी, अविवाहित एवं विवाहित सन्तानों के साथ रहते हैं। 18 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपने जीवन साथी के साथ अविवाहित बच्चों के साथ रहते हैं। 14 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध (विधुर या विधवा) अपने विवाहित एवं अविवाहित बच्चों के साथ रहकर जीवनयापन करते हैं। 19 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध पति-पत्नी साथ रहकर अकेले जीवन व्यतीत करते हैं जबकि 5 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध विधुर या वैध्वय के रूप में अकेले जीवनयापन कर रहे हैं तथा 12 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध मिश्रित परिवार व्यवस्था के अन्तर्गत जीवनयापन करते हैं।

(२) साठोत्तर वृद्धों की संतानों से भावनात्मक सम्बद्धता की स्थिति का विवरण :

सामान्यतः यह दृष्टिगत होता है कि भावनात्मक या संवेगात्मक पराश्रयता साठोत्तर वृद्धों को सन्तानों के साथ रहने को प्रेरित ही नहीं प्रत्युत वाध्य करती है। नगरीकरण की प्रक्रिया तथा भौतिकवादी संस्कृति के विकास के कारण नगरीय जीवन में परम्परागत संयुक्त परिवार के रूप में रहना क्रमशः दुलर्भ होता जा रहा है। कभी-कभी यह भी देखा गया है कि ऐसे साठोत्तर वृद्धों की अपने से भावात्मक सम्बद्धता अधिक होती है जो अपने माता पिता से अधिक प्यार-दुलार नहीं पा सकी क्योंकि बचपन में ही उनकी माता-पिता या दोनों में से किसी एक का आकस्मिक निधन हो गया था अथवा वे अपने माता-पिता की अकेली सन्तान थी। इस तथ्य का संज्ञान करने हेतु प्रतिचयित सूचनादाताओं से उनके मौलिक विचार आमंत्रित किये गये तथा प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 4.2 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.२

साठोत्तर वृद्धों की सन्तानों से भावनात्मक सम्बद्धता की स्थिति का विवरण

क्र.सं.	सन्तानों से भावनात्मक सम्बद्धता	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सन्तानें अलग रहती हैं।	210	70
2	सन्तानें अलग नहीं रहती हैं।	90	30
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका संख्या 4.2 का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 70 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपने विवाहित सन्तानों से अलग निवास करते हैं क्योंकि पर्याप्त आवासीय सुविधा न होने के कारण या जीविकोपार्जन हेतु अन्यत्र जाकर सन्तानों के बसने के कारण अपनी सन्तानों के साथ नहीं रह पाते जबकि 30 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपनी अविवाहित या विवाहित सन्तानों के साथ निवास करती है। अतः निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध जनसंख्या वृद्धि एवं नौकरी/व्यवसाय के कारण अपनी सन्तानों के साथ नहीं रह पाते हैं।

यहाँ यह बात भी स्पष्ट करना अत्यन्त आवश्यक है कि साठोत्तर वृद्धों अधिकांशतः वृद्धाएँ परम्परावादी विचारधारा की कट्टर समर्थक हैं तथा कुछ वृद्धाएँ अन्ध विश्वासी हैं जिनका मानना है कि जिस घर में विवाहोपरान्त वह बहू के रूप में आयी और गृहणी के रूप में सम्पूर्ण जीवन व्यतीत किया वे उस आवास को नहीं छोड़ना चाहती; कुछ सूचनादाताओं का तो यहाँ तक मानना था कि उनकी अन्तिम इच्छा ही यह है कि वे इसी घर में अन्तिम साँस ले; वे अन्यत्र कहीं नहीं जाना चाहती है यही मनोवृत्ति कुछ वृद्ध पुरुष सूचनादाताओं में भी दृष्टिगत होती है। कुछ ऐसे भी साठोत्तर वृद्ध हैं जो अपने जीवन साथी के साथ निवास करते हैं किन्तु पारिवारिक सदस्यों के साथ जीवन की सुख-सुविधाओं का भरपूर आनन्द प्राप्त करते हैं। जनसंख्या वृद्धि के कारण उत्पन्न होने वाली आवासीय समस्या के निदान हेतु नवीन आवास बनवाकर उनमें रहना अधिक उपयोगी सिद्ध हो रहा है। साथ ही ऐसे नवनिर्मित भवनों में नई पीढ़ी की सन्तानों के भविष्य को दृष्टिगत करते हुए जीविकोपार्जन के किसी न किसी साधन की व्यवस्था की गई है। जिससे परिवार के सभी सदस्यों का एक साथ रहना सम्भव नहीं हो पा रहा है। इस बात से यह भी संकेत मिलता है कि साठोत्तर वृद्धों की संवेगात्मक सम्बद्धता प्रकृति से संयुक्त परिवार जैसी है मात्र आवासीय स्थिति अलग-अलग या व्यवस्था मूलक है।

अध्ययन के दौरान ऐसे भी सन्दर्भ मिले हैं जिनसे साठोत्तर वृद्धों के विवाहित बच्चे अन्य शहरों में नौकरी या व्यवसाय करते हैं जिससे वे अपने-माता के साथ नहीं रह पाते हैं। वे यथाशक्ति ही अपने किसी भाई या बहन को ही अपने साथ रखते हैं तथा कुछ विशेष उत्सवों, त्यौहारों आदि के अवसर पर अपने

पैतृक आवास में आकर पारिवारिक संगठन, घनिष्ठता, एकता तथा आपसी सम्बन्धों को मजबूत करते हैं। इसके साथ-साथ ऐसे बहुत ही कम सन्दर्भ मिले कि जहाँ बच्चे अपने माता-पिता से नाराज होकर तथा उन्हें भाग्य के भरोसे छोड़कर अन्यत्र रहना पसन्द करते हैं। परन्तु कुछ साठोत्तर वृद्धों ने यह भी बताया कि पैतृक सम्पत्ति का बँटवारा होने के बाद उनकी सन्तानें अपनी सम्पत्ति को बेचकर तथा उनसे सदैव के लिए सम्बन्ध विच्छेद करके दूसरे नगरों में जाकर बस गये। यह स्थिति अत्यन्त कष्टकर है।

इस विषय में यह भी उल्लेखनीय है कि कुछ प्रगतिशील परिवारों के वृद्धों ने जानबूझकर अपने विवाहित बच्चों से अलग रहना ही निवास करते हैं जिससे उनकी परम्परागत मानप्रतिष्ठा बनी रहती है तथा आवश्यकतानुसार यह आपस में अपनी समस्या का समाधान खोज लेते हैं। ऐसे साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि इससे उनके विवाहित बच्चों, बहुओं आदि को पूर्ण स्वतन्त्रता मिलती है तथा वह जिस प्रकार से भी रहना चाहे रह सकते हैं उनके ऊपर किसी का भी अनावश्यक नियंत्रण नहीं रहता है इससे दोनों ही पक्ष आनन्द एवं सुख की अनुभूति करते हैं। ऐसे परिवारों के साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि विवाह के उपरान्त सन्तानें नासमझ नहीं रहती तथा वह अपना हित या अच्छा-बुरा भली-भाँति समझते हैं अतः उन्हें अपने अनुसार जीवनयापन करने की स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए जिससे वे अपनी इच्छानुसार अपने परिवार का विकास कर सकें वे अपनी सन्तानों की अपने अनुसार पढ़ायें-लिखायें तथा उन्हें आत्मनिर्भर बनायें। कुछ साठोत्तर वृद्धों का विशेषकर वृद्धाओं का यह मानना था कि जहाँ वैचारिक मतभेद से तनाव, ईर्ष्या, संघर्ष, कुण्ठा जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो; तो ऐसे परिवारों में एक साथ रहना समस्या ग्रस्त होता है। अतः ऐसी स्थिति निर्मित होने से अच्छा है कि अलग ही रहा जाये। इस तरह की स्थितियों ने वृद्धों की सन्तानों से भावनात्मक सम्बद्धता की स्थिति को समझने में सहायता प्राप्त हुई।

(३) अलग निवास करने वाले बच्चों से साठोत्तर वृद्धों के सम्बन्धों की प्रकृति का विवरण:

सम्बन्धों की आपकी भावात्मक सम्बद्धता जानने के उपरान्त यह जाने का प्रयास किया गया कि साठोत्तर वृद्धों के जो परिवारजन या बच्चे उनसे अलग रहते हैं; उनके साथ सम्बन्धों की स्थिति क्या है? इस सम्बन्ध में सूचनादाताओं से

उनके परिवार जानने का प्रयास किया गया। प्राप्त विचारों को तालिका संख्या 4.3 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ४.३

अलग निवास करने वाले पारिवारिक सदस्यों के सम्बन्धों की प्रकृति का विवरण

क्र.सं.	सम्बन्धों की प्रकृति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सम्बन्ध अभी अस्तित्व में है।	282	94
2	सम्बन्ध लगभग समाप्त हो गये हैं।	18	06
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 94 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह स्वीकार करते हैं कि उनसे अलग रहने वाले पारिवारिक सदस्यों के साथ उनके सह सम्बन्ध आज भी जीवित तथा मृदुल हैं; जबकि मात्र 06 प्रतिशत वृद्धों का यह मानना था कि उनके सम्बन्ध लगभग समान जैसे हैं उन्होंने बड़ी ही गहन निराशा तथा असमजस्य की स्थिति में कहा कि अब कोई आशा शेष नहीं है कि निकट भविष्य में सम्बन्ध पुनः जीवित हो सकेंगे; बस अब अन्तिम समय (मृत्यु) का ही इन्तजार शेष है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपनी सन्तानों से अलग रहने को अधिक उपयोगी मानते हैं तथा आपसी तालमेल तथा समझ के आधार पर अलग रहते हुए भी सम्बन्धों को मधुर एवं जीवित रखते हैं।

(४) सम्बन्ध बनाये रखने हेतु साठोत्तर वृद्धों द्वारा प्रयुक्त तकनीकों का विवरण :

वर्तमान की भौतिकतावादी जीवनशैली तथा व्यस्तता के कारण आपस में स्वास्थ्य सम्बन्ध स्थापित करना तथा उन्हें जीवित रखना; उन्हें निरन्तर रखना सामान्य व्यक्ति के लिए अत्यन्त ही कठिन कार्य है; अतः अध्ययन के दौरान यह प्रयास किया गया कि आखिर उन उपायों (तकनीकों) को समझना उपयोगी होगा जिनका प्रयोग करके साठोत्तर वृद्ध अपने से अलग निवास करने वाले पारिवारिक सदस्यों से मधुर एवं जीवित सम्बन्ध बनाये हुए हैं। इसी रहस्य को ज्ञात करने के उद्देश्य से सम्बन्धित सूचनादाताओं से तथ्य एकत्र किये गये। एकत्रित तथ्यों को तालिका संख्या 4.4 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ४.४

अलग निवास करने वाले पारिवारिक सदस्यों से सम्बन्ध बनाये रखने हेतु साठोत्तर वृद्धों द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली तकनीकों का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों द्वारा प्रयुक्त तकनीकें	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	विवाह, उत्सव आदि के अवसर पर उचित सुझाव प्रदान करके	60	21
2	एक-दूसरे की सहायता करके	110	39
3	एक-दूसरे के यहाँ भोजन करके	22	08
4	यथाशक्ति वित्तीय सहायता करके	90	32
	योग	300	100

अतः निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि परस्पर एक-दूसरे की सहायता करना एवं विवाह आदि से सम्बन्धित उचित सुझाव देना, अलग रहने वाले पारिवारिक सदस्यों से स्थायित्व के सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

(५) साठोत्तर वृद्धों के पारिवारिक सदस्यों से सम्बन्ध समाप्त होने के कारणों का विवरण:

साठोत्तर वृद्धों और उनके पारिवारिक सदस्यों के मध्य सम्बन्धों का यह पक्ष भी अध्ययन हेतु महत्वपूर्ण है क्योंकि यह जानना भी आवश्यक है कि साठोत्तर वृद्धों से अलग रहने वाले बच्चों के सम्बन्ध इस अवस्था में पहुँचे वृद्ध व्यक्तियों से क्यों समाप्त हो गये जिनके पुनः स्थापित होने की कोई भी आशा शेष नहीं रही है। यही तथ्य जानने के लिए द्रवित साठोत्तर वृद्धों से आग्रह किया गया कि वे उन कारणों या परिस्थितियों को स्पष्ट करें जो आपसी सम्बन्धों को समाप्त करने में सबसे अधिक उत्तरदायी जो गये। सूचनादाताओं द्वारा प्रदत्त तथ्यों को विश्लेषित करने हेतु उन्हें तालिका संख्या 4.5 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.५

साठोत्तर वृद्धों के पारिवारिक सदस्यों से सम्बन्ध समाप्त होने के कारणों का विवरण

क्र.सं.	सम्बन्ध समाप्त होने के कारण	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	वैचारिक मतभेद होना	04	22
2	बच्चों का अधिक दूर जाकर रहना	05	28
3	बच्चों का आत्मिक लगाव न होना	03	17
4	पैतृक सम्पत्ति का स्थाई बँटवारा होना	06	33
	योग	**18**	**100**

तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 28 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि उनकी सन्तानों का नौकरी या व्यवसाय के कारण अपने पैतृक निवास से बहुत दूर या विदेश में जाकर बस जाना है जिससे उनका आना सम्भव नहीं हो पाता है; जबकि 22 प्रतिशत वृद्धों का मानना है कि उनके एवं सन्तानों के मध्य वैचारिक मतभेद के कारण अब सम्बन्ध रखना सम्भव नहीं है; 17 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभाव के कारण उनकी सन्तानों का उनके साथ भावनात्मक आत्मिक लगाव नहीं रहा जिससे उनके मध्य के सम्बन्ध असामान्य हो गये तथा 33 प्रतिशत वृद्धों का मानना है कि पैतृक सम्पत्ति का स्थाई बँटवारा हो जाने के कारण उनकी सन्तानों ने अपने वृद्ध माता-पिता से स्वतः दूरी बना ली अतः अब उनके मध्य सम्बन्ध नहीं रह गये हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सन्तानों का दूर जाकर निवास करना तथा वैचारिक मतभेद ही वे प्रमुख कारण हैं जिनसे साठोत्तर वृद्धों के अपने बच्चों से सम्बन्ध लगभग समाप्त हो गये हैं।

प्रतिचयित समस्त साठोत्तर वृद्धों के पारिवारिक संरचना सम्बन्धी विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपनी सन्तानों के सम्पर्क में रहते हैं तथा अन्तः क्रियाएँ सम्पन्न करती रहती है। वे पारिवारिक सदस्य (सन्तानें), जो जीविकोपार्जन हेतु कहीं दूर जाकर बस गये हैं वे भी विभिन्न अवसरों पर या

आवश्यकतानुसार आते रहते हैं तथा यथा–शक्ति साठोत्तर वृद्ध अपनी सन्तानों के पास भी आते जाते रहते हैं। परन्तु स्वयं असहाय अस्वस्थ्य एवं विपन्नता के कारण कुछ साठोत्तर वृद्धों को यह अवसर प्राप्त नहीं हो पाता है।

पारिवारिक जीवन एवं वृद्धापन :

परिवार शब्द अंग्रेजी भाषा के फैमिली (Family) शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है जिसकी स्वयं की उत्पत्ति लैटिन भाषा के फैमुलस (Famulus) शब्द से हुई है; मानव समाज का इतिहास मूलतः परिवार का ही इतिहास है क्योंकि मानव समाज के प्रारम्भ से ही परिवार उसके साथ रहा है तथा किसी न किसी रूप में यह सांस्कृतिक विकास के सभी स्तरों पर पाया जाता है। परिवार ही समाज की प्रारम्भिक इकाई है परिवार के बिना समाज की निरन्तरता सम्भव नहीं क्योंकि परिवार ही नये बच्चों के जन्म का सबल आधार एवं साधन है यही बच्चे उन व्यक्तियों की रिक्तता को पूर्ण करते रहते हैं जो वृद्ध होने पर मृत हो जाते हैं। इस प्रकार परिवार द्वारा मृत्यु एवं अमरत्व जैसी दो विरोधी अवस्थाओं का सुन्दर समन्वय हुआ। वस्तुतः परिवार ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो विवाह, रक्त अथवा गोद लेने के सम्बन्धों द्वारा संगठित है जिसके सदस्य एक छोटी–सी गृहस्थी का निर्माण करते हैं; पति–पत्नी, माता–पिता, पुत्र–पुत्री अथवा भाई–बहन के रूप में एक–दूसरे से अन्तः क्रियाएँ करते हैं और एक सामान्य संस्कृति का निर्माण एवं देखरेख करते हैं।

इसी आधार पर परिवार को एक सार्वभौम सामाजिक संस्था के रूप में मान्य किया गया। हमारे समाज में परिवार को केन्द्रीय संस्था का स्थान दिया गया है इस सन्दर्भ में देसाई (1964)[1], **सिंह योगेन्द्र (1973)[2], गोरे (1968)[3]** आदि द्वारा किये गये अध्ययनों से यह विम्बित होता है कि अन्तः पारिवारिक सम्बन्धों, पारिवारिक भूमिकाओं, पारिवारिक स्वरूपों एवं परिवार के उन प्रकार्यों का, जो व्यक्ति एवं समाज दोनों के लिए सम्पन्न किये जाते थे, स्थापन्न होने लगा है। यह स्थिति परिवार के विभिन्न पक्षों का समाजशास्त्रीय अध्ययन करने पर जोर देती है। सामान्यतः यह सभी व्यक्ति स्वीकार करते हैं कि परिवार का निर्माण विवाहोपरान्त होता है क्योंकि विवाह का सबसे अधिक अर्थपूर्ण प्रकार्य समाज द्वारा स्वीकार्य तरीके से स्त्री पुरुष की यौनजनित आवश्यकताओं की पूर्ति

करना है तथा इसके साथ–साथ उत्पन्न सन्तानों का सामाजीकरण तथा नवीन संतति की उत्पत्ति द्वारा मानव समाज की जैविकीय निरन्तरता को बनाये रखना एक प्रमुख पारिवारिक उत्तरदायित्व है। इन प्रकार्यों के द्वारा ज्ञान का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरण सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा आदि महत्वपूर्ण कार्य माने जाते हैं। अतः भारत में परिवार को एक अच्छी तरह संगठित ऐसी संस्था के रूप में मान्य किया गया है जो समस्त सदस्यों की सामाजिक, आर्थिक, जैविकीय आवश्यकताओं की पूर्ति परम्परागत तरीके से करती है इस प्रकार सन्तानों की देखभाल एवं सुरक्षा के साथ–साथ वृद्धजनों एवं असहायों की सेवा–सुश्रुषा के लिए परिवार को सर्वाधिक उपयोगी माना गया है।

वर्तमान परिपेक्ष्य में विश्व में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जो परिवार का सदस्य न हो; परिवार का एक रूप यह है जिसमें व्यक्ति एक शिशु के रूप में जन्म लेता है एवं उसका दूसरा रूप वह है जिसमें वही शिशु व्यक्ति के रूप में(माता–पिता) अनेक शिशुओं को जन्म देता है। इस प्रकार परिवार में ही बच्चा जन्म लेता है फिर वह युवावस्था, प्रौढ़वस्था, वृद्धावस्था तक का सफर विभिन्न चरणों में पूर्ण करने के उपरान्त मृत्यु को प्राप्त करता है। यही कारण है कि प्रत्येक समाज में परिवार का अस्तित्व रहा है अतः परिवार ही समस्त संस्थाओं का आधार है।

समाजशास्त्र के सन्दर्भ में यदि किसी परिवार में तीन पीढ़ी के सदस्य (माता–पिता उनकी सन्तानें तथा नाती–नातिन) सह–आवास, सम्मिलित रसोई, संयुक्त अधिसत्ता, संयुक्त धार्मिक क्रिया–कलाप एवं उत्सव, संयुक्त आय–व्यय एवं सम्पत्ति एवं मूल्यात्मक उन्मेष के साथ एक ही छत के नीचे निवास करते हैं तो ऐसे परिवार को संयुक्त परिवार कहा जाता है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री रॉस (1961)[4] का मानना है कि जैसे–जैसे परिवार का आकार बढ़ता जाता है वैसे–वैसे पारिवारिक कुप्रबन्धन की स्थिति जन्म लेकर अनेक समस्याओं को उत्पन्न करती है। अनेक मुद्दों द्वारा उत्पन्न समस्याएँ तनाव की स्थिति परिवार के अन्य सदस्यों को प्रथक परिवार बनाने या बसाने की ओर अग्रसर कर देती है। इस प्रकार संयुक्त परिवार एकाकी परिवारों में परिवर्तित होने लगते हैं एवं कृषि योग्य भूमि व जीविका के संसाधनों में विभाजन होने से प्रायः युवा वर्ग के सामने एवं वृद्धों के समक्ष

अनेक समस्यायें उत्पन्न होने लगती है जिससे कुछ व्यक्ति जीविका के नवीन साधन तलाशने के लिए शहरों की ओर पलायन करने लगते हैं तथा कुछ व्यक्ति किसी तरह वहीं पर समायोजित हो जाते हैं। भारत के सन्दर्भ में संयुक्त परिवार व्यवस्था ने वृद्धों की बहुत सी समस्याओं के निदान में सहायता की है इसी कारण प्रायः वृद्धों ने अपनी परम्परागत पारिवारिक प्रस्थिति का लाभ लेकर परिवार में अपना वर्चस्व स्थापित किया इसके लिए जहाँ एक ओर परम्परागत मूल्य व्यवस्था सहायक रही वहीं दूसरी ओर वृद्धों का अपनी पैतृक सम्पत्ति पर कानूनी आधिपत्य रहा है तथा उनकी सम्मानजनक स्थिति एवं उनके अनेक अनुभवों ने उन्हें शीर्ष अधिसत्ता प्रदान की जिससे समस्त पारिवारिक सदस्यों ने यथावत अक्षुण्य बनाये रखा यद्यपि औद्योगिक सभ्यता के तीव्र परिवर्तनों ने वृद्धों के ज्ञान एवं उनके अनुभवों को कम महत्वपूर्ण कर दिया है तथा पारिवारिक एकता एवं संगठन को मजबूत बनाये रखने वाले बहुत से मूल्य निष्प्रभावी सिद्ध होने लगे हैं अतः परिवार में वृद्धों की अधिसत्ता, प्रभुत्व एवं उच्च प्रस्थिति जैसी स्थितियाँ कमजोर होने लगी है जो समाज वैज्ञानिकों एवं अनुसंधानकर्त्ताओं के लिए अध्ययन के नवीन पक्ष प्रस्तुत करती है।

भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज है जिसमें पुरुषों का स्थान स्त्री से उच्च रहा है सम्प्रति वृद्धों का पारिवारिक जीवन स्वयं वृद्धों के विवेक एवं समायोजन की प्रकृति पर निर्भर करता है।

<u>अधिसत्ता एवं प्रभाव</u> :

सामान्यतः एक व्यक्ति द्वारा अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों को व्यवस्थित करने तथा उनके विषय में निर्णय लेने के प्रस्थापित अधिकार को ही अधिसत्ता (अथार्टी) कहा जाता है। अधिसत्ता शक्ति का ही दूसरा स्वरूप है जिसमें अनेक व्यक्तिगत मानवीय कर्ताओं की क्रियाओं को आदेशात्मक तरीके से निर्देशित किया जाता है जिससे किसी विशेष लक्ष्य या सामान्य लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। जबकि किसी व्यक्ति या समूह की अपनी इच्छानुसार दूसरे व्यक्तियों या समूहों को परिवर्तित करने की क्षमता का प्रभाव कहते हैं अनेक विद्वानों ने शक्ति को ही प्रभाव का रूप माना है प्रभाव अनुनयात्मक होता है इसमें शक्ति की भाँति दमन, हिंसा तथा बल प्रयोग का भाव निहित नहीं होता है व्यक्ति प्रभाव के सम्मुख

स्वेच्छापूर्वक नतमस्तक हो जाते हैं जबकि शक्ति व्यक्ति को नतमस्तक होने के लिए विवश करती है।

मैक्स बेवर (1947)[5] के अनुसार– समाज में अधिसत्ता विशेषतः आर्थिक आधारों पर आधारित होती है यद्यपि आर्थिक कारक अधिसत्ता के निर्धारण में एक मात्र कारक नहीं कहा जा सकता है। आर्थिक जीवन में एक स्थिर या संस्थागत अर्थव्यवस्था समाज में कुछ विशिष्ट वर्ग को अधिकार या अधिसत्ता प्रदान करती है। यह वर्ग अपनी उस अधिसत्ता के बल पर दूसरे वर्गो पर प्रभुत्व रखता है या उनसे उच्च स्थिति पर आसीन होता है। अधिसत्ता के तीन प्रकार हैं (i) वैधानिक सत्ता, (ii) परम्परागत सत्ता, (iii) करिश्माई सत्ता।

परिवार के सन्दर्भ में परम्परागत अधिसत्ता का ही अधिकांशतः उल्लेख मिलता है क्योंकि अधिसत्ता का यह स्वरूप किस एक व्यक्ति को परम्परा द्वारा स्वीकृत पद पर आसीन होने के कारण प्राप्त होती है क्योंकि इस पद को परम्परागत व्यवस्था द्वारा ही परिभाषित किया जाता है अतः ऐसे पद पर विराजमान होने के कारण व्यक्ति को कुछ विशेष अधिकार एवं अधिसत्ता मिल जाती है। इस प्रकार की अधिसत्ता परम्परागत अधिसत्ता कहलाती है। उदाहरणार्थ– ग्रामीण भारत के अतीत से ज्ञात होता है कि कृषि युग में भारतीय ग्रामों में पायी जाने वाली पंचायतों में पंचों की अधिसत्ता परम्परानुसार ही निश्चित होती रही है। इसी प्रकार विशिष्टसत्तात्मक परिवारों में पिता को परिवार से सम्बन्धित समस्त विषयों में जो अधिकार या अधिसत्ता प्राप्त होती है वह पूर्णतः परम्परानुसार ही होते है। पिता की प्रत्येक आज्ञा का पालन करना हमारी परम्परा का प्रतीक एवं प्रतिष्ठा माना गया है। इसकी कोई लिखित या सीमित व्यवस्था नहीं होती है प्रयुक्त स्वयं परिवार की पुरातन व्यवस्था द्वारा निर्धारित की जाती है। इसी तरह मातृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था में परिवार के विविध विषयों पर माता का अधिकार सुरक्षित होता है। वस्तुतः हिन्दू परिवारों में माता एवं पिता दोनों को ही संयुक्त रूप से यह अधिकार प्राप्त होता है कि वह अपने निर्णय दें एवं शेष पारिवारिक सदस्य उनके आदेशों का पालन करें। माता या पिता में से किसी की भी मृत्यु होने के पश्चात् यह अधिकार माता–पिता के पास ही सुरक्षित रहता है। अतः स्पष्ट है कि अधिसत्ता सामान्यतः दो पक्षों के मध्य अस्तित्व पाने वाला एक सम्बन्ध ही

है। परिवार का मुखिया (श्रेष्ठ) जीवन के विविध पक्षों के विषय में यथाशक्ति उचित निर्णय लेकर अपने समस्त अधीनस्थ लोगों तक इस प्रत्याशा के साथ सम्प्रेषित करता रहता है कि समस्त अधीनस्थ इन निर्णयों को स्वीकार कर लेंगे। इस सन्दर्भ में **एडवार्ड ए शिल्स** (1984)[6] का मानना है कि प्राचीन समय में परिवार का मुखिया न केवल पारिवारिक सन्दर्भों में महत्वपूर्ण निर्णय लेता था अपितु उसकी परिवार में अधिसत्ता अघाट्य थी। अब परिवर्तन की अनेक प्रक्रियाओं के प्रभाव से इस प्रकार के दृष्टिकोण लक्षित होने लगा है। बुद्धि अनुभव, ज्ञान क्षमता आदि के सन्दर्भ अब वृद्धों को नई सन्तति की तुलना में पीछे छोड़ रहे हैं। परन्तु इतना अवश्य है कि वृद्ध का बड़ा पुत्र निर्णय लेने का कार्य करने लगा है जिसे परिवार का प्रत्येक सदस्य सामान्य रूप से स्वीकार कर लेता है तथा यह ज्येष्ठ पुत्र अपने द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों में अपने वृद्ध पिता को विश्वास में लेने के साथ-साथ अन्य पारिवारिक सदस्यों की सहमति भी प्राप्त करता है। इस प्रकार भारतीय परिवार व्यवस्था में जब अधिसत्ता को दृष्टिगत किया जाता है तो थोड़ा सा अन्तर प्रतीत होता है ऐसे परिवारों में मुखिया हर सम्भव यह प्रयास करता है कि उसकी अधिसत्ता असंदिग्ध रूप से अक्षुण बनी रहे तथा अपने परम्परागत अधिकार के आधार पर असीमित शक्ति का प्रयोग भी करता है क्योंकि वह अपने आप को परिवार का संरक्षक मानता है जबकि सत्य यह है कि परिवार में अधिसत्ता एवं शक्ति संरचना वृद्धावस्था, शारीरिक निर्बलता तथा आर्थिक शक्ति के आधार पर निरन्तर परिवर्तित होती रहती है तथा धीरे-धीरे वृद्धों से युवा सन्तति की ओर गतिशील हो जाती है। इस प्रकार विभिन्न पारिवारिक मामलों का क्रियान्वयन एवं प्रबन्धन उन वरिष्ठ पारिवारिक मामलों का क्रियान्वयन एवं प्रबन्धन उन वरिष्ठ पारिवारिक सदस्यों को स्वतः ही हस्तान्तरित हो जाते हैं जिनका परिवार के मुखिया एवं अन्य पारिवारिक सदस्यों पर अपेक्षाकृत अधिक प्रभाव होता है। इससे वृद्ध माता-पिता को सन्तुष्टि एवं प्रसन्नता प्राप्त होती है कि अब उनकी सन्तानें उनके सामने ही अपने-अपने परिवारों का सकुशल संचालन करने लगे हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में साठोत्तर वृद्धों की पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभाव को जानने के लिए पारिवारिक जीवन के कुद प्रमुख सन्दर्भो को चुना गया तथा यह भी ध्यान में रखा गया कि भारतीय समाज मानव-प्रभु समाज है जिसमें वृद्धों को

दूसरे स्थान पर प्रतिस्थापित किया गया है अतः उनकी पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभाव का मूल्यांकन साठोत्तर वृद्धों के जीवन साथियों के सापेक्ष में किया जायेगा। क्योंकि यह पक्ष भी साठोत्तर वृद्धों के सामाजिक समायोजन का विश्लेषण करने की दृष्टि से उपयोगी है। अतः इस सन्दर्भ में परिवार में निर्णय लेने की स्थिति; इन निर्णयों में साठोत्तर वृद्धों का स्थान; परिवार में अधिसत्ता व प्रभाव स्थापित करने हेतु साठोत्तर वृद्धों द्वारा प्रयुक्त की गयी तकनीकों को विवरण, परिवार के सर्वोत्तम निर्णायक सदस्यों का विवरण, सन्तानों के बहुमुखी विकास हेतु निर्णय लेने वाले सदस्य का विवरण, परम्परागत मूल्य व्यवस्था में होने वाले विचलन के प्रति साठोत्तर वृद्धों के विचार; तथा साठोत्तर वृद्धों द्वारा किये जाने वाले निर्णयों के प्रति पारिवारिक सदस्यों की प्रतिक्रियाएँ; परिवार में साठोत्तर वृद्धों की अधिसत्तात्मक स्थिति का विवरण आदि ये सभी महत्वपूर्ण आधार बिन्दु है जिनके विषय में साठोत्तर वृद्धों द्वारा तथ्य एकत्र किये गये।

(१) परिवार के महत्वपूर्ण मामलों का निर्णायक सदस्य :

सामान्यतः यह देखा गया है कि साठोत्तर वृद्धों की पारिवारिक प्रस्थिति में गिरावट का आना उनकी अधिसत्ता एवं निर्णय लेने की क्षमता में होने वाले परिवर्तनों से स्पष्ट हो जाती है। इसी तथ्य को जानने के लिए प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध सूचनादाताओं से यह स्पष्ट आग्रह किया गया कि उनके पारिवारिक मामलों का निर्णय किसके द्वारा लिया जाता है इस विषय में जो सूचनाएँ प्राप्त हुई उन्हें विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करके तालिका संख्या 4.6 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.६

परिवार के महत्वपूर्ण मामलों में निर्णय लेने वाले सदस्य का विवरण

क्र.सं.	निर्णय लेने वाला व्यक्ति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	स्वयं वृद्ध द्वारा	50	16
2	वृद्ध एवं उसकी पत्नी द्वारा	70	23
3	वृद्ध पत्नी एवं सन्तानों द्वारा	110	37
4	वृद्धा एवं समस्त पारिवारिक सदस्यों द्वारा	53	18
5	केवल पारिवारिक सदस्यों द्वारा	17	06
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 37 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि उनके पारिवारिक निर्णय पति–पत्नी एवं समस्त बच्चों द्वारा आपस में मिलकर लिए जाते हैं जबकि 23 प्रतिशत परिवारों में निर्णय लेने का अधिकार मात्र वृद्ध माता–पिता के पास सुरक्षित रहता है जबकि 18 प्रतिशत वृद्धाएँ (विधवा) ऐसी हैं जो यह मानती है कि पति की अनुपस्थिति में परिवार के सभी महत्वपूर्ण निर्णय सभी सदस्यों एवं उनकी आम राय पर लिये जायें। जबकि 16 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने यह स्वीकार किया कि परिवार के समस्त महत्वपूर्ण निर्णय लेने का अधिकार मात्र उनके पास ही सुरक्षित है; 6 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं अब वृद्धावस्था के कारण पारिवारिक सदस्य उन्हें महत्वपूर्ण निर्णयों हेतु अयोग्य समझ कर स्वयं ही निर्णय कर लेते हैं। यहाँ यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि कुछ ऐसी भी साठोत्तर महिलाएँ हैं जो न केवल अपने बच्चों अपितु अपने पति पर भी अपना प्रभुत्व रखती हैं तथा उनके द्वारा लिये गये निर्णय ही सर्वोच्च होते हैं। जबकि कुछ ऐसी भी साठोत्तर वृद्धाएँ हैं जो प्रत्येक निर्णय को स्वीकार कर उसमें अपनी सहमति व्यक्त करना अपना कर्त्तव्य समझती हैं। जिस कारण समस्त पारिवारिक सदस्य उनका सहृदय सम्मान करते हैं तथा उनसे प्रभावित भी रहते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि कुछ साठोत्तर वृद्धों को छोड़कर अधिकांश साठोत्तर वृद्ध (पुरुष एवं स्त्री) परिवार के महत्वपूर्ण मामलों में निर्णायक सदस्य की भूमिका का निर्वाह करते हैं अर्थात् परम्परागत पारिवारिक अधिसत्ता उनके ही पास सुरक्षित है क्योंकि वे जनतान्त्रिक तरीके से ही निर्णय लेने में विश्वास रखते हैं इसके विपरीत यदि पारिवारिक सदस्य स्वयं भी कोई निर्णय लेते हैं तो वे अपने परिवार के वृद्धों की सहायता, परामर्श एवं निर्देशन द्वारा ही करते हैं।

(२) परिवारिक निर्णय प्रक्रिया में साठोत्तर वृद्धों का स्थान :

प्रायः ऐसा माना जाता है कि आधुनिक एवं जटिल प्रकार के मामलों में महत्वपूर्ण निर्णय लेने में वृद्धों का मत नहीं लिया जाता क्योंकि वे आधुनिक तौर–तरीकों से सामान्यतः अपरिचित एवं अनभिज्ञ रहते हैं तथा अन्तर सन्ततीय अन्तराल अथवा संततीय वैचारिक मतभेद की सम्भावना के कारण अधिकांश वृद्ध

या वृद्धाएँ पारिवारिक जटिल सन्दर्भो से अपने को उदासीन रखकर जीवन के अन्तिम काल को शान्तिपूर्वक व्यतीत करना ही उपयोगी मानते हैं। शोधकार्य के दौरान साठोत्तर वृद्धों से इस विषय में उनकी मानसिकता को जानने का प्रयास किया गया। इस सन्दर्भ में उन्होंने जो विचार व्यक्त किये उन्हें तालिका संख्या 4.7 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.७

पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में साठोत्तर वृद्धों के स्थान की स्थिति का विवरण

क्र.सं.	निर्णय प्रक्रिया में स्थान	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	निर्णय लेने में उच्च स्थान	257	86
2	निर्णय लेने में कोई स्थान नहीं	43	14
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि 86 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में उन्हें महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। जबकि 14 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि परिवार सम्बन्धित किसी भी महत्वपूर्ण मामले के निर्णय में उन्हें कोई भी स्थान नहीं मिलता है।

अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों का पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में उच्च स्थान है जो परम्परागत मान्यताओं को प्रतिविम्वित करता है।

(३) पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में उच्च स्थान रखने हेतु साठोत्तर वृद्धों के द्वारा प्रयुक्त तकनीकें :

प्रयुक्त शोधकार्य करते समय यह जिज्ञासा भी उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था कि उन तकनीकों को भी जानना चाहिए जिनके प्रयोग से प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध पारिवारिक निर्णय लेने की प्रक्रिया में अपना उच्च स्थान बनाये रखते हैं। इस सन्दर्भ में साठोत्तर सूचनादाताओं से विनम्र आग्रह के साथ पूछा गया कि पारिवारिक मामलों में निर्णय लेने में आप किस प्रकार का दृष्टिकोण अपनाते है? इस हेतु उनके समक्ष तीन विकल्प भी प्रस्तुत कर किसी एक. विकल्प पर उनके विचार मालूम किये गये तथा प्राप्त तथ्यों को विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 4.8 में प्रस्तुत किया गया।

तालिका संख्या- ४.८

परिवार निर्णयों में उच्च स्थान बनाये रखने हेतु प्रयुक्त तकनीकें

क्र.सं.	वृद्धों द्वारा प्रयुक्त तकनीकें	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	परम्परागत मूल्यों से हटकर निर्णय लेने की अनुमति प्रदान करते हैं।	28	11
2	परम्परागत मूल्यों से हटकर निर्णय लेने की अनुमति प्रदान नहीं करते हैं।	44	17
3	परिस्थिति के अनुसार निर्णय लेने की अनुमति प्रदान करते है।	185	72
	योग	**300**	**100**

तालिका में प्रदर्शित तथ्यों से स्पष्ट होता है कि 11 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध पारिवारिक सदस्यों को परम्परागत मूल्यों के हटकर निर्णय लेने की अनुमति प्रदान कर देते है जो लचीले दृष्टिकोण का परिचायक है जबकि 17 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध परम्परागत मूल्यों एवं परम्परागत्ता के आधार पर ही निर्णय लेने की अनुमति प्रदान करते हैं तथ 73 प्रतिशत (सर्वाधिक) साठोत्तर वृद्ध पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में अपनी उच्च प्रस्थिति सदैव बनाये रखने की दृष्टि से मध्य मार्ग को अपनाकर परिस्थिति के अनुसार निर्णय लेने की अनुमति प्रदान करते हैं। अर्थात् जब जैसी परिस्थिति हो वैसा ही निर्णय ले लिया जाए अतः मध्यमार्गी होकर निर्णय लेना उपयोगी एवं हितकर होता है।

अतः निष्कर्ष के रूप में यह माना जा सकता है कि पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाये रखने के लिए साठोत्तर वृद्ध परिस्थिति विशेष के अनुसार मध्य मार्ग को अपनाकर निर्णय लेते है जो कि अधिक व्यावहारिक प्रतीत होता है।

(४) साठोत्तर वृद्धों की दृष्टि में पारिवारिक निर्णय लेने वाला श्रेष्ठ व्यक्ति :

वर्तमान परिवर्तित एवं भौतिकवादी जटिल पारिवारिक परिवेश में क्या वृद्ध ही श्रेष्ठ निर्णायक सिद्ध होते हैं? इस सन्दर्भ में साठोत्तर वृद्ध क्या विचार रखते हैं? यह जानने के लिए उनके समक्ष चार प्रमुख विकल्पों के आधार पर तथ्य एकत्र किये गये जिन्हें वर्गीकृत करके तालिका संख्या 4.9 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.९

साठोत्तर वृद्धों की दृष्टि में पारिवारिक निर्णय लेने वाले श्रेष्ठ व्यक्ति का विवरण

क्र.सं.	श्रेष्ठ निर्णायक	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	मुखिया के रूप में पिता	38	13
2	पिता एवं माता	77	26
3	पिता की अनुपस्थिति में माता	13	04
4	समस्त पारिवारिक सदस्य	172	57
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 13 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं परिवार में पिता की परम्परागत अधिसत्ता सदैव बनी रहनी चाहिए क्योंकि वह सन्तानों की अपेक्षा अधिक अनुभवी होते हैं। तथा परिवार के मामलों में निर्णय लेने का अधिकार उन्हीं का है; 26 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि परिवार के महत्वपूर्ण मामलों में माता-पिता दोनों के द्वारा सहमति के आधार पर लिए गए निर्णय ही श्रेष्ठ होते है तथा उनका (पिता) का यह भी मानना था कि पिता के साथ-साथ माता की भावना एवं सहमति पारिवारकि सद्‌भावना को जन्म देती है। अधिक 57 प्रतिशत सूचनादाता यह स्पष्ट करते है कि समस्त पारिवारिक सदस्यों को मिल-जुलकर आपसी सहमति के आधार पर ही निर्णय लेने चाहिए इससे सभी पारिवारिक सदस्यों को सन्तुति मिलती है। तथा पारिवारिक एकता, दृढ्ता, संगठ्न आदि को बल मिलता है जबकि 4 प्रतिशत सूचनादाताओं में पिता की अनुपस्थिति में माता ही पारिवारिक निर्णय लेती है।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि साठोत्तर वृद्धों की दृष्टि में पारिवारिक निर्णय लेने वाले श्रेष्ठ व्यक्ति समस्त पारिवारिक सदस्य (समूह) ही है।

(५) साठोत्तर वृद्धों के अनुसार परिवार के बच्चों के श्रेष्ठ हित में निर्णायक की कुशल भूमिका निभाने वाला व्यक्ति :

सामान्यतः परिवार में बच्चों की देखभाल का पूर्ण उत्तरदायित्व उनकी माता पर ही निर्भर करता है परन्तु माता की सीमा लालन-पालन तक ही सीमित होती

है तथा वह एक कुशल गृहणी के रूप में पूरे दिन घर गृहस्थी के कार्यों में ही व्यतीत कर देती है इसके साथ-साथ परिवार के साठोत्तर वृद्ध भी शारीरिक रूप से क्षीण हो जाने के कारण घर के कार्यों के पूर्ण निष्पादन में अपने को असमर्थ पाते हैं अतः ऐसी स्थिति में वह घर के छोटे बच्चों की ही देखरेख कर पाते हैं। परन्तु बच्चों की शिक्षा-दीक्षा तथा उनके भविष्य के विषय में महत्वपूर्ण निर्णय साठोत्तर वृद्धों को ही संयुक्त रूप से करने पड़ते हैं क्योंकि पुरुष वर्ग बाहरी दुनियाँ से अधिक सम्पर्क में रहता है अतः इस कारण उनका उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। इस तरह यह जानना अत्यावश्यक है कि बच्चों के श्रेष्ठ हित में निर्णायक की कुशल भूमिका निभाने वाला व्यक्ति कौन होना चाहिए। इस सन्दर्भ में साठोत्तर वृद्धों ने जो विचार प्रस्तुत किये उन्हें एकत्र कर तालिका संख्या 4.10 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१०

बच्चों के श्रेष्ठ हित में निर्णायक व्यक्ति का विवरण

क्र.सं.	श्रेष्ठ निर्णायक व्यक्ति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	परिवार का वृद्ध पुरुष	11	04
2	परिवार के वृद्ध पुरुष एवं स्त्री	41	14
3	परिवार के विवाहित एवं अविवाहित बच्चे	106	35
4	परिवार के अविवाहित बच्चे	18	06
5	समस्त पारिवारिक सदस्य	124	41
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि केवल 4 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध का यह मानना है कि परिवार में बच्चों के श्रेष्ठ हित में निर्णय लेने का अधिकार केवल वृद्ध पुरुष या स्त्री को ही है; जबकि 14 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि बच्चों के हित में श्रेष्ठ निर्णय लेने का अधिकार केवल वृद्ध माता एवं पिता को ही है; 35 प्रतिशत सूचनादाता यह व्यक्त करते हैं कि परिवार के विवाहित एवं अविवाहित सन्तानें ही श्रेष्ठ निर्णय लेने में सर्वश्रेष्ठ निर्णायक होते हैं जबकि 6 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना है कि केवल अविवाहित बच्चे ही

श्रेष्ठ निर्णय लेने में सक्षम होते हैं; 41 प्रतिशत सूचनादाताओं का यह मत है कि समस्त पारिवारिक सदस्य सामूहिक रूप से सर्वश्रेष्ठ निर्णायक होने चाहिए जिससे परिवार की एकता एवं अखण्डता बनी रहती है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि परिवार के बच्चों के श्रेष्ठ हित में वृद्धों की अपेक्षा वे पारिवारिक सदस्य, जिनके विषय में निर्णय देना हो तथा वे बच्चे जिनके विषय में निर्णय हो, वे दोनों ही श्रेष्ठ निर्णायक व्यक्ति हो सकते हैं यदि इन दोनों पक्षों द्वारा पारिवारिक स्तर पर सामूहिक रूप से निर्णय हो तो अधिक व्यवहारिक सिद्ध हो सकता है।

(६) साठोत्तर वृद्धों द्वारा लिये गये निर्णयों के प्रति पारिवारिक सदस्यों की प्रतिक्रिया की स्थिति :

भारतीय समाज एवं संस्कृति का परम्परागत स्वरूप इस तथ्य पर बल देता है कि वृद्धों द्वारा लिये गये निर्णयों को शेष सभी पारिवारिक सदस्यों द्वारा स्वीकार किया जाना पारिवारिक प्रतिष्ठा, एकता, सुख एवं समृद्धि हेतु उपयोगी होता है। वर्तमान आधुनिक समय में इस मान्यता का परीक्षण करने के लिए प्रतिचयित सूचनादाताओं से उनके विचार जानने का प्रयास किया गया तथा उनसे प्राप्त विचारों को पाँच विकल्प श्रेणियों में वर्गीकृत करके तालिका संख्या 4.11 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.११

साठोत्तर वृद्धों के निर्णयों पर पारिवारिक सदस्यों की प्रतिक्रिया का विवरण

क्र.सं.	पारिवारिक सदस्यों की प्रक्रियाएँ	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पूर्णतः स्वीकार्य	57	19
2	आंशिक संशोधन के पश्चात् स्वीकार्य	161	53
3	कभी स्वीकार्य कभी अस्वीकार्य	48	16
4	कभी भी स्वीकार्य नहीं	26	09
5	ऐसा अवसर ही नहीं आता	08	03
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि 19 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि उनके द्वारा लिये गये निर्णयों को पारिवारिक सदस्य यथावत् स्वीकार कर लेते हैं यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इनमें वे महिलाएँ भी सम्मिलित हैं जो विधवा की स्थिति में अपने अविवाहित बच्चों के साथ रहती है अतः ऐसी स्थिति में उनके द्वारा लिये गये निर्णयों को अस्वीकार करने का प्रश्न ही नहीं उठता है। 16 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि उनके निर्णयों को कभी स्वीकार कर लिया जाता है कभी अस्वीकार कर दिया जाता है जबकि 53 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि उनके द्वारा लिये गये निर्णयों में यदा-कदा आंशिक संशोधन के उपरान्त पारिवारिक सदस्यों द्वारा स्वीकार्य कर लिया जाता है; 9 प्रतिशत सूचनादाताओं का कहना था कि उनके द्वारा लिये गये निर्णयों को पारिवारिक सदस्यों द्वारा कभी भी स्वीकार नहीं किया जाता तथा 3 प्रतिशत का मानना था कि उनके समक्ष ऐसे अवसर ही नहीं आते कि वे किसी पारिवारिक मामले में अपने निर्णय दे अतः उनके निर्णयों के स्वीकार्य और अस्वीकार्य होने का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि अनाथ की स्थिति में अपना जीवनयापन कर रहे हैं?

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों द्वारा लिये गये पारिवारिक निर्णयों को यथावत् स्वीकार न करके आधुनिक सन्दर्भो के अनुकूल पारिवारिक सदस्यों द्वारा उनमें यथा सम्भव आंशिक संशोधन करके स्वीकार कर लिया जाता है जिसमें अन्तिम स्वीकृति युवा पीढ़ी (नवीन सन्तति) के द्वारा ही होती है जो परम्परात्मक अधिसत्ता के परिवर्तन का द्योतक है।

<u>अधिसत्ता एवं प्रभाव</u> :

साठोत्तर वृद्धों की पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभाव का मूल्यांकन उपरोक्त तालिकाओं द्वारा करने के उपरान्त यह जिज्ञासा भी उत्पन्न हुई कि अन्ततः साठोत्तर वृद्ध अपनी पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभाव के विषय में क्या विचार रखते हैं? इसी आशय से उनके समक्ष तीन महत्वपूर्ण विकल्प प्रस्तुत करके अपनी अधिसत्तात्मक स्थिति को अभिव्यक्त करने का अनुरोध किया गया तथा इस सन्दर्भ में उनसे प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 4.12 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१२

साठोत्तर वृद्धों के अनुसार उनकी पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभाव

क्र.सं.	अधिसत्ता एवं प्रभाव की स्थिति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सुदृढ़ अधिसत्ता एवं प्रभाव	165	55
2	कमजोर अधिसत्ता एवं प्रभाव	92	31
3	अधिसत्ता एवं प्रभावहीन स्थिति	43	14
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका से यह विदित होता है कि 55 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह विश्वास व्यक्त करते हैं कि उनके परिवार में उनकी मजबूत अधिसत्ता एवं प्रभाव है जो परम्परागत पारिवारिक अधिसत्ता के अस्तित्व एवं स्थायित्व का प्रतीक है। इसके विपरीत 31 प्रतिशत ऐसे साठोत्तर वृद्ध हैं जो यह स्वीकार करते हैं कि आधुनिक जटिल परिवेश में उनकी पारिवारिक अधिसत्ता एवं उसके प्रभाव अपेक्षाकृत कमजोर हैं; जबकि शेष 14 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का यह मानना है कि परिवार में उनकी स्थिति सत्ताहीन तथा प्रभावहीन जैसी है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश 55 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों के अनुसार परिवार में उनकी पूर्ण अधिसत्ता एवं प्रभाव है जबकि 45 प्रतिशत इसके विपरीत अपनी स्थिति को दर्शाते हैं।

खाली समय एवं मनोरंजन के क्षणों के कार्यकलाप :

कोई भी व्यक्ति व्यस्तता के पश्चात् जब किसी काम के बैठता है तब उसे खाली समय की संज्ञा के नाम से पुकारा जाता है; बिना किसी दैनिक कार्य के वह अपने खाली समय का आनन्द उठाता है। इस विषय में **एण्डरसन**[7] का मानना है कि सामान्यतः व्यक्ति समय का विक्रय इसलिए करते हैं जिससे वे अधिक से अधिक धन का अर्जन कर सकें तथा आवश्यकतानुसार वस्तुओं को खरीद रखें। इस प्रकार बिक्री किये हुए समय के अन्तर्गत जो कुछ भी किया जाता है वही काम (जॉव) कहलाता है। इसके विपरीत जब व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत समय की बिक्री नहीं करता तब उसे स्वतन्त्र समय या खाली समय कहा जाता है अतः ऐसे समय को विश्राम-क्षण की संज्ञा दी जाती है। इस खाली समय में वैयक्तिक

विशेषताएँ, पारिवारिक पृष्ठभूमि, आयु, वैवाहिक प्रस्थिति, लिंग, सामाजिक वर्ग आदि अनेक ऐसे कारक हैं जो व्यक्ति के विश्राम–क्षणों का सही–सही मूल्यांकन करने में सहायक बनते हैं। कुछ व्यक्ति अन्तर्मुखी व्यक्तित्व वाले एवं कुछ व्यक्ति बर्हिमुखी व्यक्तित्व वाले होते हैं जिससे उनकी खाली समय की समस्त क्रियाएँ भी अलग–अलग प्रकृति की हो सकती हैं। प्रायः साठोत्तर वृद्ध व्यक्ति अपने खाली समय का सद्उपयोग धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्रिया–कलापों में भाग लेकर लिख–पढ़कर, किसी क्लब अथवा राजनैतिक गैर राजनैतिक संगठ्नों, परिषदों की गतिविधियों में भाग लेकर, छोटे–छोटे बच्चों की देखभाल करके, गृहस्थी के अनेक मनपसन्द कार्यो को करके या उनमें दिशा–निर्देश देकर, ज्योतिष, हस्तरेखा, परिंदों की देखभाल, बागवानी, संगीत, कला आदि का आनन्द लेकर करते हैं। इस प्रकार प्रतिचयित वृद्धों में महिलाओं द्वारा भी खाली समय के अनेक कार्य जैसे स्वेटर बुनना, अचार, पापड़ आदि का निर्माण करना गृह कार्य (गृहस्थी) के संचालन का ज्ञान देना आदि करके व्यतीत करते हैं। अतः प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों द्वारा खाली समय में की जाने वाली क्रियाओं को जानने का प्रयास किया गया तथा उनसे प्राप्त तथ्यों को विश्लेषण योग्य बनाने के लिए तालिका संख्या 4.13 में प्रस्तुत किया गया।

तालिका संख्या- ४.१३

साठोत्तर वृद्धों के खाली समय एवं मनोरंजन के क्षणों का विवरण

क्र.सं.	खाली समय एवं मनोरंजन के क्षणों का विवरण	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पुस्तकें पढ़कर	60	20
2	मित्रों के साथ समय व्यतीत करके	40	13
3	छोटे बच्चों को पढ़ा लिखाकर	90	30
4	प्रभु भजन	44	15
5	किसी विधा द्वारा मनोरंजन करके	32	11
6	पूर्ण विश्राम करके	34	11

नोट **– खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। सूचनादाता = 300**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 30

प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध खाली समय घर के छोटे बच्चों को पढ़ा लिखाकर व्यतीत करते हैं जबकि 20 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध पुस्तकें पढ़ने में अपना समय लगाते हैं। 15 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध स्त्री एवं पुरुष अपने विश्राम के क्षणों में ईश्वर की पूजा उपासना करते हैं; 11 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपने खाली समय में विभिन्न प्रकार के कार्य संगीत, बागवानी, पशु–पक्षियों की देखभाल, पेंटिंग अन्य कलाओं में व्यतीत करते हैं एवं शेष 11 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध विश्राम के क्षणों में पूर्णतः आराम करते हैं। अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अपने विश्राम के क्षणों में अधिकांशतः साठोत्तर वृद्ध कुछ न कुछ कार्य करके समय व्यतीत करते हैं।

परिवर्तित पारिवारिक परिदृश्य एवं वृद्ध :

परिवार का प्राचीनतम स्वरूप संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण से निरन्तर परिवर्तित होता जा रहा है। पारिवारिक सदस्यों के मध्य विशेषीकरण की स्थिति प्रभुत्वमूलक बनकर प्रस्थिति एवं भूमिका अर्थात् कर्त्तव्यों एवं अधिकारों की सनातन मान्यताओं को शिथिल करने लगी है अब परिवार में अधिसतात्मक प्रतिमान मात्र प्रभाव एवं संविदा के आधार पर लक्षित होने लगे हैं परिवार का यह निरन्तर परिवर्तनशील परिदृश्य साठोत्तर वृद्धों के समक्ष अनेक प्रकार की समस्याओं को जन्म दे रहा है। अतः प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से यह जानने का प्रयास किया गया कि वे परम्परागत मूल्यों से हटकर लिए जाने वाले निर्णयों के प्रति क्या दृष्टिकोण रखते हैं इस सन्दर्भ में उनसे प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 4.14 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१४

परम्परागत मूल्य व्यवस्था में होने वाले विचलन के प्रति साठोत्तर वृद्धों के विचार

क्र.सं.	वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	बिना शर्त मान्यता दे देते हैं	149	50
2	कुछ शर्तों के आधार पर मान्यता दे देते हैं	118	39
3	परम्परागत मूल्यों का उल्लंघन स्वीकार्य नहीं	33	11
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि 50 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध परम्परागत मूल्यों से हटकर किये जाने वाले व्यवहार को बिना किसी शर्त के मान्यता प्रदान कर देते हैं; 39 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध विशिष्ठ शर्तों के आधार पर मान्यता दे देते हैं जबकि 11 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध परम्परावादी एवं कट्टर अन्धविश्वासी है अतः वह किसी भी दशा में परम्परागत मूल्यों का उल्लंघन करने की अनुमति प्रदान नहीं करते हैं। निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अपना प्रभुत्व और अधिसत्ता बनाये रखने के लिए तथा शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए अधिकांश साठोत्तर वृद्ध परम्परावादी मूल्यों में होने वाले परिवर्तन को भी पारिवारिक स्तर पर स्वीकार कर लेते हैं।

गृहस्थी के दायित्वों के निष्पादन में वृद्धों की भूमिका :

मानव-प्रभु भारतीय समाज में परम्परानुसार परिवार के अनेक उत्तरदायित्वों का निष्पादन स्त्री-पुरुष (पति-पत्नी) दोनों को मिलकर करना होता है स्त्री गृहस्थी के कार्यो का तथा पुरुष घर के बाहर के समस्त कार्यो का संचालन करता है। जहाँ तक साठोत्तर वृद्धों का सम्बन्ध है घर-गृहस्थी इनकी आत्मा में बसती है। यदि गृहस्थी का संचालन परम्परानुसार तथा सुव्यवस्थित तरीके से सम्पादित होता रहता है तो इससे न केवल परिवार अपितु वृद्धों को सम्मानित माना जाता है परिवार की समृद्धि एवं सुख चाहने वाले यह साठोत्तर वृद्ध शारीरिक रूप से शिथिल होने के कारण परिवार के उत्तरदायित्व युवा पीढ़ी को स्थान्तरण करने के लिए विवश हो जाते हैं। सम्पन्न परिवारों में सेवकों (नौकर) द्वारा गृहस्थी के कार्यो का सम्पादन प्रतिष्ठा माना जाता है यद्यपि यह कभी-कभी घातक भी सिद्ध होता है। जिससे युवा रोगी, आलसी, पराश्रित तथा अनुभवहीन हो जीवन में अनेक कठिनाइयों का सामना करते हैं। सामान्यतः वृद्ध महिलाओं की गृहस्थी से विशेष लगाव होता है अतः वे घर में कुछ न कुछ कार्य अवश्य करती रहती है जिससे गृहस्थी पर उनका नियन्त्रण रहता है तथा उनकी परम्परागत पारिवारिक मूल्य व्यवस्था भी बनी रहती है तथापि इन वृद्ध महिलाओं को इसी में सन्तोष मिलता रहता है कि उनकी देखभाल में उनके अनुसार ही गृहस्थी के कार्यो का निष्पादन हो रहा है यद्यपि यह स्थिति कभी-कभी भ्रामक हो जाती है क्योंकि कुछ युवा इन वृद्ध महिलाओं से छिपकर (गुमराह करके) कुछ कार्य सम्पन्न कर लेती हैं जिससे बाद में विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

अध्ययन के दौरान समस्त प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से यह जानने का प्रयास किया गया कि गृहस्थी के विविध दायित्वों का निर्वाहन करने में वे किस प्रकार की भूमिका निभाते हैं? इस सन्दर्भ में जो तथ्य एकत्र हुए उन्हें विश्लेषण योग्य बनाने के लिए तालिका संख्या 4.15 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१५

गृहस्थी के सम्पादन में साठोत्तर वृद्धों की भूमिका का विवरण

क्र.सं.	गृहस्थी के उत्तरदायित्व	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	भोजन सम्बन्धी उत्तरदायित्व	87	29
2	स्वच्छता सम्बन्धी उत्तरदायित्व	42	14
3	शिशुओं की देखभाल सम्बन्धी उत्तरदायित्व	37	12
4	गृहस्थी के रख-रखाव सम्बन्धी उत्तरदायित्व	72	24
5	युवा पीढ़ी को प्रशिक्षित करने सम्बन्धी उत्तरदायित्व	62	21

नोट - खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। सूचनादाता = 300

प्रतिचयित सूचनादाताओं में 29 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों में अधिक वृद्ध महिलाएँ भोजन सम्बन्धी उत्तरदायित्वों का निर्वहन करती हैं तथा 14 प्रतिशत वृद्ध स्वच्छता सम्बन्धी कार्यों में अपना योगदान देते हैं यद्यपि अधिकांश परिवारों में यह कार्य नौकरों के द्वारा कराया जाता है। 12 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों में से अधिकांश महिलएँ घर में उपस्थित छोटे बच्चों की देखभाल सम्बन्धी उत्तरदायित्व निभाती है इसके अतिरिक्त उन बच्चों को पढ़ना लिखना सिखाना, साथ घूमना, खेलना तथा उनके अन्य कार्यो को करने में साठोत्तर वृद्ध भी योगदान करते हैं इन शिशुओं से जो इनके नाती-नातिन होते हैं से भावनात्मक लगाव होता है और यह बच्चे भी बड़े होकर यह प्रयास करते हैं कि वृद्धों को कोई कष्ट न हो। 24 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यथाशक्ति गृहस्थी के रख-रखाव सम्बन्धी कार्यो का निष्पादन करते हैं। यह माना जाता है कि महिलायें ही गृहस्थी का कुशल संचालन करके वस्तुओं का संग्रह, वितरण एवं उपयोग सम्बन्धी योजनाओं को मूर्ति रूप देती है। उनके

उचित रख-रखाव में परिवार अप्रतिष्ठा का कारण बन जाता है वृद्ध पुरुष भी घर के रखाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं तथा पारिवारिक सदस्यों के क्रिया-कलापों की देखरेख (मानिटरिंग) करते रहते हैं। जबकि 21 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध युवा पीढ़ी को प्रशिक्षित करने सम्बन्धी अपने उत्तरदायित्वों को निभाते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध गृहस्थी के रख-रखाव, स्वच्छता-सफाई, युवा पीढ़ी को प्रशिक्षित करने में तथा भोजन सम्बन्धी दायित्वों का निर्वाहन करते हैं।

नाते-रिश्तेदारों के सह सम्बन्धों की स्थिति :

भारतीय जीवन शैली की यह सनातन मान्यता रही है कि प्रत्येक व्यक्ति के सम्बन्ध उसके नाते-रिश्तेदारों से निरन्तर एवं सदैव स्वस्थ्य बने रहे इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति से विशिष्ट कर्त्तव्य की अपेक्षा भी की जाती है। वृद्धावस्था मूलतः पराधीनता की स्थिति होती है क्योंकि आयु के बढ़ने के साथ-साथ अंग भी शिथिल होने लगते हैं जिस कारण वे अपने इष्ट मित्रों, नाते-रिश्तेदारों से स्वस्थ सम्बन्ध बनाये रखना अत्यन्त कठिन हो जाता है। इसके साथ-साथ नगरीकरण एवं औद्योगीकरण ने व्यक्तियों को घर-परिवार छोड़कर अन्यत्र नौकरी करने के सुअवसर भी प्रदत्त किये हैं। परिणामतः घर के कुछ सदस्य सुदूर जाकर बस जाते हैं जिनसे सम्पर्क रखना एक समस्या बन जाती है। इस सन्दर्भ में प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से उनकी स्थिति जानने का प्रयास किया गया तथा प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 4.16 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१६

साठोत्तर वृद्धों के नाते-रिश्तेदारों से सम्पर्क की स्थिति का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	नाते-रिश्तेदारों से निरन्तर सम्बन्ध बना रहता है।	246	82
2	नाते-रिश्तेदारों से सम्बन्ध समाप्त प्रायः हो गये हैं।	54	18
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि 82 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने यह स्वीकार किया कि अभी भी उनके नाते-रिश्तेदारों के साथ सम्बन्ध मधुर बने हुए हैं जबकि 17 प्रतिशत वृद्ध सूचनादाता इसके प्रतिपक्ष में अपने विचार प्रस्तुत करते हैं।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपने नाते-रिश्तेदारों से निरन्तर सम्पर्क में रहते हैं तथा उनके सम्बन्ध मधुर हैं जबकि शेष साठोत्तर वृद्धों के अपने नाते-रिश्तेदारों के साथ मधुर सम्बन्ध नहीं हैं। साठोत्तर वृद्धों द्वारा उनके नाते-रिश्तेदारों के साथ निरन्तर सह-सम्बन्ध बने रहने की स्थिति स्पष्ट हो जाने के उपरान्त यह जानने की इच्छा हुई कि इनके सम्पर्क बनाने के तरीके कौन-कौन से हैं? इस विषय में प्रतिचयित सूचनादाताओं से जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें तालिका संख्या 4.17 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१७

साठोत्तर वृद्धों के नाते-रिश्तेदारों से सह-सम्बन्ध बनाये रखने की तकनीकों का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों की तकनीकें	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	दूसरों के द्वारा उनसे सम्पर्क में रहकर	54	18
2	आवश्यकतानुसार या विभिन्न अवसरों पर सहायता करना	34	11
3	विभिन्न पारिवारिक एवं वैवाहिक समस्याओं में परामर्श लेकर	75	25
4	एक-दूसरे से यथा समय मिलकर	69	23
5	उत्सव एवं त्यौहारों पर नियमित रूप से आमंत्रित करे	68	23
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 25 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध विभिन्न पारिवारिक एवं वैवाहिक समस्याओं में परामर्श लेकर नाते-रिश्तेदारों से निरन्तर सम्बन्ध बनाये हुए हैं; 23 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध एक-दूसरे के यहाँ घर; 18 प्रतिशत सूचनादाता दूसरों के द्वारा सम्पर्क में रहकर; 23 प्रतिशत उत्सव

एवं त्यौहारों पर नाते-रिश्तेदारों को आमंत्रित करके तथा शेष 11 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध आवश्यकतानुसार या विभिन्न अवसरों पर एक-दूसरे नाते-रिश्तेदारों की सहायता करके अपने सम्बन्धों को निरन्तर बनाये हुए हैं।

अन्तः सन्ततीय सम्बन्धों की प्रकृति :

प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के अन्तः सन्ततीय सम्बन्धों का ज्ञान करने के लिए उनके उस प्रभाव की प्रकृति का जानना आवश्यक है जो वे अपनी परिस्थितियों एवं प्रकृति के अनुसार समस्त पारिवारिक सदस्यों के साथ सम्बन्ध रखते हैं। युवा पीढ़ी एवं शिशुओं के साथ साठोत्तर वृद्धों के सम्बन्धों की प्रकृति आपसी समझ, दृष्टिकोण एवं पारिवारिक सदस्यों में पायी जाने वाली अपेक्षाओं एवं आवश्यकताओं पर निर्भर करती है। परिवार में सन्तानें जैसे-जैसे बड़ी होती जाती हैं उनके जीवन स्तर सोच-विचार, कार्य करने की क्षमता, माता-पिता तथा अन्य पारिवारिक सदस्यों के साथ होने वाली अन्तः क्रियाओं व प्रतिक्रियाओं आदि के साथ-साथ साठोत्तर वृद्धों के साथ व्यवहार करने तथा उनसे सम्बन्ध बनाये रखने में विशिष्ट परिवर्तन आने लगते हैं। इसी प्रकार परिवार के वृद्ध एवं वृद्धाएँ परिवार के समस्त सदस्यों के साथ अन्तः क्रियाओं के परम्परागत स्वरूप को ठीक उसी प्रकार से बनाये रखने का प्रयास करते हैं जैसा कि वे पहले से करते चले आ रहे हैं जिससे परिवार के समस्त सदस्यों पर उनका पूर्ण नियन्त्रण, निर्देशन तथा प्रभाव स्थापित रहे अथवा वे अपनी समस्त अपेक्षाओं व अभिवृत्तियों, प्रवृत्तियों, स्वभाव, रुचियों आदि के शनैः शनैः यथोचित परिवर्तन करके समायोजित होने का प्रयास करते हैं। यह तथ्य सर्वविदित है कि स्वतन्त्रता के उपरान्त जन्म लेने वाली आधुनिक युवा पीढ़ी ने अधिकांश रूप से जाति, धर्म, सम्प्रदाय आदि के सम्बन्ध में परम्परागत मूल्य, मान्यताओं को जिन्हें वैधानिक रूप से भी निषिद्ध किया गया है, चुनौती दी है। उनका सामाजिक जीवन अन्य की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र तथा सुरक्षित प्रतीत होता है। इस प्रकार सामाजिक पक्षों में किये गये अनेक सुधारों एवं सामाजिक परिवर्तन की विविध प्रक्रियाओं के समन्वित प्रभाव से जिस नवीन समाज मूल्य व्यवस्था का सृजन हुआ है उसने देश की सामाजिक संरचना को अन्य की अपेक्षा लोचदार बना दिया है। इस विषय परिस्थितियों में यह आवश्यक है कि वृद्धों को कठोर सैद्धान्तिक दृष्टिकोण के स्थान

पर सामान्य व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए अन्यथा प्रत्येक स्थिति में स्वस्थ अन्तः सन्ततीय सम्बन्धों का अस्तित्व में बने रहना कठिन प्रतीत होता है।

(i) **परिवार में साठोत्तर वृद्धों के प्रभाव की स्थिति :**

अध्ययन के समय साठोत्तर वृद्धों तथा उनके पारिवारिक सदस्यों पर प्रभाव सम्बन्धी सन्दर्भ अधिक जटिल एवं रुचिकर मिला। भारतीय समाज में यह बिडम्बना है कि नारी के प्रभाव एवं प्रस्थिति को पतन की ओर ले जाने का प्रमुख श्रेय स्वंयं नारी वर्ग को ही है। सामान्यतः विवाह के उपरान्त नव विवाहिता जब ससुराल आती है तो उसके पदार्पण करने के उपरान्त ही सास एवं ननद की छिद्रान्वेषी प्रक्रियाएँ अस्तित्व पाने लगती है तथा नवागंतुक बहू को मिलने वाले स्नेह सम्मान एवं स्थान का मूल्यांकन प्रायः प्राप्त धनराशि एवं सामान (दहेज) की प्रकृति पर आधारित होता है। विवाह में दहेज लाने वाली बहू को दिखावटी स्नेह देकर एवं उसके अप्रासंगिक व्यवहार की भी प्रशंसा करके उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने माता-पिता से और अधिक धन या भौतिक वस्तुएँ (सामान) आदि लेकर आये परन्तु बहू द्वारा ऐसा न होने की स्थिति में यह समस्त प्रक्रिया परिवर्तित होने लगती है। अन्ततः यह स्थिति कुछ समय के पश्चात् विस्फोटक रूप धारण करने लगती है तथा परिवार के सदस्यों के लिए घातक सिद्ध हो जाती है कभी-कभी नवागंतुक बहू को अपना जीवन ही समाप्त करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त साठोत्तर वृद्धों में पुरुष वर्ग का व्यवहार भी प्रभावित होने लगता है तथा आपस में अमानवीय तिरस्कार, अपमानजनक तथा घृणास्पद स्थितियाँ निर्मित हो जाती हैं। अतः इस स्थिति को स्पष्ट करने के लिए प्रतिचयित सूचनादाताओं से यह जानने का प्रयास किया गया कि परिवार में प्रभाव किस स्तर का है? इस सन्दर्भ में प्राप्त तथ्यों को विश्लेषित करने के लिए तालिका संख्या 4.18 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१८

परिवार में साठोत्तर वृद्धों के प्रभाव के स्तर का विवरण

क्र.सं.	प्रभाव की स्थिति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पूर्ण प्रभाव रखते हैं।	210	70
2	पूर्ण प्रभाव नहीं रखते हैं।	90	30
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका के अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 70 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध की संख्या यह स्पष्ट करती है कि परिवार में उनका पूर्ण प्रभाव है; 30 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का यह मानना है कि उनका अपने पारिवारिक सदस्यों के ऊपर पूर्ण प्रभाव नहीं है।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों का अपने परिवार पर पूर्ण नियंत्रण है।

(ii) परिवार में निरन्तर प्रभाव बनाये रखने हेतु उत्तरदायी कारक :

पूर्व अध्ययन में जिन प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों ने यह स्पष्ट किया कि परिवार में उनका पूर्ण प्रभाव प्रत्येक स्थिति में सदैव बना रहता है अतः उनसे यह जानने का प्रयास किया गया कि उनके प्रभाव के लिए उत्तरदायी कारण क्या है? इस सन्दर्भ में साठोत्तर वृद्धों के समक्ष कुछ प्रमुख विकल्प भी प्रस्तुत किये गये और अनुरोध किया गया कि इन विकल्पों के आधार पर वह अपने उत्तर की पुष्टि करें। अतः साठोत्तर वृद्धों द्वारा किये गये तथ्यों को एकत्र कर विश्लेषण के उद्देश्य से तालिका संख्या 4.19 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ४.१९

परिवार में निरन्तर प्रभाव हेतु उत्तरदायी कारणों का विवरण

क्र.सं.	प्रभाव हेतु कारण	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सभी पारिवारिक सदस्यों के साथ समान व्यवहार करना।	95	45
2	वृद्धों के आदर्श जीवन की छाप होना।	38	18
3	किसी के मार्ग में बाधक न बनना	47	23
4	कुशल नियन्त्रण एवं निर्देशन का प्रभाव	30	14

नोट **– खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। (साठोत्तर वृद्ध = 210)**

उपरोक्त तालिका अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 45 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि यदि पारिवारिक सदस्यों के साथ पक्षपात रहित होकर सभी के साथ समानता के मध्य सामान्जस्य बना रहता है; 23 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का कहना था कि वह किसी भी सदस्य के कार्यो के मध्य बाधक नहीं बनते अर्थात् सामान्य परिस्थिति में किसी के व्यवहार या क्रिया पद्धति पर वह अनावश्यक टीका-टिप्पणी नहीं करते; 18 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि उनका जीवन निःस्वार्थ, एवं आदर्श प्रकृति का रहा है जिसका प्रभाव उनके पारिवारिक सदस्यों पर पड़ा है जिस कारण परिवार के समस्त सदस्य स्वतः ही उनके निर्देशों का पालन करते रहते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि सभी के साथ समानता का व्यवहार करना, किसी के मार्ग में बाधक न बनना स्वयं आदर्श व्यक्तित्व रखना एवं कुशल नियंत्रण व निर्देशन ही वे कारण हैं जिससे वृद्धों का परिवार में पूर्ण प्रभाव रहता है।

(iii) परिवार में प्रभावहीन होने के कारण :

परिवार में प्रभाव बनाये रखने के कारणों को जानने के उपरान्त यह जाने की जिज्ञासा भी हुई कि ऐसे क्या कारण हैं जिससे साठोत्तर वृद्धों का प्रभाव पारिवारिक सदस्यों पर नहीं पड़ता है। इस सन्दर्भ में प्रतिचयित सूचनादाताओं ने जो कारण स्पष्ट किये उन्हें तालिका संख्या 4.20 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.२०

परिवार में प्रभाव न होने के कारणों का विवरण

क्र.सं.	परिवार में प्रभाव न होने के कारण	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सदस्यों के साथ पक्षपातपूर्ण व्यवहार करना।	35	39
2	लचीला दृष्टिकोण न होना।	25	28
3	शारीरिक दुर्बलता एवं असमर्थता के कारण परिवार पर बोझ होना।	19	21
4	कठोर नियन्त्रण व निर्देशन का प्रयास करना।	11	12

नोट - खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं हो सकता। (साठोत्तर वृद्ध = 90)

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 39 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का व्यवहार पारिवारिक सदस्यों के साथ पक्षपातपूर्ण हो ही जाता है क्योंकि वह अपनी आदतों के प्रभाव में रहते हैं। इस कारण पारिवारिक सदस्य इनके प्रति अविश्वास रखते हैं। 28 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का व्यवहार तथा दृष्टिकोण लचीला न होने के कारण पारिवारिक सदस्य उनसे प्रभावित नहीं होते जबकि 21 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध शारीरिक दुर्बलता एवं असमर्थता के कारण प्रभावहीन हो जाते हैं; 12 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का परम्परागत कठोर नियंत्रण एवं निर्देशन लचीलेपन को प्रभावित करता है जिससे उनका प्रभाव पारिवारिक सदस्यों पर नहीं पड़ता है।

अतः निष्कर्षो के आधार पर कहा जा सकता है कि पारिवारिक सदस्यों के साथ पक्षपातपूर्ण व्यवहार करना लचीला दृष्टिकोण न होना, शारीरिक असमर्थता के कारण परिवार का बोझ होना, कठोर नियंत्रण एवं निर्देशन का प्रयास करना ही वे मूल कारण हैं जिनके परिणामस्वरूप वृद्ध परिवार में प्रभावहीन प्रतीत होते हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

(1) **आर. पी. देसाई (1964)** : सम आस्पेक्ट्स ऑफ फैमिली इन महुवा, एशिया पब्लिशिंग हाऊस, बम्बई।

(2) **योगेन्द्र सिंह (1973)** : मॉर्डनाइजेशन ऑफ इण्डियन ट्रेडीशन थामसन प्रेस, नई दिल्ली।

(3) **एम. एस. गोरे (1968)** : अरबनाइजेशन एण्ड फैमिली चेन्ज, पापुलर प्रकाशन, बम्बई।

(4) **डी. एलीन रास (1961)** : द हिन्दू फैमिली इन इट्स अरबन सेटिंग ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, टोरण्टो।

(5) **मैक्स बेबर (1947)** : द थ्योरी ऑफ सोशल एण्ड इकोनामिक आर्गनाइजेशन ट्रान्सलेटेड बाई हेण्डरसन एण्ड पारसन्स द फ्री प्रेस ग्लेन्को।

(6) **ए. शिल्स एडवार्ड (1984)** : अथारिटी : लेजिटिमेशन ऑफ अथारिटी इन ए निड डिक्शनरी ऑफ द सोशल साइन्सेस सम्पादक जी डन्केन मिशेल रट्लेज एण्ड केगन पाल, लन्दन।

(7) **नेल्स एण्डरसन (1961)** : वर्क एण्ड लीजर रट्लेज एण्ड कगनपाल, लन्दन।

अध्याय-५

वृद्धों की आर्थिक दशायें

वस्तुतः वृद्धावस्था एवं आर्थिक स्थिति के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध होता है यूँ तो धन का महत्व प्रत्येक मनुष्य के लिए जीवन की प्रत्येक दशा एवं क्षण में सदैव बना रहता है परन्तु वृद्धावस्था में इसका महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। जीवन के द्वितीय चरण (प्रौढ़ावस्था) तक कोई भी व्यक्ति धन अर्जित करने का साहस रखता है परन्तु वृद्धावस्था में शारीरिक शिथिलता तथा आयु के निरन्तर बढ़ने के कारण पराश्रयता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। सामान्यतः यह भी दृष्टिगत होता है। कि वृद्धावस्था जो व्यक्ति आर्थिक रूप से सुदृढ़ होते हैं वे दिपन्नावस्था के वृद्धों की अपेक्षा अधिक प्रसन्न तथा खुशहाल दिखायी देते है तथा पारिवारिक स्तर पर उनका समायोजन भी स्वस्थ प्रकृति का होता है। जिससे उनका आत्मविश्वास एवं मनोबल सदैव प्रबल बना रहता है। साठोत्तर वृद्धों की आर्थिक दशाओं एवं वृद्धावस्था का मूल्याकंन करने हेतु प्रस्तुत अध्ययन में कुछ प्रमुख पक्षों का निर्धारण करके उनका विश्लेषण किया गया है। जैसे साठोत्तर वृद्धों के पारिवारिक उत्तरदायित्व, उनकी आर्थिक पराश्रयता; उनकी आकांक्षाऐ एवं प्रतिपूर्ति, आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की न्यूनता, अधिसत्तात्मक मनोवृत्तियाँ तथा प्रवृत्तियाँ तथा वृद्धावस्था के अनुभव एवं बोधगम्यता। इन्हीं पक्षों पर प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों ने तथा प्रस्तुत किये जिन्हें विभिन्न तालिकाओं में प्रस्तुत करके विश्लेषित किया गया है।

वृद्धों की आर्थिक स्थिति :

साठोत्तर वृद्धों की आर्थिक स्थिति का उल्लेख तृतीय अध्याय में किया गया है तथापि अपनी आर्थिक दशा के विषय में साठोत्तर वृद्ध कैसा अनुभव करते है यह जानना भी प्रासंगिक है अतः इस सन्दर्भ में बोगार्डस के तीन बिन्दु पैमाने के आधार पर साठोत्तर वृद्धों के विचार प्राप्त करके उन्हें तालिका संख्या 5.1 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ५.१

आर्थिक स्थिति के विषय में साठोत्तर वृद्धों की मानसिंकता का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों की आर्थिक स्थिति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी	42	14
2	आर्थिक स्थिति बहुत खराब	51	17
3	आर्थिक स्थिति सामान्य	207	69
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 69 साठोत्तर वृद्ध अपनी आर्थिक स्थिति को सामान्य प्रकृति का मानते है; 17 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों की स्थिति विपन्न दिखायी देती है। जबकि 14 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध ही अपने को आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ मानते है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध आर्थिक दृष्टि से सामान्य प्रतीत होते हैं।

वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्ध में वृद्धों की स्थिति :

धन सम्पदा को एक ऐसी धुरी के रूप में माना जाता है। जिसके अभाव में अनेक समस्याओं का जन्म हो जाता है। अतः किसी भी परिवार का वातावरण स्वयं परिवार की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। यदि परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है तो समस्त पारिवारिक सदस्यों की आवश्यकताएँ एवं इच्छाएँ सरलतापूर्वक पूर्ण होती रहती है। जिससे पारिवारिक सदस्यों के मध्य स्वस्थ सम्बन्ध अस्तित्व पाते रहते है। इसके विपरीत विपन्नता प्रायः अस्वस्थ पारिवारिक वातावरण एवं सम्बन्धों का आधार एवं कारण मानी जाती है। वर्तमान में व्यक्तिवादी और भौतिकवादी युग में धन एवं सम्पत्ति का महत्व निरन्तर बढ़ता जा रहा है। जिससे पारिवारिक स्तर पर वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्धन का कार्य भी साथ ही साथ जटिल होता जाता है।

परम्परागत भारतीय संयुक्त परिवार व्यवस्था में समस्त वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्धन का दायित्व परिवार के वृद्ध पुरुष (मुखिया) पर केन्द्रित होता था क्योंकि पितृ सत्तात्मक परिवार व्यवस्था के कारण परिवार की पैतृक सम्पत्ति का वही

उत्तराधिकारी होता था और धर्नाजन की मुख्य भूमिका भी वही निभाता था। वित्तीय नियन्त्रण प्रबन्धन तथा धर्नाजन करना ही पारिवारिक मुखिया का प्रमुख कर्तव्य होता था। यह उत्तरदायित्व वह अपनी पत्नी की सहायता से सफलतापूर्वक वहन करता है। सामान्यतः गृहस्थी के संचालन का दायित्व गृहणियों पर ही निर्भर करता है अतः इस आशा में वृद्धा भी पारिवारिक वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्ध में अभी अहं भूमिका का निर्वाह करती रही है। वह परिवार की कनिष्ठ महिलाओं बहू-बेटियों सन्तानों आदि की इच्छाओं के अनुरूप तथा आवश्यकतानुसार यथा शक्ति उन्हें सन्तुष्ट रखने का प्रयास करती है वास्तव में साठोत्तर वृद्ध परिवार की वह कड़ी है जो उनके अतिरिक्त सभी पारिवारिक सदस्यों के मध्य सम्प्रेषण का कार्य करती है। और वितीय नियन्त्रण एवं प्रबन्धन की प्रक्रिया को गति प्रदान करते हुए पारिवारिक सदस्यों के मध्य संगठन, एकता, सामान्जस्य की स्थिति को बनाये रखने का कार्य सम्पादित करती है। जिससे परिवार में उनका प्रभाव एवं अधिसत्ता बनी रहती है।

इसी स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से यह जानने का प्रयास किया गया कि परिवार के वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्धन में साठोत्तर वृद्धों की क्या स्थिति है? इस सन्दर्भ में जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें एकत्र करके विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 5.2 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ५.२

पारिवारिक वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्धन का विवरण

क्र.सं.	वित्तीय प्रबन्धक एवं नियंत्रक	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	परिवार का वृद्ध व्यक्ति (पुरुष)	38	13
2	परिवार की वृद्ध महिला	20	07
3	परिवार के वृद्ध पुरुष एवं महिला	40	13
4	विवाहित सन्तानें एवं उनकी पत्नियाँ	177	59
5	समस्त पारिवारिक सदस्य	25	08
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 13 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों की स्थिति यह स्पष्ट करती है कि उनके परिवार का वित्तीय प्रबन्धन

एवं नियन्त्रण उनके द्वारा किया जाता है। जबकि 7 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धाएँ ही स्वयं को वित्तीय प्रबन्धक एवं नियंत्रक मानती हैं। इसके साथ–साथ 13 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि परिवार का वित्तीय प्रबन्धन एवं नियन्त्रण वृद्ध एवं वृद्धा (पति–पत्नी) दोनों के द्वारा किया जाता है; 59 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि परिवार का वित्तीय प्रबन्धन एवं नियंत्रण उनकी विवाहित सन्तानों द्वारा किया जाता है। जबकि केवल 8 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि उनके परिवार का वित्तीय प्रबन्धन एवं नियंत्रण समस्त पारिवारिक सदस्य आपसी सहयोग के साथ संयुक्त रूप से निर्वाहित करते हैं।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अधिकांश परिवारों में वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्धन का अधिकार विवाहित सदस्यों (युवा–पीढ़ी) को है जो परम्परागत अधिसत्ता के स्वरूप में होने वाले बदलाव का प्रतीक है।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि पारिवारिक स्तर पर वित्तीय प्रबन्धन एवं नियन्त्रण की स्थिति परिवार विशेष की संरचना एवं उसकी प्रकृति पर निर्भर करती है जिन 7 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने यह माना है कि यह अधिकार उनके पास सुरक्षित है इसका कारण यह है कि वे वैधव्य जीवन व्यतीत कर रही है तथा उनकी देखभाल पड़ोसी या उनके किसी दूर–दराज के नाते–रिश्तेदार या सम्बन्धी (शुभ चिन्तकों) के द्वारा की जा रही है। अतः इन परिस्थितियों में पारिवारिक वित्तीय प्रबन्धन एवं नियन्त्रण में उनका एकाधिकारिक है। इसके अतिरिक्त 13 प्रतिशत परिवारों में घर के वृद्ध व्यक्ति (मुखिया) को यह अधिकार प्राप्त है क्योंकि ऐसे परिवारों में पति–पत्नी (वृद्ध) ही रहते हैं या उनकी सन्तानें नहीं हैं या वह कहीं अन्यत्र निवास करते हैं। अतः यह अधिकार वृद्ध के पास सुरक्षित है। जिन 13 प्रतिशत परिवारों में यह अधिकार पति–पत्नी (वृद्ध दम्पत्ति) को प्राप्त है वहाँ या तो वे सम्मानित सदस्य है या उनकी सन्तानें अविवाहित है या उनके पास पैतृक सम्पत्ति सुरक्षित होते हुए उनकी मासिक नियमित आय भी है। जिन परिवारों की स्थिति संयुक्त परिवार जैसी है उनमें पारिवारिक वित्तीय नियन्त्रण एवं प्रबन्धन का दायित्व उन युवा विवाहित सदस्यों पर केन्द्रित है। जो धनार्जन प्रक्रिया के प्रमुख अंग हैं अतः वे अपनी आपके अनुसार ही व्यय आदि का निर्धारण करते हैं जो सम सामयिक एवं प्रासंगिक प्रतीत होती है।

प्रस्तुत अध्ययन के समय साठोत्तर वृद्धों से यह ज्ञात हुआ कि प्रायः परिवारों की वित्तीय प्रबन्धन एवं नियन्त्रण की तीन व्यवस्थाएँ हैं।

(1) धन अर्जित करने वाला व्यक्ति पारिवारिक सदस्यों एवं गृहस्थी के लिए आवश्यक भौतिक वस्तुओं की व्यवस्था स्वयं करता है तथा इसका निर्धारण वह अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार ही करता है।

(2) परिवार के समस्त सदस्य एक साथ बैठकर परिवार की आय को ध्यान में रखकर यथाशक्ति वित्तीय प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का सम्पादन करते हैं जिसमें पुरुषों, महिलाओं एवं सन्तानों की आवश्यकताओं एवं उनकी इच्छाओं की पूर्ति प्राथमिकतानुसार की जाती है।

(3) पुरुष वर्ग जागरूक महिलाओं को निश्चित मासिक धनराशि प्रदान करके गृहस्थी का सम्पूर्ण उन्हीं पर आधारित करके स्वतन्त्र रूप से अपने व्यवसाय आदि में व्यस्त हो जाते हैं इसमें गृहस्थी का समस्त सामान गृहणी ही खरीदती है तथा गृहस्थी का संचालन वह परस्पर कुशलता एवं विश्वास के आधार पर करती है।

इस प्रकार परिवार में साठोत्तर वृद्धों के कुशल निर्देशन में युवा पीढ़ी ही वित्तीय प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का उत्तरदायित्व सम्भालती है। कारण यह है कि आज के इस जटिल एवं प्रगतिशील नवीन परिवेश में साठोत्तर वृद्धों की अपेक्षा नवीन सन्तति ही अधिक संवेदनशील तथा प्रासंगिक सिद्ध हो रही है तथा शारीरिक रूप से शिथिल एवं पराश्रयता की स्थिति में उन्हें सुख-शान्ति हेतु इस जटिल कार्य से मुक्त किया जाना अत्यधिक उपयोगी माना गया है।

वृद्धों का पारिवारिक उत्तरदायित्व :

पारिवारिक दायित्वों का निर्वाहन करने की स्थिति में परिवार के अन्य सदस्यों की तुलना में साठोत्तर वृद्धों को अधिक चिन्तित एवं सजग पाया जाता है। सामान्यतः वृद्धावस्था में कोई भी पारिवारिक उत्तरदायित्व वृद्धों हेतु समस्या बन जाता है इस सन्दर्भ में प्रतिचयित सूचनादाताओं द्वारा प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 5.3 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ५.३

प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के पारिवारिक उत्तरदायित्वों का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों के उत्तरदायित्व	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सन्तानों के विवाह सम्बन्धी उत्तरदायित्व	117	39
2	सन्तानों की शिक्षा एवं रोजगार सम्बन्धी उत्तरदायित्व	86	29
3	आवासीय एवं संस्कार जनित उत्तरदायित्व	70	23
4	अन्य उत्तरदायित्व	27	09
	योग	300	100

तालिका संख्या 5.3 का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 29 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपने बच्चों की शिक्षा तथा रोजगार सम्बन्धी दायित्वों का अनुभव करती है; 39 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपनी सन्तानों या सन्तानों की सन्तानों (नाती/नातिन) आदि के विवाह सम्बन्धी उत्तरदायित्वों एवं संस्कार जनित उत्तरदायित्वों का अनुभव करते हैं जबकि 9 प्रतिशत वृद्ध विभिन्न प्रकार की समस्याओं न्यायालयी समस्याओं ऋण की स्थिति उत्सव आदि का अनुभव करते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध सन्तानों के विवाह एवं शिक्षा तथा उन्हें स्वावलम्बी बनाने के लिए अपनी जिम्मेदारियों का अनुभव करते हैं।

वृद्धावस्था में आर्थिक पराश्रयता :

वृद्धावस्था में आर्थिक पराश्रयता एक जटिल पक्ष माना जाता है सामान्यतः समाज वैज्ञानिकों ने पराश्रयता शब्दों का प्रयोग अनेक सन्दर्भों में किया है जैसे- सामाजिक सम्बन्धों के स्वरूपों को निर्धारित करने हेतु विशिष्ट व्यवहार तथा व्यक्तित्व की दशाओं के रूप में विद्यमान पराश्रयता। वस्तुतः पराश्रयता एक ऐसी जटिल शोषणमय स्थिति है जो किसी निर्बल व्यक्ति द्वारा अपने सबल एवं सहयोगी व्यक्ति के साथ व्यावहारिक आदान-प्रदान के समय महसूस की जाती है। पराश्रयता के लिए यह जानना आवश्यक है कि वे कौन सी मान्यताएँ हैं जिनके

आधार पर एक पराश्रित व्यक्ति को समाजीकृत किया जा सकता है तथा उसकी पराश्रयता का जीवन के विविध क्षेत्रों में दृष्टिगत किया जा सकता है। प्रायः यह क्षेत्र है व्यक्ति की आकांक्षाओं का न्यूनतम रूप वैयक्तिक आवश्यकताओं की समुचित प्रतिपूर्ति का अभाव संस्थागत माँगों की पूर्ति में बाधाएँ उत्पन्न करना साथ ही जीवन के विविध सन्दर्भों में पैदा होने वाले अवरोधों से उत्पन्न व्यग्रता, खिन्नता एवं जीवन गति में उत्पन्न होने वाले अनेक बदलाव आदि। अतः यह माना जा सकता है कि पराश्रयता एक ऐसी दशा है कि जिसमें एक वृद्ध व्यक्ति दूसरों पर आश्रित रहता है। इस प्रकार की पराश्रयता को मुख्यतः आर्थिक, न्यायिक सामाजिक एवं मानसिक श्रेणियों में रखा जा सकता है।

वैदिक काल से ही भारतीय जीवन-दर्शन में पति-पत्नी को एक दूसरे का पूरक तथा आदर्श परिवार की धुरी माना गया है। मनु स्मृति के अनुसार अकेला व्यक्ति किसी भी धार्मिक क्रिया-कलाप को सम्पन्न करने के लिए उपयुक्त नहीं माना गया और न ही वह सन्तान सम्बन्धी रचनात्मक कार्य कर सकता है अतः विवाहोपरान्त आदर्श जीवन साथी के रूप में परिवार का निर्माण करने वाले पति-पत्नी एक दूसरे पर आश्रित होते हैं तथा जैसे-जैसे वह बड़े अर्थात् वृद्ध होते जाते हैं। परिवार में उनकी प्रस्थिति, उत्तरदायित्व एवं पराश्रयता बढ़ने लगती है। इस प्रकार गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने से लेकर वृद्धावस्था तक सुख-दुःख के अनेकों अवसरों का आना स्वाभाविक होता है जिसमें निरन्तर परिवर्तित होती प्रस्थितियों एवं भूमिकाओं, सत्ता हस्तान्तरण की स्थितियों व्यय की अपेक्षा आव की निम्न स्थिति का होना आदि निश्चय ही पारिवारिक समायोजन के मार्ग में बाधा उत्पन्न कर साठोत्तर वृद्ध (पुरुष-महिला) को समस्या ग्रस्त बनाने लगते हैं। सन्तानों के युवा एवं प्रौढ़ होने के उपरान्त इन वृद्धों के मध्य भी सम्बन्ध पहले जैसे मधुर न रहकर कुछ निश्चित सीमाओं में सीमित होने लगते हैं। सन्तानों के विवाहोपरान्त विशेष रूप से माता (सास) की प्रस्थिति एवं भूमिका भी बदलने लगती है और यही से परिवार में एक विशिष्ट विखण्डनात्मक या व्यवस्थामूलक, उभयगत्यात्मक एवं संक्रमणकालीन स्थिति का अभ्युदय लक्षित होने लगता है और यही स्थिति उन वृद्ध-वृद्धा की आश्रयता एवं पराश्रयता का निर्धारण करती है।

प्रस्तुत अध्ययन में प्रतिचयित सूचनादाताओं से वृद्धों की सबसे अधिक देखभाल करने वाले सदस्य, देखभाल करने वालों के प्रति वृद्धों की प्रतिक्रियायें, वृद्धों पर आश्रित व्यक्तियों की संख्या, वृद्धों का औसत आप-व्यय, वृद्धों के आर्थिक समायोजन की स्थिति, वृद्धों की बचत एवं सम्पत्ति का हस्तान्तरण की स्थिति जैसे प्रमुख सन्दर्भों पर वृद्धों के बहुमूल्य विचार आमंत्रित कर उनका विश्लेषण किया गया है।

(१) <u>परिवार में वृद्धों की सर्वाधिक देखभाल करने वाले व्यक्ति</u> :

परिवार में वृद्धों के अन्तःसन्ततीय की प्रकृति का विश्लेषण करने में जहाँ उसके प्रभाव की जानकारी करना आवश्यक है वही यह भी जानना अनिवार्य है कि परिवार का कौन सदस्य वृद्धों की अधिक देखभाल करता है क्योंकि स्वस्थ अन्तः सन्ततीय सम्बन्धों की उपस्थिति में अपेक्षाकृत सभी सदस्यों द्वारा या कुछ विशिष्ट सदस्यों द्वारा भली-भाँति देखरेख होती रहती है और अस्वस्थ सम्बन्धों से वृद्धों की विशेष देख-रेख नहीं की जाती है अतः इस तथ्य को जानने के लिए वृद्धों से यह स्पष्ट करने का आग्रह किया गया कि वे कृपया बतायें कि परिवार में आपकी सबसे अधिक देखभाल कौन करता है। इस सन्दर्भ में उनसे प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 5.4 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ५.४

<u>साठोत्तर वृद्धों की सर्वाधिक देखभाल करने वाले व्यक्ति का विवरण</u>

क्र.सं.	देखभाल करने वाले सदस्य	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पति	40	13
2	पत्नी	67	22
3	विवाहित पुत्र, पुत्रियाँ एवं बहुएँ	137	46
4	अविवाहित बच्चे	30	10
5	पड़ौसी	12	04
6	नाते-रिश्तेदार आदि	14	05
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 13 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध (पुरुष) की देखभाल उनकी पत्नी के द्वारा की जाती है; 22 प्रतिशत वृद्धाएँ यह मानती हैं कि उनकी देखभाल उनमें पति द्वारा की जा रही है; जबकि

46 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों (स्त्री पुरुष) का मानना है कि उनकी देखभाल युवा पीढ़ी (विवाहित पुत्र, बहूएँ, विवाहित पुत्रियाँ) द्वारा की जाती है इसके विपरीत 10 प्रतिशत वृद्धों का मानना है कि उनकी देखभाल अविवाहित पुत्र एवं पुत्रियों द्वारा की जाती है जबकि 4 प्रतिशत वृद्धों का मानना था कि उनकी देखभाल पड़ोसीगणों द्वारा की जाती है तथा 5 प्रतिशत वृद्धों की देखभाल नाते-रिश्तेदारों के द्वारा की जाती है।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अधिकांश वृद्धों की देखभाल उनके जीवनसाथी तथा विवाहित पुत्र-पुत्रियों एवं बहुओं एवं अविवाहित सन्तानों के द्वारा की जाती है तथा शेष नाते-रिश्तेदारों की सहानुभूति पर ही जीवनयापन कर रही है।

(२) <u>परिवारिक सदस्यों द्वारा देखभाल करने के प्रति वृद्धों की प्रतिक्रिया</u> :

वृद्धावस्था जीवन की एक ऐसी अवस्था है जिसमें शारीरिक शिथिलता एवं अनेक प्रकार की बीमारियाँ व्यक्ति को विवश कर देती है जिससे पराश्रयता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है ऐसी अवस्था एवं दशा में वृद्ध पहले की अपेक्षा अपना अधिकांश समय घर में ही व्यतीत करना पसन्द करते हैं जो उनके लिए नकारात्मक वातावरण का सृजक बन जाता है। ऐसी स्थिति में पारिवारिक सदस्यों को वृद्ध भार स्वरूप दृष्टिगत होने लगते हैं। जबकि युवा स्वच्छन्द वातावरण एवं एकांतवास की समस्या से ग्रसित रहने के कारण कभी-कभी घुटन महसूस करते हैं। अतः इसी स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए साठोत्तर वृद्धों से उनकी प्रतिक्रियायें जानने का प्रयास किया गया तथा प्रतिचयित सूचनादाताओं से जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें तालिका संख्या 5.5 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ५.५

<u>पारिवारिक सदस्यों द्वारा की गयी देखभाल के प्रति वृद्धों की प्रतिक्रियाएँ</u>

क्र.सं.	वृद्धों की प्रतिक्रियाएँ	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पहले से अधिक देखभाल होती है।	71	24
2	पहले से कम देखभाल होती है।	93	31
3	पहले जैसी ही देखभाल होती है।	115	38
4	मात्र भाग्य/भगवान के सहारे हैं।	21	07
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 38 प्रतिशत साठेत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि उनकी देखभाल की प्रकृति में कोई भी अन्तर नहीं आया है तथा उनकी सन्तानें आज भी उनकी पूर्व की ही भाँति देखभाल करती हैं, 24 प्रतिशत वृद्धों का यह मानना है कि अब उनकी पहले से भी अधिक देखभाल होती है; 31 प्रतिशत वृद्धों का मानना है कि अब उनकी सन्तानों की जिम्मेदारियाँ उनकी देखभाल को प्रभावित करती हैं। जबकि 7 प्रतिशत वृद्धों का मानना है कि वह भाग्य के भरोसे या भगवान के सहारे ही जीवनयापन कर रहे हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश वृद्धों की देखभाल पहले की तरह या पहले से अधिक हो रही है। जो उनके स्वस्थ समायोजन का परिचायक प्रतीत होता है।

प्रतिचयित वृद्धों ने अपनी देखभाल के विषय में जो प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की हैं उनका विश्लेषण कर किसी विशिष्ट या स्पष्ट निष्कर्ष को प्राप्त करना अत्यन्त कठिन कार्य प्रतीत होता है क्योंकि देखभाल का प्रश्न वृद्धों की संवेगात्मक स्थिति एवं परिवार या पारिवारिक सदस्यों की स्थिति पर निर्भर करता है यद्यपि परिवार के समस्त व्यक्ति सामान्य स्थिति में रहते हुए अपने-अपने कार्यों का सही प्रकार से सम्पादन कर रहे होते हैं तो परिवार का वातावरण स्वस्थ रहता है जिससे परिवार के समस्त सदस्य प्रसन्नता एवं उल्लास का अनुभव करते हैं। ऐसी स्थिति में इस खुशहाल पारिवारिक वातावरण को वृद्धों की आशीषों का प्रतिफल मानकर अपेक्षाकृत उसकी देखभाल मन-मस्तिष्क से एवं समुचित रूप से की जाती है। परन्तु इसके विपरीत स्थिति में देखभाल करने वाले व्यक्ति की पारिवारिक दशा ठीक न होने के कारण वृद्धों की देखभाल कौन करे यह प्रश्न उत्पन्न हो जाता है? अतः वृद्धों की समुचित देखभाल नहीं हो पाती है।

साठेत्तर वृद्धों की देखभाल की प्रकृति का एक आर्थिक पक्ष भी है यदि वृद्धों के पास चल या अचल सम्पत्ति होती है या उसकी किसी भी रूप में कोई निश्चित नियमित आय होती है तो उसके लोभ में उसके पारिवारिक सदस्य या अन्य नाते-रिश्तेदार उसकी अधिक सेवा या देखरेख उसकी अधिक सेवा या देखरेख करते रहते हैं। इसी प्रकार जीवन साथी के जीवित रहने पर और उसके जीवित न रहने की स्थिति में वृद्धों की देखभाल में अन्तर आ जाता है विशेषतः वृद्धाओं के

साथ यह स्थिति और भी अधिक दयनीय हो जाती है। अतः सहनशीलता, आकांक्षारहित जीवन, सादा एवं सरल जीवन भी देखभाल की प्रकृति को निर्धारित करने में सहायक सिद्ध होता है।

(३) वृद्धों की आर्थिक पराश्रयता की स्थिति :

वृद्धावस्था में धनाभाव की स्थिति सामाजिक समायोजन को किसी न किसी प्रकार से अवश्य ही प्रभावित करती है। शिथिल शरीर व्यक्ति को कार्यमुक्त करता रहता है। जिससे उसकी आय के स्त्रोत कम होते जाते हैं अतः आय प्रभावित होती है एक ओर आय का निरन्तर कम होते जाना दूसरी ओर पारिवारिक उत्तरदायित्वों का परिपालन शेष रहने की स्थिति में पुरुषों की तुलना में महिलाओं को आर्थिक संकट का सामना अधिक करना पड़ता है। सामान्यतः पुरुष अपनी आय के स्त्रोत को बढ़ाने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहते हैं जिससे उनके पारिवारिक उत्तरदायित्व पूर्ण हो सकें। अतः प्रतिचयित समस्त सूचनादाताओं से यह जानने का प्रयास किया गया कि उनकी आर्थिक पराश्रयता की स्थिति कैसी है? इस सन्दर्भ में उनके द्वारा प्राप्त तथ्यों को विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 4.6 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ४.६

साठोत्तर वृद्धों की आर्थिक पराश्रयता की स्थिति का विवरण

क्र.सं.	पराश्रयता की स्थिति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पराश्रित नहीं हैं।	117	39
2	पराश्रित हैं।	183	61
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 39 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध किसी पर भी आश्रित नहीं हैं यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इनमें कुछ वृद्ध महिलाएँ ऐसी हैं जिन्हें पति की मृत्यु के कारण पेन्शन अथवा अचल सम्पत्ति (मकान, कृषि, दुकान आदि) द्वारा नियमित रूप से एक निश्चित आय होती रहती है जिससे उनका जीविकोपार्जन होता रहता है। इसके विपरीत 61 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपने को आर्थिक रूप से पराश्रित मानते हैं।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध आर्थिक सन्दर्भ में पराश्रित हैं। जिन 61 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने यह स्पष्ट किया कि वे आर्थिक रूप से पराश्रित हैं तो उनसे यह जानने का प्रयास किया गया कि वे परिवार के किन सदस्यों एवं नाते-रिश्तेदारों पर पराश्रित हैं। इस सन्दर्भ में उनसे प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 5.7 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ५.७

वृद्धों की पराश्रयता की प्रवृत्ति का विवरण

क्र.सं.	पराश्रयता की प्रकृति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पति पर	47	26
2	पत्नी पर	28	15
3	विवाहित बच्चों पर	58	32
4	अविवाहित बच्चों पर	34	15
5	नाते-रिश्तेदारों पर	11	06
6	अन्य	05	03
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि 31 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि वह अपने विवाहित बच्चों पर आर्थिक रूप से आश्रित हैं जबकि 26 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धाओं का मानना था कि वह अपने पति पर आश्रित हैं। 18 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि वह आर्थिक रूप से अपने अविवाहित बच्चों पर निर्भर करते हैं; 15 प्रतिशत वृद्ध (पुरुषों) का मानना है कि शारीरिक शिथिलता के कारण वह धनार्जन करने में असमर्थ हैं अतः वह अपनी पत्नी द्वारा अर्जित धन पर आश्रित हैं जबकि 6 प्रशित वृद्ध अपने नाते-रिश्तेदारों के आर्थिक सहयोग पर तथा शेष 5 प्रतिशत अन्य (पड़ौसी आदि) व्यक्तियों पर आश्रित प्रतीत होते हैं।

(४) वृद्धों की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति की स्थिति :

सामान्य व्यक्ति स्वाश्रित या पराश्रित होता है दोनों ही स्थितियों में मूल आवश्यकताओं की पूर्ति एक महत्वपूर्ण पक्ष माना जाता है वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी मूल आवश्यकताओं रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति में संलिप्त रहता है

तथा निरन्तर इस हेतु प्रयासरत रहता है। इसी तरह कुछ साठोत्तर वृद्धों की कुछ संख्या ऐसी भी हो सकती है कि जिन्हें सामान्य स्थिति में अपनी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करने में कोई बाधा या परेशानी का सामना न करना पड़ता हो जबकि कुछ ऐसे भी साठोत्तर वृद्ध हैं जो इस सन्दर्भ में अत्यधिक कष्ट का अनुभव करते हों। इसी स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए प्रतिचयित सूचनादाताओं से उनके विचार जानने का प्रयास किया गया। प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 5.8 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ५.८

साठोत्तर वृद्धों की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति की स्थिति का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों का विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	आराम से पूर्ति हो जाती है।	122	40
2	कष्ट से पूर्ति होती है।	146	49
3	किसी भी प्रकार पूर्ति नहीं हो पाती है।	32	11
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 40 प्रतिशत सूचनादाताओं के समक्ष अपनी मूल आवश्यकताओं को पूर्ण करने की कोई विशेष समस्या नहीं है तथा उनकी समस्त मूल आवश्यकताओं की पूर्ति बड़े ही आराम एवं सहज रूप से हो जाती है; जबकि 49 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि उनकी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति कष्ट कर रूप में होती है शेष 11 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों की स्थिति दुःखद है। साधनाभाव एवं अत्यन्त विपन्नता के कारण उन्हें मूल आवश्यकताओं को पूर्ण करने की सुविधाएँ सुलभ नहीं हैं तथा वे दीन-हीन जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों को आसानी से अपनी मूल आवश्यकताओं को पूर्ण करने की सुविधा नहीं है जिससे उनका जीवन अत्यन्त कष्टकर रहता है।

वृद्धापन की आकांक्षायें एवं उनकी प्रतिपूर्ति :

कार्यावकाश का सबसे अधिक महत्वपूर्ण पक्ष या उपादेयता वृद्धों का अपने सामाजिक वातावरण से विरक्ति लेना है तथा अपनी समस्त मानसिक क्षमता को मात्र अपने जीवनयापन हेतु ही सीमित कर लेने में होती है। अध्ययन के समय यह पाया गया कि प्रायः साठोत्तर वृद्ध जीवन के समस्त क्रिया–कलापों से विरक्ति का उपदेश होते हुए भी पारिवारिक दायित्वों एवं सामाजिक कार्यों को पूर्ण करने में तत्परता से लगे रहते हैं। कार्यावकाश सिद्धान्त का परीक्षण करने के उद्देश्य से प्रतिचयित समस्त वृद्ध सूचनादाताओं से यह जानने का प्रयास किया गया कि उनकी वे कौन–कौन सी आकांक्षाएँ अभी शेष हैं जिन्हें वह अपने शेष जीवन में पूर्ण करना चाहते हैं इस सन्दर्भ में जो विचार प्राप्त हुए उन्हें समानता के आधार पर कुछ श्रेणियों में विभक्त कर तालिका संख्या 5.9 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ५.९

साठोत्तर वृद्धों की आकांक्षाएँ जिनकी पूर्ति शेष है।

क्र.सं.	वृद्धों की आकांक्षाएँ	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	स्वस्थ रहने की आकांक्षा	90	30
2	सामाजिक कार्य करने की आकांक्षा	62	21
3	आर्थिक सम्पन्नता या ऋण मुक्ति की आकांक्षा	28	09
4	धार्मिक क्रिया–कलापों में व्यस्त रहने की आकांक्षा	52	17
5	सन्तानों को रोजगारयुक्त बनाने की आकांक्षा	24	08
6	कोई आकांक्षा शेष नहीं है।	44	15
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 30 प्रतिशत सूचनादाता यह स्पष्ट करते हैं कि उनकी आकांक्षा मात्र शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ रहने की है; 21 प्रतिशत एवं 17 प्रतिशत क्रमशः

सूचनादाता यह स्पष्ट करते हैं कि वे किसी सामाजिक क्रिया–कलाप या धार्मिक क्रिया–कलापों में निरन्तर व्यस्त रहना चाहते हैं क्योंकि उनका यह मानना है कि सामाजिक (परोपकार), धार्मिक (ईश्वर सत्संग) करने से जीवन धन्य होता है तथा उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होगी। जबकि 8 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना था कि वे अपनी सन्तानों को स्वावलम्बी बनाना चाहते हैं जिससे वह उनके जीवित रहते धनार्जन करने लगे तथा 15 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना था कि अब उनकी कोई भी आकांक्षा शेष नहीं है तथा वह अपना शेष जीवन आनन्दमय होकर पूर्ण करना चाहते हैं।

अतः निष्कर्षतः माना जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों की आकांक्षाएँ धार्मिक क्रिया–कलापों को सम्पन्न करने, बच्चों को स्वावलम्बी बनाने से सम्बन्धित है लेकिन बहुत से ऐसे भी साठोत्तर वृद्ध हैं जिनकी कोई भी आकांक्षाएँ अब शेष नहीं हैं तथा वे सुखद आनन्दमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

इस सन्दर्भ में अध्ययन के दौरान किये गये अर्द्ध सहभागी अवलोकन एवं अनौपचारिक वार्तालाप से यह तथ्य सामने आया कि सामाजिक क्रिया–कलापों एवं दायित्वों से मुक्त होने की प्रबल भावना एवं दावेदारी के बाबजूद भी अधिकांश साठोत्तर वृद्ध पहले से अधिक व्यस्त एवं कार्य–कलापों में व्यस्त पाये गये जिससे यह स्पष्ट होता है कि वृद्धावस्था में समाज में पूर्ण कार्यावकाश की धारणा मात्र दिखावा या औपचारिकता ही है क्योंकि समाज परिवार एवं समूह के समस्त दायित्वों से सन्यास लेने के पक्षधरों में वृद्ध महिलाओं की उत्तरदायित्वों के प्रति सलिप्तता अधिक पायी गयी। सामान्यतः मध्यम एवं निम्न वर्गीय परिवारों के साठोत्तर वृद्धों ने स्पष्ट किया कि सामाजिक एवं पारिवारिक स्तर पर क्रियाशील जीवन बनाये रखना उनकी विवशता ही नहीं परम्परा भी है। उनका मानना था कि व्यर्थ समय व्यतीत करने से किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहना उपयोगी है। इसके विपरीत सम्पन्न परिवारों के साठोत्तर वृद्ध शारीरिक सुदृढ़ता के लिए कुछ न कुछ करना उपयोगी मानते हैं अतः अधिकांश उच्च वर्गीय परिवारों की महिलायें भी यथाशक्ति मर्यादित रूप से अपने को व्यस्त रखना लाभदायक मानते हैं इसके विपरीत जो वृद्ध शारीरिक रूप से योग्य नहीं हैं कि वे कुछ काम कर सकें वहीं कार्यावकाश चाहते हैं इसके विपरीत कुछ साठोत्तर वृद्ध ऐसे भी हैं जो स्वेच्छा से

बहुत से उन कार्यो; भूमिकाओं एवं उत्तरदायित्वों का हस्तान्तरण अपनी नवीन पीढ़ी को करने में विश्वास रखते हैं जिनका समुचित निर्वाहन करने में वे अपने को अक्षम पाते हैं अतः इस कारण उनका समस्त पारिवारिक सदस्यों पर प्रभाव विश्वास तथा अधिसत्ता बनी रहती है। तथा अपनत्व की भावना विकसित होती है।

आवश्यकताओं एवं इच्छाओं का न्यूनीकरण :

भारतीय विद्वान एवं मनीषियों ने सुखी समृद्ध जीवन व्यतीत करने के लिए जो विधि एवं विचार प्रस्तुत किये हैं उनसे यह स्पष्ट होता है कि जीवन में सबसे अधिक आनन्द एवं आराम तभी प्राप्त हो सकता है जब व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं एवं इच्छाओं का अधिकतम न्यूनीकरण कर दे जैसे-जैसे व्यक्ति भौतिकता एवं विलासिता की वस्तुओं को प्राप्त करने की दौड़ में आगे बढ़ता जाता है उसे निरन्तर दुःख एवं कष्ट की अनुभूति होती है अतः जीवन को सुखद बनाने के लिए आवश्यक है कि समस्त विलासी दुनिया से निम्नतम् लगाव रखा जाये जहाँ तक साठेत्तर वृद्धों के स्वस्थ सामाजिक समायोजन का प्रश्न है इसके लिए भी इच्छाओं एवं आवश्यकताओं का अधिकतम न्यूनीकरण होना भी आवश्यक माना गया है। वास्तविकता यह है कि वृद्धावस्था में व्यक्तियों का लगाव उन भौतिक वस्तुओं से सर्वाधिक रहता है जिन्हें उन्होंने अपनी सुख सुविधा के लिए कभी अर्जित किया था। तथा वह उन्हें मृत्युपर्यन्त छोड़ना नहीं चाहते। अध्ययन के दौरान ऐसा भी पाया गया कि इच्छाओं एवं आवश्यकताओं के अत्यधिक न्यूनीकरण के कारण उनके जीवन स्तर एवं जीवन शैली में गिरावट आ जाती है तथा उन्हें विभिन्न सामाजिक क्रिया-विधियाँ बन्धन लगने लगती है। आय में होने वाली निरन्तर कमी तथा बढ़ती हुई जिम्मेदारियों के साथ स्वास्थ्य में आने वाली गिरावट वृद्धों को स्वतः विवश कर देती है कि इच्छाओं एवं आवश्यकताओं का अधिकतम न्यूनीकरण किया जाये। यद्यपि वृद्धावस्था में व्यक्ति का स्वास्थ्य उसे अनेक भौतिक वस्तुओं के प्रयोग की स्वीकृति उस रूप में नहीं देता है जिस रूप में वस्तुओं का प्रयोग युवावस्था में वह किया करता था उसके कान, आँख, दाँत, फेफड़े, उदर, यकृत तथा शरीर के समस्त अंग शनैः शनैः शिथिल एवं निर्बल पड़ने लगते हैं जिससे उनकी जीवन शैली प्रभावित होने लगती है। जबकि उनका आन्तरिक चेतनात्मक चालक उन्हें संसार की समस्त विलासिता का अधिकतम आनन्द लेने

को प्रेरित करते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि उन्हें एक साथ स्वास्थ्य एवं धन सम्बन्धी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यही स्थिति साठोत्तर वृद्धों को मजबूर करती रहती है कि वह अपनी आवश्यकताओं को अधिक से अधिक न्यून रखें। वृद्धावस्था में सामाजिक समायोजन का मूल्यांकन कई पक्षों में किया जाता है तथा स्वयं व्यक्ति के स्वभाव रहन-सहन एवं जीवन स्तर-शैली पर आधृत होता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन में किसी न किसी स्तर पर समझौता एवं सन्तोष करना ही पड़ता है। शिथिल शरीर एवं निरन्तर बदलती पारिवारिक एवं शारीरिक दशाएँ व्यक्ति को अपने जीवन में बदलाव लाने के लिए विवश कर देती है। इस सन्दर्भ में साठोत्तर वृद्धों के विचार आमंत्रित किये गये प्राप्त तथ्यों को विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 5.10 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ५.१०

स्वस्थ समायोजन हेतु वृद्धों के प्रयासों का विवरण

क्र.सं.	समायोजन हेतु वृद्धों के प्रयास	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	शान्तिपूर्वक घर में निवास करना	57	19
2	पारिवारिक सदस्यों के क्रिया-कलापों में बाधक न बनना	70	23
3	भोजन को प्रसन्नता से ग्रहण करना	90	30
4	मित्रों एवं रिश्तेदारों के आतिथ्य भार को परिवार पर न डालना	37	12
5	सदैव प्रसन्न रहने का प्रयास करना	46	16
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 30 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि भोजन जीवन की मूल आवश्यकता है अतः जो कुछ भी क्षुदा पूर्ति हेतु मिल जाये उसे प्रसन्नता के साथ ग्रहण कर लेना चाहिए क्योंकि यही एक कारण है जो व्यक्ति को सर्वाधिक परेशान करता है। 23 प्रतिशत

साठोत्तर वृद्धों का मानना है कि वृद्धावस्था में व्यक्ति को पारिवारिक सदस्यों के क्रिया–कलापों में बाधक नहीं बनना चाहिए जिससे सभी पारिवारिक सदस्यों के मध्य आत्मीयता तथा सौहार्द का वातावरण बना रहता है; 19 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना है कि वृद्धावस्था में ज्यादा भाग दौड़ ठीक नहीं रहती। अतः अपनी आवश्यकताओं का न्यूनीकरण करने के उपरान्त घर में शान्तिपूर्वक निवास करना चाहिए तथा 16 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना है कि प्रसन्न रहना जीवन का आनन्द है अतः प्रत्येक स्थिति में प्रसन्न रहते हुए अपना शेष जीवनयापन करना चाहिए।

अतः निष्कर्ष के तौर पर माना जा सकता है कि सन्तोष पूर्वक मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करना, शान्तिपूर्वक घर में निवास करना तथा सदैव प्रसन्न रहना तथा दूसरों को भी प्रसन्न रखना यह वृद्धावस्था के वे प्रयास हैं जो उनके स्वस्थ्य समायोजन हेतु उपयोगी प्रतीत होते हैं।

अधिसत्तात्मक मनोवृत्तियाँ एवं प्रवृत्तियाँ :

वृद्धावस्था में अधिक सत्तात्मक मनोवृत्तियों एवं प्रवृत्तियों का मूल्यांकन करने के लिए दो सन्दर्भो को विशेषतः आधार बनाया गया है प्रथम जीवन के विविध पक्षों में घटित होने वाले परिवर्तन तथा द्वितीय वृद्धों/पारिवारिक सदस्यों का दृष्टिकोण जो आपसी समायोजन को प्रभावित करता है। व्यक्ति जैसे–जैसे वृद्ध होता जाता है वह वृद्ध के रूप में अनेकानेक परिवर्तनों का अनुभव करने लगता है। कुछ वृद्ध परिवर्तित जगत के साथ स्वस्थ समायोजन करने में सफलता प्राप्त कर लेते हैं जबकि कुछ सफलता प्राप्त न कर पाने के कारण विवशतापूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं। प्रायः यह पाया गया कि अधिकांशतः वृद्ध पूर्ण परम्परावादी एवं रूढ़िवादी मनोवृत्तियों वाले होते हैं और उनकी यही हठवादी अभिवृत्तियाँ पारिवारिक अधिसत्ता को अस्वस्थ रूप से प्रभावित कर वृद्धों एवं पारिवारिक सदस्यों के मध्य अनेक समस्याओं को जन्म देती रहती है जिस कारण जीवन के अन्तिम चरण में वृद्ध प्रायः कष्टकर जीवनयापन करने के लिए विवश हो जाते हैं।

उनकी इसी स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए सामाजिक परिवर्तन के कतिपय महत्वपूर्ण पक्षों के प्रति वृद्धों की मनोवृत्तियों को जानने का प्रयास किया गया। इन प्रमुख पक्षों में एकाकी परिवार की उपादेयता अन्तर्जातीय विवाह, परिवार

में पर्दा-प्रथा का उन्मूलन, विधवा पुनर्विवाह, विवाह विच्छेद तथा नारी स्वतन्त्रता को संज्ञान में लेकर तीन बिन्दु का एक पैमाना बनाया गया और वृद्धों के विचारों को आमंत्रित किया गया तथा उनसे प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 5.11 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ५.११

समाज में होने वाले परिवर्तनों के प्रति वृद्धों के विचार

क्र.सं.	सामाजिक परिवर्तन के पक्ष	वृद्धों की मनोवृत्ति			योग प्रतिशत
		पक्ष में	तटस्थ	विपक्ष में	
1	एकाकी परिवार सुख का आधार है।	198 (66%)	35 (12%)	67 (22%)	300 (100%)
2	अन्तर्जातीय विवाह उचित है।	27 (9%)	52 (17%)	221 (74%)	300 (100%)
3	पर्दा प्रथा समाप्त होनी चाहिए।	248 (83%)	22 (7%)	30 (10%)	300 (100%)
4	विधवा पुनर्विवाह मान्य होना चाहिए।	143 (48%)	42 (14%)	115 (38%)	300 (100%)
5	विवाह विच्छेद उपयोगी है।	78 (26%)	27 (9%)	195 (65%)	300 (100%)
6	नारी स्वतन्त्रता समय की माँग है।	221 (74%)	7 (2%)	72 (24%)	300 (100%)

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने के उपरान्त ज्ञात होता है कि-

(1) 66 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध एकाकी परिवार को अधिक उपयोगी मानते हैं जबकि 22 प्रतिशत वृद्ध एकाकी परिवारों को अधिक उपयोगी नहीं मानते हैं जबकि 21 प्रतिशत वृद्ध इस विषय में तटस्थ दृष्टिकोण रखते हैं। अतः इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि नगरीय क्षेत्रों के वृद्ध संयुक्त परिवारों की अपेक्षा एकाकी परिवारों को अधिक उपयोगी मानते हैं।

(2) समाज में अब धीरे-धीरे अन्तर्जातीय विवाहों का प्रचलन प्रारम्भ हो गया है यद्यपि अभी भी सामाजिक स्तर पर इसे विशेष मान्यता प्राप्त नहीं हो रही

है तथापि वैधानिक रूप से मान्यता होने के कारण इस प्रकार के विवाहों को सामाजिक मान्यता मिलने लगी है। इस सन्दर्भ में प्रतिचयित सूचनादाताओं में से 74 प्रतिशत अन्तर्जातीय विवाह को समाज, जाति एवं परिवार के लिए उपयोगी नहीं मानते जबकि 9 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध ही ऐसे हैं जो अन्तर्जातीय विवाह को उचित मानते हैं तथा 17 प्रतिशत सूचनादाता तटस्थ दृष्टिगत होते हैं अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अधिकांश वृद्ध अन्तर्जातीय विवाहों को उपयोगी नहीं मानते हैं जो इनके परम्परागत दृष्टिकोण का परिचायक है।

(3) भारतीय समाज में पर्दा प्रथा का प्रचलन रहा है जिसे मुगल काल में अधिक मान्यता प्रदान की गई। संयुक्त परिवार व्यवस्था में स्त्रियों की शोभा व व्यक्तित्व का मूल्यांकन उनके द्वारा अपनायी गई पर्दा प्रथा से होता था परन्तु धीरे-धीरे पढ़ी-लिखी महिलाओं ने इसे त्यागना शुरू कर दिया तथा पर्दा न करना फैशन तथा पारिवारिक प्रतिष्ठा का प्रतीक बनने लगा इस सम्बन्ध में 83 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध पर्दा न अपनाने के पक्ष में; 7 प्रतिशत तटस्थ, 10 प्रतिशत पर्दा प्रथा समाप्त न होने के पक्ष में दृष्टिगत होते हैं। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध स्त्री-पुरुष पर्दा प्रथा को समाप्त करने के पक्षधर हैं जो उनके परिवर्तित अर्थात् आधुनिक दृष्टिकोण का प्रतीक माना जायेगा।

(4) हिन्दू समाज की यह मान्यता रही है कि किसी भी हिन्दू स्त्री या पुरुष का जीवन में एक बार ही विवाह सम्पन्न होता है अगर पति की मृत्यु हो जाये तो उसकी विधवा पत्नी को पुनर्विवाह नहीं करना चाहिए परन्तु निरन्तर परिवर्तन के दौर में इस मान्यता को भी परिवर्तित करने का प्रयास किया गया और बाल-विधवा के पुनर्विवाह को समाज एवं परिवार की दृष्टि से औचित्यपूर्ण सिद्ध करने का प्रयास किया गया। भारत के संविधान के द्वारा इस प्रकार के विवाह को वैधानिक मान्यता भी मिल चुकी है। इस सन्दर्भ में 48 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना है कि विधवा पुनर्विवाह हो उपयुक्त है; 38 प्रतिशत सूचनादाता इस प्रकार के विवाह के पक्ष नहीं है जबकि 14 प्रतिशत सूचनादाता तटस्थ दृष्टिकोण रखते हैं। अतः निष्कर्षतः

यह माना जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध इस प्रकार के विवाहों को भी उचित मानते हैं जो उनकी परिवर्तित दृष्टिकोण का परिचायक है।

(5) भारतीय संस्कृति में हिन्दू विवाह जन्म जन्मान्तर का अटूट बन्धन माना गया है परन्तु पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण हिन्दू समाज में विवाह विच्छेद को भी वैधानिक मान्यता प्राप्त हो गयी अतः समाज में विवाह विच्छेद की कुछ विशिष्ट परिस्थितियों एवं शर्तों के आधार पर होने लगे। इस विषय में प्रतिचयित सूचनादाताओं में 65 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध विवाह विच्छेद के पक्ष में नहीं थे जबकि 26 प्रतिशत वृद्ध का मानना था कि यदि आवश्यक हो जाये तो विवाह विच्छेद उचित है जबकि 9 प्रतिशत सूचनादाता इस विषय में तटस्थ विचार रखते हैं। अतः विवाह विच्छेद के सन्दर्भ में वृद्धों के परम्परावादी दृष्टिकोण का आभास होता है।

(6) सदैव से ही हिन्दू परिवार व्यवस्था की यह मान्यता रही है कि सतीत्व की रक्षा के लिए एवं सुखद दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने के लिए स्त्रियों को घर–गृहस्थी तक सीमित रहना चाहिए उन्हें पुरुषों की तरह स्वतन्त्र नहीं होना चाहिए परन्तु धीरे–धीरे यह मान्यता भी धूमिल होने लगी है तथा भारतीय संविधान में समानता के अधिकार से उत्पन्न स्त्री चेतना ने जीवन के विविध क्षेत्रों में प्रवेश करने को प्रेरित किया। परिणामतः आज जीवन का ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जहाँ स्त्री ने अपनी असाधारण प्रतिभा को प्रस्तुत एवं प्रदर्शित न किया हो। प्रतिचयित सूचनादाताओं में 74 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध स्त्री स्वतन्त्रता के पक्षधर प्रतीत होते हैं; 24 प्रतिशत वृद्ध इसके विपरीत अपना मत व्यक्त करते हैं तथा उनका मानना है कि स्त्री स्वतन्त्रता के दुष्परिणाम से ही अनेक प्रकार की जटिलताओं एवं समस्याओं का तीव्र गति से प्रादुर्भाव होता है अतः आवश्यकता है कि स्त्री को एक निश्चित सीमा तक ही स्वतन्त्रता प्रदान करनी चाहिए। शेष 2 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध इस विषय में तटस्थ विचार रखते हैं इससे वृद्धों के परिवर्तित दृष्टिकोण का आभास होता है। अतः समाज में होने वाले निरन्तर परिवर्तनों के कुछ प्रमुख पक्षों के विषय में वृद्धों से प्राप्त विचारों का विश्लेषण करने से निष्कर्ष ज्ञात किया जा सकता है कि एकांकी परिवार अन्तर्जातीय विवाह,

पर्दाप्रथा, विधवा पुनर्विवाह, विवाह–विच्छेद एवं नारी स्वातन्त्रय के प्रति साठोत्तर वृद्धों ने अपने परिवर्तित एवं परम्परागत दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है।

वृद्धापन के अनुभव एवं बौधगम्यता :

वास्तव में वृद्धावस्था को अनुभवों एवं बोधगम्यता का असुण्य भण्डार माना जाता है। मनुष्य जन्म से लेकर मृत्यु तक एक लम्बा समय व्यतीत करता है तथा व्यक्ति अपने जीवन की विकास यात्रा में अनेकों व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है तथा वह न जाने क्या–क्या इस यात्रा में नवीन सीखता और सिखलाता है जिससे अनेक अनुभव उसे प्राप्त होते जाते हैं। परिवार ही व्यक्ति की प्रथम पाठशाला होती है जिसके सदस्य कम आयु के होते हैं तथा वृद्धों की तुलना में एक नवीन परिवेश में जन्मे एवं विकसित होते हैं परिणामतः नवीन सन्तति हेतु प्रायः वृद्धों के अनुभव विशेष उपयोगी प्रतीत नहीं होते हैं। ऐसी दशा में वृद्ध नवीन पीढ़ी की क्रिया पद्धति एवं वैचारिकी को देखकर अपने अतीत की याद करते रहते हैं। इस प्रकार परिवार एवं समाज व्यवस्था में आने वाले परिवर्तनों का मूल्यांकन भी करती है। अतः ऐसी स्थिति में कुछ वृद्ध एवं वृद्धाएँ तो अपने को अकेला तथा असहाय मानने लगते हैं तथा कुछ अपना साहस एवं आत्म विश्वास बनाये रखकर प्रत्येक नवीन स्थिति का सामना करते हुए प्रसन्न रहने का प्रयास करते रहते हैं। इस स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए प्रतिचयित सूचनादाताओं से ज्ञात किया गया कि आप अपनी वृद्धावस्था के विषय में किस प्रकार का अनुभव करते हैं? इस सन्दर्भ में उनसे प्राप्त तथ्यों को तालिका संख्या 5.12 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ५.१२
वृद्धापन के अनुभव एवं बोधगम्यता

क्र.सं.	वृद्धापन के अनुभव एवं बोधगम्यता	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	अपने हम उम्र से अच्छा अनुभव करते हैं।	66	22
2	अपने को अकेला व परिवार पर बोझ मानते हैं।	49	16
3	सभी कल्पित वस्तुएँ प्राप्त कर ली हैं।	97	33
4	अब जीवन इच्छा शेष नहीं है।	28	09
5	आज भी भरपूर साहस एवं आत्मविश्वास रखते हैं।	45	15
6	पारिवारिक सदस्य अब पसन्द नहीं करते हैं।	15	05
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका में प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के अनुभव एवं बोधगम्यता सम्बन्धी तथ्यों को दो प्रकार की श्रेणियों में प्रदर्शित किया गया है प्रथम प्रकार की श्रेणी में तथ्य क्रम संख्या 1, 3, 5 तथा द्वितीय श्रेणी में 2, 4, 6 प्रकार के तथ्यों को रखा गया है जो उनके सुखद एवं दुःखद जीवन के परिचायक है अतः उक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 22 प्रतिशत सूचनादाता यह स्वीकार करते हैं कि वे तुलनात्मक रूप से अन्य वृद्धों की अपेक्षा अधिक अच्छा जीवन व्यतीत कर रहे हैं; 15 प्रतिशत का मानना है कि पूर्व की भाँति आज भी भरपूर साहस एवं आत्मविश्वास रखते हैं तथा 33 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना है कि उन्हें अपने जीवन में वे सभी वस्तुएँ प्राप्त कर ली हैं जिनकी उन्होंने कल्पना की थी और जो जीवन के लिए आवश्यक थीं; 9 प्रतिशत वृद्धों का यह मानना था कि उनकी अब सभी इच्छाएँ एवं आवश्यकताएँ पूर्ण हो चुकी हैं तथा अब कुछ भी जीवन इच्छा शेष नहीं है। तथा उन्हें पूर्ण सन्तोष प्राप्त हो चुका है। जबकि 16 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना था कि

वृद्धावस्था के कारण वह अपने को अकेला मानते हैं तथा पारिवारिक सदस्य भी उन्हें बोझ स्वरूप मानते हैं तथा 5 प्रतिशत वृद्धों का मानना था कि उनके पारिवारिक सदस्य उन्हें किसी भी स्थिति में स्वीकार नहीं करते जिससे उनका शेष जीवन अनाश्रित, निराश तथा तनावपूर्ण हो गया है।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों के अनुभव एवं बोधगम्यता की प्रकृति सकारात्मक एवं स्वस्थ ही है परन्तु इसके साथ ही साथ उनकी नकारात्मक अभिव्यक्तियों को भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

अध्याय-६

वृद्धों की समस्यायें

राबसर्ल एवं सेल्जनिक **जी.जे.** (1959)[1] का मानना है कि सामाजिक समस्या मानव सम्बन्धों की वह समस्या है जो समाज को संकट में डालती है या कई लोगों की महत्वपूर्ण आकांक्षाओं को प्राप्त करने में रूकावट पैदा करती है। परिवर्तन प्रकृति का अनिवार्य नियम है। मनुष्य के जीवन में भी बचपन, युवावस्था, प्रौढ़वस्था और वृद्धावस्था को एक कटु सत्य के रूप में देखा जा सकता है। यह सोचना भी कठिन है कि जीवन परिवर्तन एवं उससे उत्पन्न समस्याओं के बिना भी हो सकता है परन्तु जीवन के अन्तिम पडाव में मनुष्य को कितनी परिवर्तनशील परिस्थितियों से जूझना पड़ता है, शायद उतना जीवन के किसी और चरण में नहीं। भारत में लगातार वृद्धों की बढ़ती जनसंख्या से जो चिन्ताएँ व्यक्त की जा रही है उनसे ऐसा लगता है कि आगामी समय में सामाजिक अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है। वृद्धावस्था स्वयं में एक समस्या मानी जाती है। क्योंकि इस अवस्था में व्यक्ति की शारीरिक शिथिलता के साथ-साथ उसका सब कुछ पीछे छूटता जाता है जिससे उसका जीवन भर लगाव रहा है चाहे वे परम्परागत रीतिरिवाज हो या सम्पत्ति यहाँ तक की जीवन साथी के साथ भी उसके सम्बन्ध औपचारिक ही रह जाते है। अतः इन्द्रिय शैथिल्य एवं वैचारिक वैमिन्य से उद्भूत बैराम्य अनेकानेक समस्याओं का जन्म होने लगता है। भारतीय समाज में नारी सदैव द्वितीय स्थान पर रहते हुए पुरूषों की अधीरता स्वीकार करती रही है। वृद्धावस्था प्राप्त वैधव्य जीवन उसे अनेक औचित्यहीन निर्योग्यताओं से आहत कर समस्या ग्रस्त बना देता है इसके अतिरिक्त एक चुनौती हमारे सामने यह भी है वृद्ध मध्यम एवं निम्नवर्गीय परिवारों में बोझा बनते जा रहे हैं क्योंकि आय का समुचित साधन न होने के कारण उन्हें तिरस्कार और उपेक्षा सहन करनी पड़ती है

इस प्रकार वृद्धावस्था में अनेक समस्यायें उत्पन्न हो जाती है। प्रस्तुत अध्याय में इसी पक्ष को उजागर करने को प्रयास किया गया है।

वर्तमान भारतीय समाज में परम्परागत संयुक्त परिवार व्यवस्था के अस्तित्व को आज भी स्वीकार किया जाता है। जबकि पश्चिमी देशों में प्रायः वृद्ध व्यक्ति अपने बच्चों के साथ न रहकर स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करते है जबकि भारत में वृद्ध संयुक्त परिवार में रहना पसन्द करते है। इसका कारण यह है कि संयुक्त परिवार में वृद्धों की सामाजिक सुरक्षा का पूर्ण प्रबन्ध होता है। पश्चिमी समाजों में प्रायः वृद्ध व्यक्ति असुविधा, एकान्तता, थकान, अलगाव जैसी स्थितियों का अनुभव करते है। क्योंकि औद्योगीकरण, नगरीकरण, आधुनिक शिक्षा आदि ने संयुक्त रूप से वैयक्तीकरण, गतिशीलता, प्रतिस्पर्धा एवं व्यावसायिक दबाव जैसी स्थितियों एवं विचारधाराओं को उत्पन्न किया है इस प्रकार के सामाजिक पृथक्करण ने उन वृद्धों के समक्ष अगणित समस्यायें उत्पन्न कर दी है।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होने के कारण हमारी परम्परागत मूल्य व्यवस्था भी औधोगिक नैतिक आचार व्यवस्था में निरन्तर बदलती जा रही है। भारतीय सामाजिक संस्थायें संयुक्त परिवार, जाति ग्रामीणधर्म व शिक्षा आदि धीरे-धीरे अस्तित्वहीन होती जा रही है जिससे हमारे भारतीय समाज का परिवर्तित परिदृश्य ही अनेकानेक जटिल प्रकृति की समस्याओं को उत्पन्न कर रहा है। संयुक्त परिवार विखण्डित होकर एकांकी परिवारों में परिवर्तित हो रहे हैं। तथा इन परिवारों में सभी व्यक्ति व्यस्त होने के कारण वृद्धों को समय नहीं दे पाते है। **देशमुख नानाजी** (1999)[2] का कहना है कि आज परिवार की प्रणाली बदल जाने के कारण वृद्धों की समस्या दुःख का कारण बन रही है और संयुक्त परिवार प्रणाली को दोबारा से चलाना सम्भव नहीं है। अतः इस स्थिति से चिन्तित वृद्ध/वृद्धाएँ प्रारम्भिक स्तर अपने को अस्वस्थ या थका हुआ महसूस करते है। जिससे एक विशिष्ट प्रकार का अस्वस्थ पारिवारिक पर्यावरण-सृजित होने लगता है। तथा धीरे-धीरे वह यह महसूस करने लगते है कि जो सम्मान व देखरेख उन्होंने कुछ वर्षो पहले अपने पूर्वजों का किया था एवं स्वयं अपने पारिवारिक सदस्यों से प्राप्त किया था वह वृद्धावस्था के कारण उन्हें उनकी सन्तानों द्वारा प्रदान नहीं किया जा रहा है। परिणामतः वह अपने को तिरस्कृत, पृथक, दैन्य एवं निर्बल की

स्थिति में पाते है। इस विषय में आदि शंकराचार्य के शब्दों को अंकित करना आवश्यक होगा जिन्होंने कहा था कि "जब तक आप स्वस्थ शरीर से धर्नाजन करेगें तब तक आपका परिवार आपके साथ रहेगा लेकिन जिस समय से आपकी काया इस योग्य न रहेगी कि धन कमा सकें, उस समय से आपका कोई भी पारिवारिक सदस्य आपका साथ न देगा अर्थात आपकी परवाह नहीं करेगा।"

अतः वृद्धों की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का उल्लेख करते हुए **जे.डी. पाठक** (1982)[3] ने स्पष्ट किया है कि एक युवा व्यक्ति का शारीरिक विकास एवं वृद्धावस्था तक इसका निरन्तर एवं रखाव बहुत से कारकों पर आधारित रहता है वातावरण, जलवायु, पौष्टिक आहार, जीवन विधि, तनाव बीमारियाँ, चिन्ताएँ आदि कुछ ऐसी प्रमुख दशाएँ हैं जो वृद्धों के स्वस्थ जीवन को बनाये रखती हैं या बिगाड़ देती हैं। व्यक्ति का शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य एवं सामाजिक सम्बन्ध आदि बहुत अंशों में आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है यदि उसकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है तो व्यक्ति निश्चित एवं प्रसन्न रहता है विपन्नावस्था में व्यक्ति दीनहीन तथा मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाता है। अतः सम्पन्नता या विपन्नता की स्थिति में धनाभाव के कारण प्रायः वृद्ध पराश्रित, दुःखी, दुर्गतिमय, दुर्भाग्यशाली, खिन्नचित जैसे प्रतीत होते हैं। इस विषय में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी स्पष्ट किया है कि व्यक्ति का उत्तम स्वास्थ्य–शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक सम्पन्नता का आधार होता है। **जे.डी. पाठक** (1982)[4] का यह भी मानना है कि एक ही आयु के दो व्यक्ति अपनी–अपनी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता के आधार पर समान नहीं होते हैं। प्रायः साठोत्तर वृद्धों में कुछ व्यक्ति विशिष्ट स्थितियों– रोगों एवं लक्षणों से सावधान रहते हैं जैसे शारीरिक कमजोरी, थकान, अनिन्द्रा, जोड़ों का दर्द, व्यग्रता, खिन्नता, तनाव, कफ, खाँसी, अपच, रक्तचाप, साँस के रोग आदि स्थितियाँ किसी भी वृद्ध को प्रभावित कर सकती है। इस प्रकार निरन्तर आयु के बढ़ने के साथ–साथ शरीर भी शिथिल होता जाता है। **प्रो. राजेश्वर प्रसाद** (1984)[5] हाँगकाँग में आयोजित ग्यारवीं इन्टरनेशनल सोशल साइन्स एसोसिएशन कांग्रेस में अपने शोध पत्र के वाचन में कहा कि मध्यम वर्गीय परिवारों के वृद्धों की समस्याओं में निरन्तर वृद्धि हो रही है जिसका कारण परम्परागत सामाजिक क्रिया–विधि का पतन, पश्चिमी शिक्षा, पूँजीवाद एवं लोगों में

बढ़ती हुई व्यक्तिवादिता की प्रवृत्ति के समन्वित प्रभाव से परिवर्तित होने वाली भारतीय मूल्य व्यवस्था ही माना जाना चाहिए। वर्तमान परिवेश में नगरीयकरण, औद्योगीकरण, पश्चिमीकरण ने व्यक्तिकरण जैसी प्रक्रियाओं के द्वारा समाज के प्रतिमानों को परिवर्तित कर दिया है जिसके परिणाम स्वरूप तीव्र स्थानीय गतिशीलता, व्यावसायिक दबाव, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अस्तित्वमान, प्रतिस्पर्धायें आदि ने केवल सामाजिक, आर्थिक संस्थाओं तथा सांस्कृतिक ताने–बाने को ही प्रभावित नहीं किया अपितु व्यक्तियों के मानवीय गुणों को भी प्रभावित किया है। परिणामतः साठोत्तर वृद्धों की अनेक समस्याएँ असुरक्षित पर्यावरण में व्यक्ति की पागल दौड़ का उपोत्पाद (बाई–प्रोडक्ट) है। उदाहरणार्थ– कार्यहीनता, प्रथक्करण, एकान्तता, नैराश्य,, मित्रहीनता तथा विभिन्न प्रकार की अभावग्रस्तता आदि ही साठोत्तर वृद्धों की अनेक समस्याओं का आधार होते हैं।

भारत में वृद्धों पर किये गये कतिपय प्रमुख अध्ययनों का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए विख्यात अध्ययनों का निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए विख्यात समाज वैज्ञानिक **सूडान कृपाल सिंह (1975)**[6] ने लिखा है कि व्यापक सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था के अभाव में भारतीय साठोत्तर वृद्ध अनेक समस्याओं का सामना करते हैं सामान्यतः ये समस्याएँ आर्थिक, चिकित्सकीय, पारिवारिक देखभाल, स्वास्थ्य आदि से सम्बन्धित होती है इसके साथ वर्तमान परिवर्तित सामाजिक परिदृश्य में साठोत्तर वृद्धों के समायोजन की स्थिति एक अन्य अति गम्भीर समस्या बनती जा रही है जिससे उन्हें इस अवस्था में निम्नलिखित अनेक समस्याओं से जूझना पड़ता है :–

(1) वृद्धावस्था में सेवानिवृत्ति के कारण व्यावसायिक असम्बद्धता स्वयं आर्थिक अभाव या असुरक्षा को जन्म देती है।

(2) वृद्धावस्था में सामाजिक एवं आर्थिक भूमिकाओं में होने वाले समस्त परिवर्तनों के कारण उत्पन्न संवेगात्मक पतन चित्त की दशाओं को उद्भूत करता है।

(3) वृद्धावस्था में स्वास्थ्य में आने वाली निरन्तर गिरावट तथा पारिवारिक एवं सामुदायिक प्रस्थिति की हानि से एकान्तता, अनुपयोगिता की भावना एवं पराश्रयता की भावना को जन्म देती है जिससे पुनः अनेकानेक समस्याओं का जन्म हो जाता है। साठोत्तर वृद्धों की अनेक समस्याओं को दृष्टिगत

करते हुए **चौधरी डी. पाल (1992)**[7] ने वृद्धों के जीवन की समस्याओं हेतु निम्नलिखित कारकों का उल्लेख किया है :-

(1) शारीरिक शिथिलता, मानसिक एवं कायिक शक्ति में निरन्तर गिरावट आना;

(2) आधुनिक शिक्षा प्रणाली एवं युवा पीढ़ी की कार्य पद्धति।

(3) औद्योगीकरण एवं नगरीकरण का प्रभाव।

(4) व्यक्तिवादी एवं भौतिकवादी दृष्टिकोण।

(5) सन्तति अन्तराल एवं संयुक्त परिवार व्यवस्था का निरन्तर विघटित होना।

(6) सामाजिक सुरक्षा के उपायों की कमी तथा खर्चीला रहन-सहन।

(7) नगरीय क्षेत्रों में निवास हेतु पर्याप्त स्थान का अभाव तथा सहानुभूति रहित वातावरण।

(8) युवा पीढ़ी का प्रब्रजन करना।

(9) पुरुषों के समान महिलाओं को रोजगार की सुलभता एवं उपलब्धता।

(10) साठोत्तर वृद्धों की अतिरिक्त आर्थिक जिम्मेदारियाँ यथा-बच्चों की शिक्षा, दीक्षा, कन्याओं का विवाह, जिनका जीवन के अन्तिम क्षणों तक करना शेष रह जाता है।

(11) नौकरी, प्रस्थिति, सम्पत्ति, शारीरिक क्षमता आदि में होने वाली हानि के साथ-साथ विभिन्न सामाजिक उत्तरदायित्वों का निरन्तर बढ़ता हुआ दबाव।

इस प्रकार उपरोक्त कारक साठोत्तर वृद्धों के जीवन में निम्नलिखित समस्याओं को उत्पन्न करने में सहायक होते हैं :-

(1) शारीरिक समस्यायें जैसे- असमर्थता एवं अनेक गम्भीर व्याधियाँ।

(2) देखभाल एवं चिकित्सा सुविधाओं का अभाव (वचना), कायिक शैथिल्य एवं अपंगता से उत्पन्न घृणात्मक एवं तिरष्कृत जीवन एवं अनाथ जैसी स्थिति का बन जाना।

(3) सन्तानों द्वारा साठोत्तर वृद्धों की देखभाल को नकारना तथा स्वःस्वार्थ हेतु सम्पत्ति आदि के विक्रय हेतु वृद्धों को मजबूर करना या उन्हें अपनी इच्छा में परिवर्तन हेतु विवश करना।

(4) वृद्धों की अनेक आर्थिक समस्यायें यथा संसाधनों की कमी होना, सेवानिवृत्त होना एवं आय का संकुचन या समापन हो जाना।

(5) अनेकानेक मनोवैज्ञानिक समस्यायें यथा– एकान्तता, खालीपन, परिवार पर बोझ होने की भावना से ग्रसित होना तथा यह मानने लगना कि सब कुछ समाप्त हो गया है।

(6) विभिन्न संवेगात्मक समस्यायें यथा अपनी ही सन्तानों से अलग रहना तथा अपने संगी–साथी वर्ग से अन्तः क्रियायें न कर पाने की विवशता।

(7) तिरस्कार, घृणा तथा कायिक हनन, अनावश्यक दबाव एवं कष्ट देने से जनित व्यग्रता व चित्त की खिन्नता जैसी अनेक समस्याओं को जन्म देती है।

(8) सामाजिक समस्यायें– इसके अन्तर्गत वे समस्त समस्यायें सम्मिलित है जिनका जन्म जीवन साथी के दिवगंत हो जाने के उपरान्त; संगी साथियों (समूह) से सम्बन्ध समाप्त होने, जीविकोपार्जन के साधनों के समाप्त हो जाने; सामाजिक प्रस्थिति के क्षीण हो जाने के परिणामस्वरूप होती है।

अतः उपरोक्त कारको से ज्ञात होता है कि साठोत्तर वृद्धों की सबसे प्रमुख समस्या है उनका अच्छा स्वास्थ का होना। प्रायः वृद्ध अपनी अनेक समस्याओं को कम करने में ही उलझे रहते हैं या फिर अपने पारिवारिक सदस्यों की समस्याओं पर निन्तर चिन्तन शील रहते हैं जिससे नैराश्य, व्यग्रता व चित्तमालिन्य की समस्या का प्रादुर्भाव हो जाता है तथा वह कुछ समय के पश्चात् अपने आप को परिवार को बोझ स्वरूप मानने लगते हैं। भारतीय संस्कृति में यह मानता है कि पुत्र का जन्म पिता का वंश (नाम) चलाने के लिए होता है तथा वृद्धावस्था में पुत्र ही वृद्धों का सहारा होता है; इससे न केवल परिवार में जनसंख्या की वृद्धि होती है एवं वृद्धावस्था में पराश्रयता की समस्या भी जन्म लेने लगती है। अध्ययन के दौरान यह भी पाया गया कि परिवार में मुखिया के रूप में साठोत्तर वृद्ध की पारिवारिक प्रस्थिति युवा पुत्रों को हस्तान्तरित होने लगती है जिससे यह भी संकेत मिलता है कि भारतीय सामाजिक व्यवस्था में साठोत्तर वृद्धों पर आधारित प्रस्थिति के स्थान पर प्रकार्याधारित प्रस्थिति अस्तित्व में आने लगती है यह दशा निश्चित रूप से औद्योगिक समाज का एक सामान्य मूल्य है। अतः आवश्यक हो जाता है कि साठोत्तर वृद्धों के कल्याण सम्बन्धी अनेक योजनाओं एवं कार्यक्रमों का निर्माण करते समय इन सभी सन्दर्भो को भी दृष्टिगत रखा जाये। **के.जी. देसाई एवं आर.**

डी. नाइक (1970)[8] द्वारा किये गये अध्ययन निष्कर्षो को यहाँ अंकित करना भी प्रासंगिक प्रतीत होता है इनका मानना है कि अध्ययन के पूर्व जो उपकल्पना की गई थी उसे इस अध्ययन से बल नहीं मिला। सेवानिवृत्त साठोत्तर वृद्धों की समस्याएँ स्वास्थ्य सम्बन्धी हैं क्योंकि जब से वह सेवानिवृत्त होते हैं तब से वे किसी न किसी गम्भीर व्याधि से ग्रसित हो जाते हैं; उनकी वित्तीय स्थिति गम्भीर होती जाती है जिसका कारण उनकी अनेक पारिवारिक जिम्मेदारियाँ हैं; परन्तु अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपनी पेंशन राशि, अन्य आय के स्त्रोतों से प्राप्त नियमित आमदनी, बचत एवं दूसरों से प्राप्त बकाया धन आदि के आधार पर काफी सम्पन्न प्रतीत हुए। उनके सेवानिवृत्ति के उपरान्त खाली समय की क्रियाएँ यथावत जारी है; उनके परिवार में उनकी अधिसत्ता, प्रभाव एवं मुखिया की उच्च पारिवारिक परम्परागत स्थिति आज भी वैसी ही है उन्होंने नई पीढ़ी के साथ रहते हुए किसी भी समस्या का संकेत नहीं दिया जिस कारण सम्भवतः उनका स्वल्प पारिवारिक समायोजन ही रहा है। इन सभी साठोत्तर वृद्धों ने परिवार से अलग होकर स्वतन्त्र रूप से अन्य स्थान पर रहने के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। **विक्टर डिसूजा (1971)**[9] द्वारा किये गये अध्ययन में स्पष्ट किया गया है कि मैंने भारत वर्ष में वृद्धों की सामाजिक समस्याओं का वर्णन सामाजिक संरचना में होने वाले परिवर्तन के आधार पर किया है। निश्चय ही सामाजिक असमानता की समस्या भी सामाजिक समस्या की श्रेणी में आती है जिसकी उत्पत्ति समाज के वैषयिक मूल्यांकन में आ रहे परिवर्तित परिदृश्य के कारण होती है। दूसरी ओर वृद्धावस्था को दूसरे प्रकार की सामाजिक समस्याओं के अन्तर्गत श्रेणीबद्ध किया जाना चाहिए जो परिस्थितियों में हो रहे परिवर्तनों के कारण घटित होती है ये विषम परिस्थितियाँ व्यक्ति के उन प्रयासों को जिनके द्वारा साठोत्तर वृद्धों की समस्याओं का समाधान सम्भावित करता हो, भी निष्प्रभावी बना देती है। परिणामतः स्थिति और भी अधिक जटिल हो जाती है। डिसूजा ने अपने अध्ययन में यह भी स्पष्ट किया है कि दूसरे देशों की तरह भारतवर्ष में भी वृद्धावस्था एक गम्भीर सामाजिक समस्या बन चुकी है जिसका प्रमुख कारण सामाजिक संरचना में होने वाला आधारभूत परिवर्तन है। परम्परागत भारतीय समाज धीरे-धीरे आधुनिक एवं पूर्ण औद्योगिक व्यवस्था में परिवर्तित हो रहा है जिससे साठोत्तर वृद्धों के लिए अनेक

समस्यायें स्वतः ही उत्पन्न हो जाती हैं अतः आवश्यक है कि एक ओर हम उस परम्परागत सामाजिक संरचना के विविध पक्षों का परीक्षण करके उसकी उस प्रकृति का मूल्यांकन करें जिसके आधार पर वृद्ध व्यक्ति अपनी परिवर्तनशील प्रस्थिति एवं भूमिका के बीच समुचित तादात्म्य स्थापित करते रहे हैं। इसके साथ-साथ दूसरी ओर प्रकट होने वाली नवीन सामाजिक व्यवस्था की उस प्रकृति का भी विश्लेषण करना चाहिए जिसके कारण साठोत्तर वृद्धों की परम्परागत प्रस्थिति में परिवर्तन हो रहा है तथा वह समाज की कृपा पर शेष जीवनयापन करने पर विवश हो रहे हैं।

जी.एस. भटनागर (1987)[10] द्वारा पटियाला नगर में रहने वाले 87 सेवानिवृत्त साठोत्तर वृद्धों का अध्ययन उनकी समस्याओं का संज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया तथा विद्वान भटनागर ने अपने अध्ययन में पाया कि सुशिक्षित, आर्थिक दृष्टि से समृद्ध एवं नगरीय पृष्ठभूमि के साठोत्तर वृद्धों का सामाजिक समयोजन तुलनात्मक रूप से अधिक स्वस्थ प्रकृति का होता है क्योंकि शिक्षित व्यक्ति अशिक्षित व्यक्ति (वृद्ध) की अपेक्षा अपने जीवन एवं समस्याओं के मध्य सन्तुलन स्थापित करता है तथा उनका समाधान अधिक सहज एवं तार्किक ढंग से करने की क्षमता रखता है। साठोत्तर वृद्धों की अनेक समस्याओं में आर्थिक विपन्नता भी एक गम्भीर समस्या होती है भारत जैसे विकासशील देश में शिक्षा के प्रसार एवं व्यक्तियों के आर्थिक स्तर में होने वाली वृद्धि के आधार पर यह माना जा सकता है कि साठोत्तर व्यक्ति अपनी इस अवस्था में कुछ न कुछ करते रहने तथा समाज का एक सक्रिय सदस्य बने रहने हेतु निरन्तर प्रयासरत् रहेंगे। साठोत्तर वृद्धों की आर्थिक विपन्नता के कारण उनमें असुरक्षा की भावना भी बलवती होती रहती है जिस कारण उनके सामाजिक समायोजन का स्तर उनके आर्थिक स्तर पर आधारित हो जाता है परिणामतः उनकी आर्थिक सम्पन्नता से स्वस्थ सामाजिक समायोजन एवं आर्थिक विपन्नता से अस्वस्थ सामाजिक समायोजन की स्थितियाँ निर्मित हो जाती है। सम्पन्नता की स्थिति में वृद्धजन स्वयं की एवं अपने पारिवारिक सदस्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ उनके अच्छे स्वास्थ्य, खाली समय का सृजनात्मक उपयोग, सामाजिक सुरक्षा, स्नेह, सामाजिक सहभागिता, मर्यादा एवं आत्मसम्मान की स्थितियों का प्रचुर मात्रा में निर्माण करती है। परन्तु जैसे-जैसे शारीरिक शिथिलता एवं क्षीणता आती जाती

है वैसे-वैसे मनोरंजन, सहानुभूति एवं निर्णयों की स्वीकृति की अपेक्षाएँ भी बढ़ने लगती है तथा वृद्धावस्था में अस्तित्व पाने वाले मनोवैज्ञानिक प्रभाव उन्हें पराश्रित सुस्त एवं एकान्तवासी बना देता है तथा अनेक समस्याओं को जन्म देता है। साठोत्तर वृद्धों की प्रस्थिति को ज्ञात करने के लिए **डी.एस. नन्दल** (1987)[11] ने अपने विद्वान सहयोगियों के साथ हरियाणा राज्य व रोहतक जनपदों में स्थिति गाँवों का अध्ययन किया तथा निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि वृद्धों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है जो निम्नलिखित है :-

(1) युवा पीढ़ी साठोत्तर वृद्धों के संसर्ग में नहीं रहना चाहती जिस कारण साठोत्तर वृद्ध एकान्तता एवं पृथक्करण की समस्या से ग्रसित रहते हैं।

(2) साठोत्तर वृद्धों की प्रतिष्ठा एवं प्रस्थिति में होने वाले निरन्तर क्षरण से एकांकी परिवार, सम्पत्ति का अस्वामित्व तथा नियमित आय के साधनों का अस्वामित्व जैसे अनेक पक्षों से सम्बन्धित गुण या सूचक - संकेत प्रत्यक्षतः प्रभावित होने लगते हैं।

(3) पारिवारिक स्तर पर वृद्धों की प्रस्थिति एवं प्रतिष्ठा में होने वाले बदलाव के परिणामस्वरूप अधिकांश वृद्धों में हर समय स्थाई रूप गिरावट (क्षय) की स्थिति बनी रहती है।

(4) साठोत्तर वृद्धों की मुख्य समस्या आर्थिक असुरक्षा होती है।

(5) भारत जैसे विकासशील देश में आर्थिक विपन्नता एवं कुपोषण मुख्य रूप से विभिन्न व्याधियों (बीमारियों) को पैदा करते हैं। समुचित धनाभाव एवं पौष्टिक आहार के अभाव में साठोत्तर वृद्धों में अनेक प्रकार की बीमारियाँ सामान्यतः खाँसी, कफ, अल्प दृष्टि, दृष्टिहीनता, दन्तरोग, जोड़ों के दर्द, शारीरिक पीड़ा, श्रवण क्षमता में कमी तथा अपच आदि प्रमुख हैं।

इसके साथ-साथ सन्तति अन्तराल के आधार पर साठोत्तर वृद्धों की अनेक समस्याओं को दृष्टिगत करने के उद्देश्य से **जॉनी सी. जोसेफ** (1988)[12] ने माना है कि जैसे-जैसे व्यक्ति वृद्धावस्था की ओर बढ़ने लगते हैं वैसे ही पारिवारिक सन्दर्भ में होने वाली विविध सामाजिक अन्तः क्रियाओं के क्षेत्र एवं सीमा में निरन्तर संकुचन होने लगता है तथा समन्वित परिणामों से साठोत्तर वृद्धों के सम्मुख अनेक समाज-मनोवैज्ञानिक समस्याओं का प्रकटीकरण आरम्भ हो जाता

है साठोत्तर वृद्धों की अधिसत्ता भी इससे प्रभावित होने लगती है जो वृद्ध किसी कारणवश अपना जीवन साथी खो देते हैं वह दुःखद एवं एकांकी जीवन व्यतीत करने के लिए मजबूर हो जाते हैं इस अवस्था में उनके पास कोई भी निकट का सदस्य नहीं होता जो विभिन्न परिस्थितियों में उनका सहयोगी तथा हितैषी साबित हो सकें। उनका एकांकीपन उस समय भी समाप्त नहीं होता जब उनके पास उनके अन्य पारिवारिक सदस्य एकत्र होते हैं क्योंकि दोनों पक्षों में वैचारिकी तथा दिनचर्या में कोई भी साम्य नहीं होता है क्योंकि वृद्धों एवं युवाओं दोनों के मध्य अस्तित्व पाने वाली वैचारिकता में परस्पर संघर्ष ही प्रमुख कारण होता है प्रायः साठोत्तर वृद्ध यह अनुभव करने लगते हैं कि युवा सन्तति का उनके साथ जो व्यवहार होता है उसके मुक्ति का एक ही मार्ग की उनका देहान्त हो जाये वृद्धों की यह मानसिक स्थिति अत्यन्त ही दयनीय एवं कथित करने वाली होती है।

नायर पी.के.वी. (1987)[13] ने अपने अध्ययन में संकेत दिया है कि वृद्धावस्था एक सार्वभौमिक समस्या है तथा विश्व का कोई भी ऐसा देश नहीं है जहाँ यह समस्या विधमान न हो। दीर्घ जीवन अर्थहीन हो जाता है यदि वृद्धों को जीवन के बढ़े हुए समय को सुखपूर्वक बिताने के सुअवसर एवं सुविधायें प्रदान न की जायें। आधुनिक समाज में किसी भी सृजनात्मक भूमिका का अभाव वृद्धों के प्रकार्यात्मक एकीकरण को प्रभावित करता है जबकि सन्ततीय अन्तराल साठोत्तर वृद्धों की संवेगात्मक एकात्मकता को प्रभावित करता है। वे साठोत्तर वृद्ध जिनकी परिवार में भी सर्वोच्च सत्ता रही है नई पारिवारिक व्यवस्था के साथ तादात्मय स्थापित करने में संकोच तथा कठिनाई का अनुभव करते हैं परिणामतः उनमें तनाव तथा मग्नासा की स्थिति का निर्माण हो जाता है जिससे उनमें अनेक प्रकार की भावनात्मक समस्याओं का प्रादुर्भाव होने लगता है वे साठोत्तर वृद्ध जिनकी शक्ति का प्रमुख आधार उनका ज्ञान तथा अनुभव था शनैः शनैः अपनी शक्ति खोने लगता है क्योंकि समाज में निरन्तर नवीन ज्ञान एवं विचारों का उदय होता रहता है। इस प्रकार एक ओर आधुनिकीकरण की प्रक्रिया दूसरी ओर वृद्धों के परम्परागत विचार ही साठोत्तर वृद्धों की अनेक समस्याओं के मूल कारण प्रतीत होते हैं। **एलफ्रेड डिसूजा (1982)**[14] दिल्ली की आठ पुर्नस्थापित कालोनियों के 1869 परिवारों का अध्ययन किया गया तथा उन्होंने पाया कि पारिवारिक स्तर

पर वृद्ध पुरुषों एवं वृद्ध महिलाओं की परम्परागत प्रस्थिति में विभेदीकरण विनाश लक्षित होता है जो पारिवारिक सदस्यों के मध्य लिये जाने वाले विभिन्न प्रकार के निर्णयों के समय स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। सामान्यतः साठोत्तर वृद्ध एवं वृद्धाओं के यह विचार व्यक्त किये कि उनके पारिवारिक सदस्य अब उनका उतना सम्मान नहीं करते हैं जितना वे कुछ समय पूर्व स्वयं (वृद्ध) अपने माता-पिता का किया करते थे। उनका यह भी मानना था कि जिन साठोत्तर वृद्ध व्यक्तियों ने एकान्तता, चित्तखिन्नता तथा पृथक्करण जैसी समस्याओं का अनुभव किया उनमें पुरुषों की अपेक्षा महिलाएँ अधिक थीं। अतः वृद्धों की समस्याओं से सम्बन्धित पूर्व अध्ययन निष्कर्षों के आधार पर मैंने भी अपने अध्ययन में प्रतिचयित समस्त हिन्दू वृद्ध व्यक्तियों की समस्याओं का विविध पक्षों से अध्ययन करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत अध्याय में साठोत्तर वृद्धों की पृथक्कत्व व एकान्तता सम्बन्धी समस्याएँ, स्वास्थ्य एवं रोगमूलक समस्याएँ, आर्थिक जीवन से सम्बद्ध समस्याएँ, अधिसत्ता एवं प्रभुत्व अस्तित्व की समस्याएँ, सुरक्षा तथा देखभाल सम्बन्धी समस्याएँ तथा पारिवारिक समायोजन सम्बन्धी समस्याएँ प्रमुख रूप से विश्लेषित की गयी हैं।

(१) <u>स्वास्थ्य एवं रोग मूलक समस्यायें</u> :

यह समस्या वृद्धों की सामान्य एवं प्रमुख समस्या है वास्तव में शायद ही कोई वृद्ध होगा जिसे कोई स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्या न हो अन्य शब्दों में वृद्धावस्था को बीमारियों का घर माना जाता है। स्वास्थ्य के माध्यम से ही वृद्ध/वृद्धा के सुखी एवं सन्तुष्ट जीवन का अनुमान लगाया जा सकता है। वृद्धों के स्वास्थ्य के सन्दर्भ में **एडवार्ड जे. सीजलिज (1951)**[15] ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया कि स्वास्थ्य को व्यक्ति की ऐसी दशा के रूप में स्वीकार करना चाहिए जो उसे आरोग्य प्रदान करती है प्रायः उस अवस्था में जब सावयव के विभिन्न अंगों की समस्त स्वाभाविक कार्य क्षमता प्रभावित होने लगे। एक कमजोर (रोगी) व्यक्ति के पास कितना भी धन क्यों न हो वह किसी भी क्षण सुखी, शान्तमनसा जीवन व्यतीत करने में अपने को असमर्थ पाता है अतः इसमें जरा भी संशय नहीं कि वृद्धावस्था की प्रक्रिया में स्वास्थ्य एवं व्याधिमूलक स्थितियों से सम्बद्ध अनेकों समस्याएँ एक साथ आक्रमण करके वृद्ध को प्रभावित करती रहती हैं जिनमें से

कुछ समस्याओं को तो स्वाभाविक माना जा सकता है तथा अधिकांश समस्याओं को उचित देखरेख के अभाव में एवं नियम संयम हीनता के कारण घटित हुआ पाया जा सकता है। सामान्यतः वृद्धों की अनेक व्याधियाँ तुलनात्मक रूप से समवर्त्य एवं असाध्य प्रकृति की होती है क्योंकि उनकी इन्द्रियाँ निरन्तर शिथिल होती जाती हैं। अतः यह स्पष्ट है कि वृद्धावस्था में व्यक्ति असाध्य व दीर्घ स्थायी व्याधियों से शारीरिक अक्षमताओं या अयोग्यताओं तथा मानसिक कष्टों से अधिकाधिक प्रभावित होते हैं। एक स्वस्थ वृद्ध व्यक्ति अस्वस्थ वृद्ध व्यक्ति की तुलना में अनेक कठिनाइयों को साहस के साथ पूर्ण करने की शक्ति रखता है जबकि अस्वस्थ वृद्ध व्यक्ति में अनेक प्रकार की शारीरिक अपंगताएँ उत्पन्न होती रहती हैं। जिस कारण वृद्धों के सामाजिक समायोजन की प्रक्रिया में व्याधियों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण के रूप में माना जाता है। साठोत्तर वृद्धों को प्रायः जोड़ों की सूजन जनित रोग, सन्धिवात, हृदय व रक्तचाप सम्बन्धी बीमारियाँ, पाचन क्रिया का कमजोर होना, दृष्टि एवं श्रवण शक्ति का कमजोर होना परेशान करती है। यद्यपि स्वास्थ्य सम्बन्धी यह व्याधियाँ युवावस्था में होती हैं। परन्तु जीवन की सक्रियता एवं जोश के कारण इनका प्रभाव कम ही होता है जिसका एक कारण युवावस्था में सहनशक्ति की क्षमता का अधिक होना भी है। युवावस्था में शरीर के पर्याप्त रक्त प्रवाह एवं सावयव की हठ सहनशक्ति के कारण आंशिक उपचार से ही इस प्रकार की व्याधियों पर शीघ्र नियंत्रण सम्भव हो जाता है परन्तु धीरे–धीरे शरीर की क्षीणता, मानसिक कष्टों की वृद्धि तथा आर्थिक विपन्नता से उत्पन्न तनाव आदि तक सामान्य एवं स्वस्थ व्यक्ति को भी वृद्धावस्था की ओर ले जाते हैं। ऐसी स्थिति में प्रायः वृद्ध व्यक्ति अपने स्वास्थ की गिरावट को अनुभव करने लगते हैं तथा वृद्धावस्था में स्वास्थ्य परीक्षण होने पर अनेक बीमारियाँ प्रकाश में आने लगती हैं तथा कभी–कभी यह स्थिति चौकाने वाली हो जाती है। शारीरिक क्षीणता एवं सहनशक्ति के अभाव के कारण औषधियाँ भी अधिक सहायक सिद्ध नहीं होती हैं जिससे वृद्ध व्यक्ति के स्वास्थ्य में यथा स्थिति या धीमी प्रगति की स्थिति बनी रहती है। इसके साथ–साथ युवावस्था में बीमार होने पर पराश्रयता उस रूप में नहीं होती जिस रूप में वह वृद्धावस्था में होती है। परिणामतः वृद्धावस्था में व्याधिमूलक समस्याएँ अधिक कष्टकर होती है।

(i) स्वास्थ्य सम्बन्धी दशाओं के प्रति साठोत्तर वृद्धों के विचार :

साठोत्तर वृद्धों की स्वास्थ्य सम्बन्धी दशाओं को जानने के लिए स्वयं वृद्धों से यह प्रश्न किया गया कि क्या आप यह अनुभव कर रहे हैं कि अब बीमारियाँ आप पर आक्रमण करने लगी हैं जिससे आपको स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है? इस सन्दर्भ में वृद्धों ने विचार व्यक्त किये उन्हें तालिका संख्या 6.1 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१
स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के प्रति साठोत्तर वृद्धों के विचार

क्र.सं.	साठोत्तर वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का अनुभव करते हैं।	230	77
2	स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का अनुभव नहीं करते हैं।	70	23
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि अधिकांश (77 प्रतिशत) साठोत्तर वृद्ध व्यक्ति यह अनुभव करते हैं कि वृद्धावस्था के कारण उनका स्वास्थ्य प्रभावित होने लगता है क्योंकि इन्द्रिय शिथिलता के कारण अनेक बीमारियों ने आक्रमण करना आरम्भ कर दिया है। इसके विपरीत 23 प्रतिशत वृद्धों का मानना था कि वह अभी भी पूर्व की भाँति ऊर्जावान रहते हैं जिस कारण उन्हें बीमारियों का कुछ विशेष अनुभव नहीं हुआ है। वे आज भी अपना जीवन सामान्य रूप से व्यतीत कर रहे हैं। अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध किसी न किसी बीमारी से पीड़ित हैं।

(ii) साठोत्तर वृद्धों द्वारा अनुभव की जाने वाली व्याधियों की प्रकृति :

साठोत्तर वृद्धों की व्याधिजनित समस्याओं को ज्ञात करने के लिए यह आवश्यक है कि उनकी उन बीमारियों को उजागर किया जाये जो प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों को प्रभावित करती हैं इस सन्दर्भ में वृद्ध सूचनादाताओं ने जो तथ्य दिये उन्हें तालिका संख्या 6.2 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ६.२
साठोत्तर वृद्धों की प्रमुख बीमारियों का विवरण

क्र.सं.	बीमारियों के नाम	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	दृष्टिहीनता सम्बन्धी रोग	133	58
2	पाचन क्रिया सम्बन्धी रोग	194	84
3	रक्तचाप सम्बन्धी रोग	160	69
4	शारीरिक क्षीणता सम्बन्धी रोग	145	63
5	श्रवणहीनता	22	09
6	अनिन्द्रा	85	37
7	हृदय सम्बन्धी रोग	92	40
8	जोड़ों के दर्द सम्बन्धी रोग	45	19
9	चित्त खिन्नता	27	12
10	अन्य बीमारियाँ	65	28

नोट **– खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। कुल सूचनादाता = 230**

उक्त तालिका अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 84 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध पाचन क्रिया सम्बन्धी रोगों से व्यथित हैं; 69 प्रतिशत वृद्ध रक्तचाप (उच्च–निम्न) सम्बन्धी बीमारी से परेशान थे; 63 प्रतिशत वृद्ध सूचनादाता शारीरिक क्षीणता सम्बन्धी बीमारी से व्याकुल थे; 58 प्रतिशत प्रतिचयित वृद्ध दृष्टिहीनता (नेत्र ज्योतिदोष) से पीड़ित थे; 40 प्रतिशत वृद्ध हृदय सम्बन्धी रोगों से पीड़ित थे, 37 प्रतिशत वृद्ध अनिन्द्रा से पीड़ित थे; इसके अतिरिक्त 9 प्रतिशत वृद्ध श्रवणहीनता; 19 प्रतिशत वृद्ध जोड़ों के दर्द; 12 प्रतिशत चित्त खिन्नता तथा 28 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अन्य बीमारियों जैसे जुकाम, बुखार, खाँसी, दमा, टी.वी. पक्षाघात, कैंसर आदि बीमारियों से पीड़ित पाये गये।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्रायः अधिकांश साठोत्तर वृद्ध शारीरिक क्षीणता, पाचन क्रिया, रक्तचाप, हृदय रोग, दृष्टिहीनता, अनिन्द्रा जैसी बीमारियों से प्रभावित है।

(iii) **साठोत्तर वृद्धों द्वारा अपना इलाज कराने की व्यवस्था का विवरण :**

किसी भी बीमारी की प्रकृति एवं उपचार की व्यवस्था का आपस में सम्बन्ध होता है। सामान्यतः यह माना जाता है कि किसी भी बीमारी का इलाज स्थानीय स्तर के चिकित्सकों एवं वैद्य द्वारा सुगमता एवं सफलता से हो जाता है किन्तु गम्भीर या असाध्य बीमारी से पीड़ित होने पर उसका उपचार किसी विशिष्ट स्थान एवं चिकित्सक के द्वारा ही सम्भव होता है ऐसी स्थिति में बीमारी, बीमार तथा चिकित्सा के साथ-साथ अनेक समस्याओं का प्रादुर्भाव भी होने लगता है सामान्यतः साधन सम्पन्न परिवार के व्यक्ति अपने वृद्ध (बीमार) से अधिक लगाव होने के कारण उसका अच्छा उपचार कराने की व्यवस्था करते हैं परन्तु वृद्ध की शारीरिक क्षीणता एवं शिथिलता के कारण यह उपचार मात्र औपचारिक बन जाता है इसके विपरीत आर्थिक रूप से विपन्न व्यक्ति स्थानीय या क्षेत्रीय स्तर के चिकित्सालयों तथा कम खर्चीले चिकित्सकों से ही वृद्ध व्यक्ति का उपचार कराने के लिए मजबूर हो जाते हैं अध्ययन के दौरान यह भी पाया गया कि विपन्नता के कारण बहुत कुछ उपचार घरेलू स्तर पर मान्य औषधियों द्वारा ही होता रहता है। इस सन्दर्भ में प्रतिचयित वृद्धों की स्थितियों को जानने के लिए उनसे विचार आमंत्रित किये गये। प्राप्त तथ्यों को एकत्र करके तालिका संख्या 6.3 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.३

साठोत्तर वृद्धों की बीमारी-उपचार व्यवस्था का विवरण

क्र.सं.	उपचार व्यवस्था की प्रकृति	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	स्थानीय चिकित्सक के यहाँ जाकर	32	14
2	स्थानीय सरकारी चिकित्सालय में जाकर	140	61
3	घर पर ही चिकित्सक द्वारा	15	07
4	दूरस्थ किसी अच्छे चिकित्सालय में जाकर	22	09
5	अन्य	21	09
	योग	**230**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 61 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध अपनी विभिन्न बीमारियों का उपचार स्थानीय स्तर के सरकारी अस्पतालों में जाकर करवाते हैं क्योंकि यह सरकारी अस्पताल स्थानीय जनता को बेहतर सुविधाएँ उपलब्ध करा रहे हैं अतः वृद्ध कम लागत में अच्छा उपचार प्राप्त करना ज्यादा लाभदायक मानते हैं 14 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध जिनकी आर्थिक स्थिति भी सन्तोषजनक है वह अपनी विभिन्न बीमारियों का उपचार किसी भी स्थानीय चिकित्सक के यहाँ जाकर करवाते हैं; 7 प्रतिशत वृद्ध अपना उपचार घर पर चिकित्सक को बुलाकर कराते हैं क्योंकि शारीरिक दुर्बलता एवं इन्द्रियों की शिथिलता के कारण वह घर से बाहर जाकर उपचार कराने में अपने को असमर्थ पाते हैं। जबकि किसी असाध्य या गम्भीर रोग से पीड़ित होने पर 9 प्रतिशत वृद्धों ने दूरस्थ किसी अच्छे चिकित्सालय में जाकर अपना उपचार करवाया; शेष 9 प्रतिशत वृद्धों ने अपनी विभिन्न बीमारियों का उपचार स्थानीय क्षेत्रीय स्तर के किसी चिकित्सा शिविर, नीम हकीम आदि द्वारा करवाया है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों की विभिन्न बीमारियों के उपचार की व्यवस्था स्थानीय सरकारी अस्पतालों या स्थानीय चिकित्सकों के द्वारा ही कर दी जाती है।

(iv) <u>साठोत्तर वृद्धों का अपने स्वास्थ्य के प्रति दृष्टिकोण</u> :

प्रायः यह पाया गया है कि साठोत्तर वृद्धों की अधिकांश स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ सामाजिक मूल्यों से भी सम्बन्ध रखती हैं व्यक्तियों की यह धारणा होती है कि वृद्धावस्था निश्चित रूप से अस्वस्थता एवं शारीरिक दुर्बलता की ही एक अवस्था होती है जो उनके मानस पटल पर गहराई तक विद्यमान है परिणामतः अनेकों बीमारियाँ एवं शारीरिक कठिनाइयाँ, जिनका कि सरलतापूर्वक उपचार सम्भव है अधिकांश वृद्धों द्वारा प्रकृति की देन तथा कर्मफल की परिणीति समझकर सहज भाव से स्वीकार कर ली जाती है। यदा-कदा यह भी माना जाता है कि एक दुर्बल वृद्ध व्यक्ति अक्सर यह विचार करता है कि अब उसका अन्तिम समय इतना अधिक निकट आ गया है कि उसे अपनी व्याधिमूलक कठिनाइयों के आधार पर स्वयं को एक अन्य पारिवारिक सदस्यों को परेशान करने की आवश्यकता ही नहीं है तथा वह वृद्ध अपने कष्टों को सामान्य रूप से सहन करता सहता है। कुछ

ऐसे भी साठोत्तर वृद्ध होते हैं जो किसी रोग विशेष का समुचित रूप से उपचार कराना ही स्वीकार नहीं करते हैं क्योंकि अतीत में भी उन्होंने बिना किसी उचित उपचार के जीवन व्यतीत किया है। इस सन्दर्भ में यह भी प्रासंगिक हो जाता है कि प्रायः वृद्ध यह भी मानने लगते हैं कि जीवन की अधिकाधिक सुविधायें नयी पीढ़ी को मिलनी चाहिए जिससे वे और अधिक प्रगति कर सकें; हमारा क्या? हम तो अपना जीवन व्यतीत कर चुके हैं जिस कारण वृद्धजन अपने भोजन में पर्याप्त प्रोटीन, विटामिन, वसा तथा अन्य पोषक तत्वों की ओर जागरूक दिखाई नहीं देते हैं सामान्यतः जो मन में आया वह खाया; जितनी इच्छा हुई उतना खाया और जब मिला तभी खा लिया। इससे भी अनेक प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती रहती है। अतः यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि वस्तुतः अध्ययन के लिए प्रतिचयित समस्त वृद्ध अपने-अपने स्वास्थ्य के सन्दर्भ में वैसा अनुभव करते हैं इस हेतु समस्त प्रतिचयित वृद्धों से आग्रह किया गया कि वे इस महत्वपूर्ण पक्ष पर अपने विचार व्यक्त करें। अध्ययन की सरलता एवं बौधगम्यता की दृष्टि से वृद्ध सूचनादाताओं के समक्ष पांच बिन्दु वाला पैमाना (फाइव पॉइन्ट स्केल) प्रस्तुत कर किसी एक बिन्दु पर अपनी स्पष्ट सहमति व्यक्त करने को कहा गया। इस प्रकार जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें एकत्र कर विश्लेषण योग्य बनाने के तालिका संख्या 6.4 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.४

साठोत्तर वृद्धों के अपने स्वास्थ्य के विषय में दृष्टिकोण

क्र.सं.	वृद्धों का दृष्टिकोण	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	बहुत अच्छा स्वास्थ्य है।	62	21
2	अच्छा स्वास्थ्य है।	55	18
3	अनिश्चय की स्थिति रहती है।	122	41
4	खराब स्वास्थ्य है।	35	12
5	बहुत खराब स्वास्थ्य है।	26	08
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 12 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि वृद्धावस्था होने के बाबजूद भी उनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा है क्योंकि वह पूर्व की भाँति ही अपनी दिनचर्या एवं खानपान का विशेष

ध्यान रखते है; 18 प्रतिशत वृद्ध यह स्वीकार करते है कि इस आयु में भी तुलनात्मक रूप से उनका स्वास्थ्य अच्छा है। अनिश्चय की स्थिति वाले पर प्रतिशत (सर्वाधिक) वृद्ध यह स्पष्ट करते है कि अब उन्हें स्पास्थ्य की किचिंत मात्र भी चिन्ता नहीं है। क्योंकि अब तो अवसान का समय है तथा कभी भी अन्तिम विदाई सम्भव है; 12 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते है कि उनका स्वास्थ्य निरन्तर खराब रहता है। जबकि शेष 8 प्रतिशत वृद्धों का स्वास्थ्य बहुत खराब पाया गया क्योंकि वह गम्भीर एवं असाध्य रोग जैसे दमा, टी.वी. कैंसर, पक्षाघात, श्वाँस आदि से पीड़ित हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों का स्वास्थ्य अनिश्चय की स्थिति वाला अच्छा तथा बहुत अच्छा प्रतीत होता है।

(२) पृथकत्व एवं एकान्तता सम्बन्धी समस्यायें :

पृथकत्व एवं एकान्तता ऐसे दो शब्द हैं जो वृद्धों एवं समाज के विभिन्न व्यक्तियों के मध्य अस्तित्वमान सम्पर्को, भावात्मक एवं वैचारिक विनिमय तथा अन्त क्रियाओं की प्रकृति एवं तीव्रता को सूचित करने में सहायक सिद्ध होते हैं **टाउनसेण्ट पीटर** (1957)[16] ने सामाजिक सम्पर्क के आधार पर पृथकत्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि दो व्यक्तियों का चाहे वे पड़ौसी ही क्यों न हो, कभी कभी या पूर्ण निर्धारित आधार पर सम्पर्क में आना, आवासीय सीमा के अन्दर या बाहर मिलना तथा आपस में एक-दूसरे के विचारों का आदान-प्रदान करने या नकसे की स्थिति को उजागर करता है। **इथेल शान्स** (1968)[17] का मानना है कि सामाजिक पृथक्करण का अभिप्राय है व्यक्ति एवं उसके अनुयायियों के मध्य सार्वभौमिक एवं आवश्यक सम्प्रेषण का अभाव। इसी प्रकार **लोवेन्थल एम.एफ.** (1964)[18] ने उन्हीं व्यक्तियों को अलगाया हुआ माना जिनका अपने मित्रों एवं रिश्तेदारों से कम से कम विगत तीन वर्षो से कोई सम्पर्क न रहा हो इसी प्रकार टन्सटाल (1964)19 ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया कि सामाजिक पृथकत्व एक ऐसी सामाजिक दशा है जो न केवल वृद्धों को प्रभावित करती है बल्कि युवा वय-समूहों को भी प्रभावित करती है। आपके अनुसार अकेला हो जाना, अकेला रहना, अकेलापन महसूस करना या व्यक्तियों द्वारा अलगाँव की स्थितियाँ ही पृथकत्व के अन्तर्गत आते हैं। अतः पृथकत्व के अन्तर्गत सामाजिक सम्बन्धों के विभिन्न स्वरूपों में

पाये जाने वाले तुलनात्मक संचार या वैचारिक सम्प्रेषण के अभाव को ही माना जाता है। प्रायः सामाजिक सम्पर्क, अतक्रियाएँ एवं संचार प्रक्रिया ही सामाजिक सम्बन्धों के निर्माण के आधार माने जाते हैं इनके अभाव में व्यक्ति का दूसरों से सम्पर्क विच्छेद (पृथकत्व) हो जाना स्वाभाविक परिणाम माना जायेगा। इसलिए पृथकत्व की स्थिति व मात्रा का संज्ञान करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि किसी निश्चित सीमा में साठोत्तर वृद्धों के अर्थपूर्ण मानवीय सम्पर्कों को समझा जाये।

प्रस्तुत अध्ययन में प्रतिचयित समस्त साठोत्तर वृद्ध सूचनादाताओं की पृथकत्व एवं एकान्तता सम्बन्धी समस्याओं को उजागर करने के लिए अन्य वृद्धों के साथ गपशप करने की स्थिति, मेल-मिलाप की आवृति, वृद्धों हेतु आयोजित होने वाले कार्यक्रमों में वृद्धों का सम्मिलित होना, सम्मिलन की प्रकृति, पारिवारिक सदस्यों से विविध जानकारी प्राप्त होने की स्थिति, अकेलेपन की स्थिति एवं इसके लिए उत्तरदायी कारकों का विश्लेषण किया गया है।

(i) साठोत्तर वृद्धों द्वारा अन्य के साथ परिहास की स्थिति :

वृद्धावस्था को प्राप्त वृद्धजन सामान्यतः अपनी समायु के पुरुष एवं महिला साथियों के साथ मिल बैठकर हास-परिहास करते हैं या परम्परागत जीवन शैली में होने वाले अनेकों परिवर्तनों के विषय में आलोचनायें-प्रत्यालोचनाऐं करके अपने पृथकत्व एवं एकान्तता की समस्या को समाप्त करने का प्रयास करते हैं जिन वृद्धों को यह अवसर प्राप्त नहीं होता है वह तनाव या विषाद से ग्रसित हो जाते हैं। उनकी इस स्थिति को ज्ञात करने के लिए प्रतिचयित वृद्धों से उनके विचार आमंत्रित किये गये तथा प्राप्त विचारों को तालिका संख्या 6.5 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ६.५

साठोत्तर वृद्धों द्वारा समायु वृद्धों के साथ हास-परिहास की स्थिति

क्र.सं.	वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	हास-परिहास करते हैं।	215	72
2	हास-परिहास नहीं करते हैं।	85	28
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 72 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि वह अपनी हम उम्र के व्यक्तियों के साथ मिल बैठकर हास–परिहास करते हैं जबकि शेष 28 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने यह स्वीकार किया कि वे इस प्रकार के अवसरों से वंचित रह जाते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अधिकांश प्रतिचयित वृद्ध सूचनादाता समायु वृद्धों के साथ हास–परिहास करते हैं जो उनके अएकान्तता का प्रतीक ही माना जायेगा।

(ii) <u>साठोत्तर वृद्धों द्वारा हास-परिहास करने की समयावधि का विवरण</u> :

सामान्यतः यह माना जाता है कि वृद्ध परिवार एवं स्वास्थ्य की ओर से चिन्ता मुक्त होते हैं तथा उनके पास पर्याप्त समय होता है जिसका सद्उपयोग करने के लिए वह नियमित रूप से हास–परिहास में व्यस्त रहते है। या अन्य ऐसे कार्यों में व्यस्त रहते हैं जो उनकी एकान्तता की स्थिति को समाप्त करने में सहायक सिद्ध होते हैं। इसके विपरीत विपन्न या विभिन्न कष्टों से ग्रसित वृद्ध यदाकदा ही हास–परिहास के अवसर को प्राप्त कर पाते हैं। अतः उनकी इस स्थिति को ज्ञात करने के लिए वृद्धों से यह पूछा गया कि समयावधि के आधार पर यह स्पष्ट करें कि वह किस रूप में हास–परिहास करते रहते हैं? इस सन्दर्भ में जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें श्रेणीवद्ध करके तालिका संख्या 6.6 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.६

<u>साठोत्तर वृद्धों द्वारा हास-परिहास करने की समयावधि (आवृत्ति) का विवरण</u>

क्र.सं.	हास-परिहास की समयावधि	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	लगभग प्रतिदिन	65	30
2	सप्ताह में एक दिन	32	15
3	समय मिलने पर	118	55
	योग	**215**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 30 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध लगभग प्रतिदिन अन्य व्यक्तियों के साथ मिल–बैठकर अपने विचारों

का आदान–प्रदान करते हैं तथा हास–परिहास करते हैं सामान्यतः उनका हास–परिहास का समय अपरान्ह भोजनोपरान्त (4.00 से 6.00 सायं) ही होता है जबकि 15 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि उन्हें यह अवसर सप्ताह में एक बार ही मिल पाता है जब वह कभी मन्दिर आदि के दर्शनार्थ आते हैं यथा–सोमवार, मंगलवार, शनिवार ! सप्ताह के इन्हीं दिनों एवं विभिन्न स्थानों पर यह वृद्ध विचार विमर्श करते हैं तथा हास–परिहास करते हैं। शेष 55 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह स्पष्ट करते हैं कि हास–परिहास के लिए उनके पास कोई निश्चित समय एवं स्थान नहीं है; जब भी कोई आ गया या काम–काज से थोड़ा समय मिल गया तो कुछ आवश्यक एवं प्रासंगिक वार्तालाप हो गया तथा आवश्यक सूचनाओं का भी आदान–प्रदान करके मन की व्यथा को कम कर लिया।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपनी सुविधानुसार समय निकालकर या नियमित रूप से प्रतिदिन (लगभग) अपनी समायु व्यक्तियों के साथ यथोचित वार्तालाप करके परस्पर सम्बन्ध एवं सम्पर्क बनाये हुए हैं जो उनकी एकान्तहीनता का ही प्रतीक है।

(iii) विभिन्न सामाजिक क्रिया-कलापों में साठोत्तर वृद्धों की सहभागिता की स्थित :

साठोत्तर वृद्धों के हितार्थ आयोजित होने वाले अनेकों सामाजिक कार्यक्रमों उत्सवों, पर्वो गोष्ठियों आदि में वृद्धों की यथाशक्ति सहभागिता भी उपयोगी मानी जाती है। इससे युवा पीढ़ी को अतीत के अनुभवों का लाभ मिलता है वहीं कुछ अच्छा करने की भी प्रेरणा प्राप्त होती है। क्योंकि प्रत्येक युवा को एक ना एक दिन वृद्धावस्था के दौर से गुजरना ही पड़ता है अतः उसे पहले से ही इस अवस्था हेतु तैयारी कर लेनी चाहिए प्रायः जो वृद्ध अधिक स्वस्थ्य एवं सक्रिय होते हैं वे विभिन्न प्रकार के सामाजिक कार्यक्रमों में नियमित रूप से सहभागी होते हैं। इसके विपरीत परिवार की विभिन्न समस्याओं आदि के मोहपाश में उलझने के कारण कुछ वृद्ध इस प्रकार के कार्यक्रमों के प्रति उदासीनता रखते हैं। इसके अतिरिक्त शारीरिक समता, शिथिलता आदि भी अपना विशेष प्रभाव डालती है। अतः इस स्थिति को ज्ञात करने के लिए प्रतिचयित वृद्धों से उनके विचार आमंत्रित किये गये। प्राप्त समस्त विचारों को एकत्र कर विश्लेषण के उद्देश्य से तालिका संख्या 6.7 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.७

क्र.सं.	वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सहभागिता रहती है।	241	80
2	सहभागिता नहीं रहती है।	59	20
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 80 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध किसी न किसी रूप में आयोजित किये जाने वाले सामाजिक आयोजनों में सहभागी होते हैं जबकि शेष 20 प्रतिशत वृद्ध इस प्रकार के किसी भी कार्यक्रम में सहभागी नहीं होते हैं।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध सामाजिक स्तर पर आयोजित होने वाले विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों में यथाशक्ति सहभागी होते रहते हैं जो उनके सक्रिय जीवन का प्रतीक है।

(iv) सामाजिक कार्यक्रमों में साठोत्तर वृद्धों की सहभागिता की प्रकृति :

समाज में समय-समय पर या नियमित रूप से आयोजित होने वाले सामाजिक स्तर के कार्यक्रमों में साठोत्तर वृद्धों की सहभागिता की प्रकृति एवं मात्रा का मूल्यांकन करने के लिए प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के समक्ष तीन प्रकार के विकल्प प्रस्तुत कर किसी एक पक्ष में अपनी सहमति व्यक्त करने का आग्रह किया गया। साठोत्तर वृद्धों द्वारा प्रस्तुत विचारों को संकलित कर विश्लेषण हेतु तालिका संख्या 6.8 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.८

प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों द्वारा सामाजिक कार्यक्रमों में सहभागिता की प्रकृति

क्र.सं.	वृद्धों की सहभागिता	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	नियमित रूप से सहभागिता	59	24
2	अनियमित रूप से सहभागिता	128	53
3	आस-पड़ौस तक	54	23
	योग	**241**	**100**

उपरोक्त तालिका अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 24 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध समय-समय पर आयोजित होने वाले सामाजिक कार्यक्रमों में नियमित रूप से सहभागी होते हैं जिसका कारण है कि अधिकांश वृद्ध शिक्षित परिवारों के हैं तथा क्षेत्रीय स्तर के किसी न किसी संगठन के सदस्य भी हैं अतः इनकी सहभागिता की सुनिश्चित है जबकि 53 प्रतिशत वृद्ध यह स्वीकार करते हैं कि वे अपनी पारिवारिक परिस्थितियों के आधार पर ही कभी-कभी सहभागी होते हैं तथा सहभागी होना या न होना उनकी स्वेच्छा पर आधारित है जिसमें कोई बाध्यता नहीं है क्योंकि बहुत से आयोजन केवल प्रदर्शनार्थ एवं अर्थहीन होते हैं। जिनमें सहभागिता मात्र आस-पड़ौस तक ही सीमित है इससे उनके स्वयं के कार्यो के साथ-साथ सहभागिता भी होती रहती है।

यहाँ यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि झाँसी एक ऐतिहासिक एवं धार्मिक जिला है जिसके विभिन्न कस्बों तथा मुख्य नगर झाँसी में अनेक धार्मिक आयोजन किये जाते हैं जिनमें श्रीमद् भागवत कथा का आयोजन, श्रीरामचरितमानस कथा का आयोजन, धर्म गुरुओं की जयन्ती रासलीला, नाटक, नौटंकी, रसिया दंगल, माँ भगवती के जागरण, दशहरा मिलन तथा कुछ विशिष्ट देवालयों में नियमित रूप से सुबह-शाम व्यक्तियों द्वारा आयोजित भक्ति-गीत आदि प्रमुख है। इसके अतिरिक्त विभिन्न संगठनों द्वारा पानी, बिजली, स्वच्छता आदि से सम्बन्धित सामूहिक आन्दोलनों, घटना, घेराव भी प्रमुख है इस प्रकार के अनेकों सामाजिक कार्यक्रमों में युवाओं की तुलना में स्वस्थ एवं सक्रिय वृद्धों को अधिक आनन्दानुभूति होती है तथा उनका एकांकीपन भी समाप्त हो जाता है।

अतः प्रतिचयित वृद्धों द्वारा प्रस्तुत सामाजिक सहभागिता सम्बन्धी तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अधिकांश वृद्ध पारिवारिक उत्तरदायित्वों से समय निकालकर यथाशक्ति सामाजिक कार्यक्रमों में अधिक से अधिक सहभागी होते रहते हैं जिससे उनकी एकान्तता एवं पृथक्कत्व जैसी समस्याओं का निदान भी होता रहता है।

(v) एकान्तता की समस्या के प्रति साठोत्तर वृद्धों के विचार :

प्रतिचयित वृद्धों से पुनः यह जानने का प्रयास किया गया कि वे स्वयं एकान्तता की समस्या के प्रति क्या अनुभव करते हैं? इस सन्दर्भ में जो विचार

उनसे प्राप्त हुए उन्हें एकत्र करके तालिका संख्या 6.9 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ६.९

एकान्तता की समस्या के प्रति साठोत्तर वृद्धों के विचारों का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	एकान्तता का अनुभव करते हैं।	56	19
2	एकान्तता का अनुभव नहीं करते हैं।	244	81
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 81 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध एकान्तता जैसी समस्या का अनुभव नहीं करते हैं जबकि शेष 19 प्रतिशत वृद्ध एकान्ता की समस्या का अनुभव करते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्रतिचयित अधिकांश साठोत्तर वृद्ध एकान्तता या अकेलेपन का अनुभव नहीं करते हैं।

(vi) एकान्तता के उत्तरदायी कारणों का विवरण :

साठोत्तर वृद्धों की एकान्तता के विषय में पुनः जानने की जिज्ञासा हुई कि जिन 19 प्रतिशत वृद्धों ने एकान्तता की समस्या को अपने से सम्बद्ध पाया है तो इसके कारण क्या है? इस विषय में उन्होंने जो कारण स्पष्ट किये उन्हें 4 समूहों (विकल्पों) में विभक्त करके तालिका संख्या 6.10 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१०

एकान्तता हेतु उत्तरदायी कारणों का विवरण

क्र.सं.	एकान्तता के कारण	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	शारीरिक शिथिलता का होना	32	57
2	व्यक्तियों से विचार न मिलना	42	75
3	परिवारिक बन्धन	14	25
4	अन्य व्यक्तियों के पास समयाभाव होना	38	68

नोट - खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। कुल सूचनादाता = 56

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 57 प्रतिशत (32) वृद्ध यह मानते हैं कि शारीरिक शिथिलता के कारण ही उनकी एकान्ता का

मूल कारण है जबकि 75 प्रतिशत (42) वृद्धों का मानना था कि जहाँ वह रहते हैं वहाँ के अन्य व्यक्तियों से उनके विचार नहीं मिलते हैं क्योंकि वह पूर्णतः परम्परावादी है जिससे उनके पास कोई नहीं आना चाहता है इसके विपरीत का इतना बन्धन है कि न तो वे किसी से मिल सकते हैं और न ही कोई उनसे मिल सकता है यदा-कदा जब भी उन्हें समय मिलता है या कोई उनके यहाँ आ जाता है तो वह धीमी आवाज में परिवार की व्यवस्थाओं को सम्प्रेषित करने लगते है; 68 प्रतिशत वृद्धों ने दुःख के साथ स्पष्ट किया कि आज के इस भौतिकवादी युग में किसके पास इतना समय है जो हमारे पास बैठकर हमारी समस्याओं को सुने एवं उनके समाधान ढूँढ़े। हाँ जब उनका स्वार्थ होता है तो वे हमदर्दी दिखाने आ जाते हैं और स्वार्थ सिद्धि के उपरान्त पुनः वे नहीं आते।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि वृद्ध व्यक्तियों से वैचारिक वैभिन्य, व्यक्तियों की व्यस्तता से जनित समयाभाव शारीरिक शिथिलता एवं पारिवारिक कठोर नियंत्रण (निगरानी) ही एकान्तता के आधारभूत कारण प्रतीत होते हैं।

(vii) <u>साठोत्तर वृद्धों द्वारा एकान्तता अनुभव करने के कारण</u> :

जिन प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों ने यह स्वीकार किया कि वे एकांकीपन का अनुभव नहीं करते तो मन में यह जिज्ञासा हुई कि इनसे उन कारणों या परिस्थितियों की भी जानकारी लाई जाये जिनके होते हुए वृद्ध ऐसा अनुभव करते हैं। इस सन्दर्भ में साठोत्तर वृद्धों द्वारा प्राप्त तथ्यों को एकत्र करके तालिका संख्या 6.11 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ६.११

एकान्तता हेतु उत्तरदायी कारणों का विवरण

क्र.सं.	एकान्तता अनुभव न करने के कारण	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पारिवारिक सदस्यों से घिरा रहना।	174	71
2	आस-पड़ोसियों का अच्छा व्यवहार होना।	170	70
3	आश्रित न होना।	95	39
4	वैचारिक आदान-प्रदान का अभाव होना।	180	74

नोट **– खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। कुल सूचनादाता = 244**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 71 प्रतिशत वृद्ध यह मानते हैं कि अधिकांशतः वह पारिवारिक सदस्यों से घिरे रहते हैं जिसके कारण उन्हें कभी भी अकेलेपन का अहसास नहीं होता है; 70 प्रतिशत प्रतिचयित वृद्ध यह स्वीकार करते हैं कि उनके साथ आस-पड़ोसियों का व्यवहार इतना अच्छा है कि वे किसी भी समय सूनापन अनुभव नहीं करते हैं प्रायः आते-जाते अन्य व्यक्ति उनकी कुशलता पूछ लेते हैं तथा अपनत्व, सहानुभूति, स्नेह आदि का प्रदर्शन भी करते हैं। 39 प्रतिशत वृद्ध यह मानते हैं कि वह स्वास्थ्य एवं सम्पत्ति की दृष्टि से सम्पन्न हैं अतः वे किसी पर भी आश्रित नहीं हैं तथा वे किसी की भी मद्द नहीं चाहता बल्कि आवश्यकतानुसार वह दूसरों की सहायता कर देते हैं। 74 प्रतिशत वृद्धों का मानना है कि उनके तथा अन्य व्यक्तियों के वैचारिक आदान-प्रदान का अभाव नहीं है तथा वह विभिन्न माध्यमों से इच्छित सूचनाएँ प्राप्त करते रहते हैं। जिससे उनके जीवन में खालीपन नहीं रहता।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि पारिवारिक सदस्यों से घिरा रहना; आस पड़ौसियों का अच्छा व्यवहार होना; वैचारिक आदान-प्रदान का अभाव न होना तथा किसी पर आश्रित न होना ही वे प्रमुख कारण एवं स्थितियाँ हैं जो एकान्तता को समाप्त करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

(३) <u>सुरक्षा एवं देखभाल सम्बन्धी समस्यायें</u> :

सामाजिक सुरक्षा से तात्पर्य एक ऐसी सुरक्षा से है जो एक समाज समुचित साधनों द्वारा अपने नागरिकों को उन अज्ञात आपदाओं तथा आक्समिक संकटों के लिए प्रदान करता है जिनकी सम्भावना सदैव समाज में विद्यमान रहती है जो सामान्यतः अज्ञान, बेकारी, बीमारी, दुर्घटना जैसे संकटों से रक्षा के लिए एक समाज द्वारा अपने सदस्यों को दी जाती है। वृद्धावस्था एक प्रकार से शारीरिक शैथिल्यजनित पराधीनता की स्थिति होती है जो पारिवारिक सदस्यों एवं समाज के सदस्यों से ऊपरी सुरक्षा एवं देखभाल की अपेक्षा करती है। इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा एवं देखभाल को ही वृद्धों की एक महत्वपूर्ण समस्या के रूप में माना जाता है। जैसे कि सर्वविदित है कि अतीत को यदि दृष्टिगत किया जाये तो स्पष्ट हो जाता है कि साठोत्तर वृद्धों की सुरक्षा एवं देखरेख की जिम्मेदारी परिवरिक सदस्यों एवं नाते-रिश्तेदारों पर सबसे अधिक थी साठोत्तर वृद्धों की सेवा करना

धार्मिक दृष्टि से पुण्य का कार्य एवं मोक्ष का मार्ग माना जाता है। परन्तु वर्तमान दशा में औद्योगीकरण, नगरीकरण जैसी प्रक्रियाओं के समन्वित प्रभाव एवं परिणाम से पारिवारिक एवं नातेदारी व्यवस्था में भी परिवर्तन दृष्टिगत होने लगे हैं जिसके परिणाम स्वरूप साठोत्तर वृद्धों को प्रदान की जाने वाली सुरक्षा एवं देखभाल सम्बन्धी सुविधाओं की प्राचीन परम्परा अब प्रभावित होने लगी है। हमारे समाज में सरकारी एवं अर्द्ध सरकारी अथवा स्थानीय निकायों में कार्य करने के उपरान्त सेवानिवृत्त होने वाले साठोत्तर वृद्धों की सुरक्षा आदि की व्यवस्था तो बीमा एवं पेंशन के आधार पर सुनिश्चित रहती है किन्तु सामान्य साठोत्तर वृद्धों के लिए ऐसी कोई भी उपयोगी व्यवस्था नहीं है उनका आधार मात्र परिवार ही होता है। जिस पर वृद्धों की सुरक्षा एवं देखभाल का पूर्ण उत्तरदायित्व केन्द्रित होता है जबकि विखण्डित एवं विघटित परिवारों में यह स्थिति और भी अधिक भयानक हो जाती है ऐसी स्थिति में प्रायः साठोत्तर वृद्ध या वृद्धा को नारकीय जीवन व्यतीत करने को विवश होना पड़ता है। अपने जीवन के अन्तिम चरण में वृद्ध व्यक्ति न सुखपूर्वक जीवनयापन कर पाते हैं और न ही संसार से मुक्त हो पाते हैं। अतः उनकी इस स्थिति के विषय में प्रतिचयित समस्त साठोत्तर वृद्ध सूचनादाताओं से उनके विचार ज्ञात किये गये तथा उनके द्वारा व्यक्त विचारों को एकत्र करके तालिका संख्या 6.12 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१२

साठोत्तर वृद्धों की सुरक्षा एवं देखभाल के प्रमुख उत्तरदायी पक्ष

क्र.सं.	उत्तरदायी पक्ष	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	केवल पारिवारिक सदस्यों पर	187	64
2	सरकार पर	56	19
3	समुदाय पर	21	07
4	नाते-रिश्तेदारों पर	24	08
5	सामाजिक संस्थाओं एवं स्वयंसेवी संगठनों पर	06	02
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 64 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह व्यक्त करते हैं कि साठोत्तर वृद्धों की सुरक्षा एवं देखरेख की प्रमुख जिम्मेदारी पारिवारिक सदस्यों की ही होती है और यह परम्परा लम्बे समय से चली आ रही है इसके अभाव में परिवार एवं पारिवारिक सदस्यों की उपयोगिता ही क्या? उनका मानना था कि एक-माता सन्तति की निरन्तरता को बनाये रखने के लिए संतानों को जन्म देते हैं तथा यथाशक्ति उनका लालन-पालन करते हुए उन्हें सामर्थवान् बनाते हैं इसके साथ-साथ वह यह भी आशा तथा अपेक्षा करते हैं कि उनकी यही सन्तति वृद्धावस्था में देखभाल करेगी परन्तु ऐसा न होने की दशा में परिवार की मान-मर्यादा एवं प्रतिष्ठा को आघात पहुँचता है प्रत्युत सामाजिक मूल्यों का अवमूल्यन होकर व्यवस्था लड़खड़ाने लगती है इसके अतिरिक्त 19 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह भी स्पष्ट करते हैं कि अगर वृद्धावस्था में सुरक्षा एवं देखभाल का दायित्व परिवारिक सदस्य नहीं संभाल सकते तो यह कार्य सरकार को सरकारी स्तर से करना चाहिए इसका कारण यह है कि कुछ ऐसी जटिल स्थितियाँ होती हैं जहाँ साठोत्तर वृद्ध अकेले ही जीवन निर्वाह करते हैं उनका कोई परिवार ही नहीं होता अतः ऐसी स्थिति में यह कार्य सरकार को करना चाहिए। केवल 7 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध ऐसे हैं जो इसके लिए सम्पूर्ण समुदाय को उत्तरदायी मानते हैं क्योंकि सरकार हर समस्या का निदान नहीं कर सकती है अतः ऐसी स्थिति में हमारा यह उत्तरदायित्व बनता है कि बहुत सी समस्याओं का निदान सामूहिक स्तर पर ही करना चाहिए इसके साथ-साथ 8 प्रतिशत ऐसे साठोत्तर वृद्ध हैं जो यह स्पष्ट करते हैं कि परिवार के सदस्यों के पश्चात् वह अपने नाते-रिश्तेदारों पर विश्वास करते हैं अतः नाते-रिश्तेदारों का यह कर्तव्य भी बनता है कि वे यथाशक्ति उस वृद्ध/वृद्धा की सुरक्षा एवं देखभाल का भार उठाये; केवल 2 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने यह सुझाव दिया है कि यह कार्य विभिन्न सामाजिक संस्थाओं एवं स्वयंसेवी संगठनों को करना चाहिए।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्धों ने यह व्यक्त किया है कि वृद्धों की सुरक्षा एवं देखरेख का उत्तरदायित्व पारिवारिक सदस्यों एवं सरकार पर ही होना चाहिए।

(४) <u>अधिसत्ता एवं प्रभुत्व अस्तित्व जनित समस्यायें</u> :

साठोत्तर वृद्धों की समस्याओं का यह पक्ष पूर्णतः समाज–मनोवैज्ञानिक है वर्तमान आधुनिक जटिल सामाजिक परिवेश में पारिवारिक एवं सामुदायिक स्तर पर अपनी विशिष्ट अधिसत्ता एवं प्रभुत्व को अक्षुण्य बनाये रखना एक कठिन कार्य है। यही कारण है कि साठोत्तर वृद्धों/वृद्धाओं को अपनी परम्परागत पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभुत्व को यथावत बनाये रखना अत्यन्त कठिन कार्य प्रतीत होता है। सामान्यतः यह देखा गया है कि साठोत्तर वृद्ध पुरुषों की अपेक्षा साठोत्तर वृद्ध महिलाओं को इस सन्दर्भ में परेशानी अधिक होती है। इसका कारण यह है कि साठोत्तर वृद्ध की अधिसत्ता का सम्बन्ध प्रायः अपनी सन्तानों से ही होता है तथा वृद्ध के पास पैतृक सम्पत्ति आदि के अधिकार सुरक्षित होते हैं जिसकी विवशता से बच्चों को वृद्ध की अधिसत्ता एवं उसका प्रभुत्व यथाशक्ति स्वीकार करना ही पड़ता है इसके विपरीत प्रायः साठोत्तर वृद्ध महिला की अधिसत्ता एवं प्रभुत्व का सम्बन्ध उस परिवार के बच्चों एवं बहुओं से होता है। वस्तुतः बहुएँ दूसरा रक्त सम्बन्ध रखती हैं तथा उनकी पारिवारिक परिस्थितियाँ भी अलग–अलग होती है तथा वह जिस परिवेश से अपने ससुराल आती हैं वैसा वातावरण उन्हें ससुराल में नहीं मिलता है अतः इस स्थिति वह परिवार की साठोत्तर वृद्धा से तादात्म्य स्थापित नहीं कर पाती हैं। परिणामतः उनके मध्य प्रभुत्व अस्तित्व संघर्ष का त्रिकोण बन जाता है।

इस सन्दर्भ में **एल.एस. मिश्रा (1982)**[20] के द्वारा एक तुलनात्मक अध्ययन द्वारा निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया कि भारतीय समाज में पारिवारिक स्तर पर वृद्धों की सत्ता प्रस्थिति एवं प्रतिष्ठा निरन्तर अद्योगति की ओर निरन्तर अग्रसर होती जा रही है। यही उनकी मनोवैज्ञानिक स्थितियों का सर्वाधिक संघातक पक्ष है। यह अत्यन्त दयनीय है तथा वृद्धों की समस्याओं को गम्भीरता से समझने एवं निदान के उपाय प्रस्तुत करने की माँग भी करता है। इसका कारण यह है कि साठोत्तर वृद्ध व्यक्ति अनुत्पादक एवं अनाश्रित अवस्था में होता है जिसके साथ वैचारिक संघर्ष के स्थान पर अधिक से अधिक सहानुभूति प्रदर्शित करने की आवश्यकता है तथा वृद्धों को भी अपनी जीवन–शैली एवं दृष्टिकोण में यथाशक्ति परिवर्तन करना उपयोगी सिद्ध होगी।

(i) साठोत्तर वृद्धों द्वारा अधिसत्ता एवं प्रभुत्व बनाये रखते हुए किये जाने वाले उपाय :

उपरोक्त विषय में जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रतिचयित समस्त साठोत्तर वृद्धों से यह प्रश्न पूछा गया कि वृद्धावस्था में अपनी अधिसत्ता एवं प्रभुत्व को बनाये रखने के लिए वृद्धों को किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए? इस विषय में उन्होंने जो उत्तर दिये उन्हें समानता के आधार पर पाँच वर्गो में विभक्त कर तालिका संख्या 6.13 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१३

अधिसत्ता एवं प्रभुत्व बनाये रखने के लिए वृद्धों के प्रयासों का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों का प्रभाव	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	परिवारिक सदस्यों से विचार विमर्श करके निर्णय लेना।	117	39
2	सामाजिक सहभागिता को कम करना।	29	10
3	परिस्थितिनुसार कार्य करना।	52	17
4	विवाहित सन्तानों को पारिवारिक दायित्व सौंपना।	75	25
5	पारिवारिक सदस्यों पर कठोर नियंत्रण रखना।	22	07
6	परिवार से अलग रहना।	05	02
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 39 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि पारिवारिक सदस्यों के साथ विचार-विमर्श करने के उपरान्त ही निर्णय लिया जाना चाहिए जिससे परिवार में अधिसत्ता एवं प्रभुत्व बना रहता है क्योंकि इससे परिवार के प्रत्येक सदस्य के अहं की संतुष्टि होती रहती है जबकि 25 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का मानना था कि विवाहित सन्तानों को पारिवारिक उत्तरदायित्वों को सौंप देने से अधिसत्ता एवं प्रभुत्व अस्तित्व की समस्या कम हो जाती है सन्तानें स्वयं अपने आय-व्यय एवं दायित्व निर्वहन के मध्य तादात्म्य स्थापित करते रहते हैं इसके साथ-साथ 17 प्रतिशत सूचनादाताओं का

मानना था कि व्यक्ति को अधिक कठोर न होकर लचीला व्यवहार अपनाना चाहिए तथा परिस्थितिनुसार कार्य करना चाहिए केवल 10 प्रतिशत सूचनादाताओं का मानना था कि धीरे-धीरे सामाजिक सहभागिता को कम करके घर-परिवार तक ही सीमित हो जाना चाहिए तथा अपनी परिस्थितिनुसार कार्य करना चाहिए; 7 प्रतिशत वृद्धों का मानना था कि अपनी प्रतिष्ठा एवं इज्जत को यथा स्थिति में रखना है तो पारिवारिक सदस्यों से अलग रहकर अपना जीवनयापन करो। शायद यह ऐसे वृद्ध हैं जिनके जीवन साथी जीवित हैं तथा आर्थिक दृष्टि से यह सम्पन्न प्रतीत होते हैं। केवल 2 प्रतिशत वृद्धों का यह मानना था कि पारिवारिक सदस्यों पर कठोर नियंत्रण रखने से व्यक्ति की अधिसत्ता एवं प्रभुत्व बना रहता है। इसका कारण यह है कि इस प्रकार के व्यवहार से सभी व्यक्ति डरते रहते हैं तथा प्रतिकार करने का साहस वह नहीं जुटा पाते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि पारिवारिक सदस्यों के साथ विचार-विमर्श करना, विवाहित सन्तानों को परिवार के उत्तरदायित्व सौंपना तथा परिवार की परिस्थिति के अनुसार कार्य करना ही अधिसत्ता एवं प्रभुत्व बनाये रखने हेतु लाभदायक सिद्ध होते हैं।

(ii) साठोत्तर वृद्धों की दिनचर्या का विवरण :

किसी भी व्यक्ति की अधिसत्ता एवं प्रभुत्व के अस्तित्व का सीधा सम्बन्ध उसकी जीवन शैली से होता है। व्यक्ति अपने स्वभाव के आधार पर ही परिवार एवं समाज में कुछ ऐसे कार्य-कलाप सम्पन्न करता है जिनके आधार पर उसकी अधिसत्ता, प्रभाव एवं प्रभुत्व निश्चित किया जाता है। इसी से यह भी ज्ञात होता है कि व्यक्ति का व्यक्तित्व किस प्रकार है? क्या वह केवल स्वहित की बात करता है या वह परार्थी भी है? इस स्थिति को ज्ञात करने के लिए प्रतिचयित सूचनादाताओं से तथ्यों को प्राप्त किया गया तथा उन्हें तालिका संख्या 6.14 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१४

साठोत्तर वृद्धों द्वारा किये जाने वाले आवश्यक क्रिया-कलापों का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों के क्रिया-कलाप	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पारिवारिक दायित्वों में सहयोग करना।	220	73
2	शिशुओं के व्यक्तित्व विकास सम्बन्धी कार्यों में योगदान करना।	165	55
3	स्वाध्याय भजन, पूजन एवं तीर्थ यात्रा करना।	130	43
4	समाज में पिछड़ेपन के उत्थान हेतु प्रयास करना।	70	23

नोट – खुला प्रश्न है अतः योग नहीं होगा। कुल सूचनादाता = 300

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 73 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि यथाशक्ति पारिवारिक उत्तरदायित्वों को निभाने में सहयोग करना चाहिए क्योंकि यही परिवार का प्रमुख कार्य है। इससे आपसी सौहार्द बना रहता है तथा परिवार के विषय में पूर्ण जानकारी भी बनी रहती है। जिससे घर के सभी सदस्य अधिक से अधिक सम्मान करते हैं। इसी प्रकार 55 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह स्पष्ट करते हैं कि युवा वर्ग की तुलना में वृद्ध छोटे बच्चों की देखभाल अधिक अच्छी प्रकार से कर सकते हैं क्योंकि उन्हें जीवन का एक लम्बा अनुभव होता है तथा वह शिशुओं के मनोविज्ञान से भी परिचित होते हैं। शिशु उनकी प्रतिष्ठा एवं सम्मान के भी प्रतीक होते हैं। इसी प्रकार 43 प्रतिशत वृद्धों ने स्पष्ट किया कि स्वाध्याय, भजन, पूजन एवं तीर्थाटन करना उनका मनपसन्द कार्य है इससे मन को शान्ति मिलती है तथा घर के उत्तरदायित्वों से मुक्ति का यह सरल मार्ग है इसके साथ–साथ 23 प्रतिशत ऐसे वृद्ध हैं जिन्होंने व्यक्त किया कि वे समय-समय पर समाज के पिछड़े एवं कमजोर वर्ग के लोगों को शिक्षा एवं सुभाव देते रहे कि जिससे उनका उत्थान होता रहे तथा वह समाज की मुख्य धारा से जुड़ जाये।

अतः निष्कर्ष के रूप यह कहा जा सकता है कि दैनिक दिनचर्या के कार्यो

के अतिरिक्त पारिवारिक उत्तरदायित्वों में यथा सम्भव सहयोग करना, शिशुओं की देखभाल तथा उनके व्यक्तित्व का विकास करना, स्वाध्याय, पूजा पाठ तीर्थाटन करना तथा समाज के उत्थान हेतु प्रयास करना आदि प्रमुख कार्य है। ये सभी कार्य वृद्धों की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक एवं पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभुत्व बनाये रखने में सहायक सिद्ध होते हैं।

(५) आर्थिक समस्यायें :

व्यक्ति की प्रसन्नता एवं समृद्धि का आधार धन होता है धन से ही व्यक्ति की अनेकानेक आवश्यकताऐं पूर्ण होती हैं जहाँ तक साठोत्तर वृद्धों का सन्दर्भ है प्रायः यह देखा गया है कि इनकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए परिवार की ओर से कोई ठोस व्यवस्था नहीं की जाती हैं वृद्धावस्था में धन की उचित व्यवस्था न होने के कारण वृद्ध का जीवन अधिक जटिल एवं समस्याग्रस्त हो जाता है। वृद्धावस्था में आर्थिक असुरक्षा की स्थिति अनेक व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्याओं को जन्म देती है। इनमें सामाजिक प्रस्थिति का ह्रास, अर्थपूर्ण सामाजिक अन्तः क्रियाओं की कमी सामाजिक एवं नातेदारी–सम्बन्धों का प्रभावित होना तथा अन्तिम समय में अपनी इच्छाओं का दमन करना आदि प्रमुख है।

(i) आर्थिक समस्याओं के प्रति वृद्धों के विचारों का विवरण :

उपरोक्त विषय में प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से यह जानने का प्रयास किया गया कि क्या उनके जीवन में आर्थिक समस्याएँ हैं? इस सन्दर्भ में वृद्धों ने जो विचार व्यक्त किये उन्हें एकत्र कर तालिका संख्या 6.15 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१५

आर्थिक समस्याओं के प्रति साठोत्तर वृद्धों के विचार

क्र.सं.	वृद्धों का विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	आर्थिक समस्याओं को अनुभव करते हैं।	187	62
2	आर्थिक समस्याओं को अनुभव नहीं करते हैं।	113	38
	योग	300	100

उपरोक्त तालिका अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 62 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध आर्थिक समस्याओं का सामना कर रहे हैं जबकि शेष 38 प्रतिशत वृद्ध आर्थिक समस्याओं का अनुभव नहीं कर रहे हैं। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि कुछ आध्यात्मिक विचारों वाले वृद्धों ने यह स्पष्ट किया कि माया (धन) का ऐसा मोह है कि चाहे कितना भी धन क्यों न हो उसकी चाहत कभी भी पूर्ण नहीं होती है अतः सुखी एवं शान्तिमय जीवन के लिए संतोष ही श्रेष्ठ धन होता है। क्योंकि कभी न कभी आपको अपनी परिस्थितियों से समझौता करना ही पड़ेगा अतः भौतिकता से अधिक लगाव नहीं रखना चाहिए।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि अधिकांश साठोत्तर वृद्ध आर्थिक समस्याओं का अनुभव कर रहे हैं।

(ii) साठोत्तर वृद्धों की आर्थिक समस्याओं का विवरण :

उपरोक्त सन्दर्भ में प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से यह जानने का प्रयास किया गया कि वे किन–किन सन्दर्भो में आर्थिक समस्याओं को महसूस करते हैं इस विषय में वृद्धों से जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें संकलित करके तालिका संख्या 6.16 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१६

साठोत्तर वृद्धों की आर्थिक समस्याओं का विवरण

क्र.सं.	वृद्धों की आर्थिक समस्याएँ	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	पारिवारिक उत्तरदायित्वों के निर्वाह करने की समस्या।	115	61
2	परिवार में अपना अस्तित्व स्थापित करने की समस्या।	55	29
3	अपने रोगों का उपचार कराने की समस्या।	77	41
4	धार्मिक क्रिया–कलापों को सम्पन्न कराने की समस्या।	49	26

नोट **– खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। कुल सूचनादाता = 187**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 61 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध सूचनादाता यह मानते हैं कि धनाभाव के कारण उनके समक्ष पारिवारिक उत्तरदायित्वों के निर्वाह की समस्याएँ उत्पन्न होती रहती है जबकि 41 प्रतिशत वृद्धों ने स्पष्ट किया कि विपन्नता के कारण वे सही ढंग से अपने रोगों का उपचार नहीं करा पा रहे हैं इसके साथ-साथ 29 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने स्पष्ट किया कि यदि पास में पूँजी नहीं होती तो परिवार में कोई पूछ नहीं होती है तथा परिवार के प्रत्येक सदस्य की यह इच्छा रहती है कि उन्हें कुछ न कुछ उनसे अवश्य ही मिलता रहे। मात्र 26 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का यह मानना था कि प्रायः वृद्धावस्था में धार्मिक कार्य करना तथा तीर्थाटन करना मोक्ष का मार्ग माना जाता है परन्तु धनाभाव के कारण वे धार्मिक कार्य भी नहीं कर पाते हैं यहाँ यह भी उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है कि अध्ययन के समय कुछ परिवार ऐसे भी सम्पर्क में आये जो आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न थे परन्तु साधारण सी पूजा अर्चना को वह आडम्बर मानते हुए इसे सम्पन्न कराने की अनुमति भी नहीं देते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह माना जा सकता है कि धन के अभाव के कारण प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध विभिन्न पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह न कर पाने, अपने रोग का सही उपचार न करवा पाने, धार्मिक क्रिया-कलापों को सम्पन्न न कर पाने तथा परिवार में अपना अस्तित्व स्थापित न कर पाने से सम्बद्ध विभिन्न समस्याओं का सामना करते रहते हैं।

(iii) आर्थिक संकट से मुक्ति पाने हेतु साठोत्तर वृद्धों के विचार :

वृद्धावस्था में आर्थिक विपन्नता के कारण अनेक प्रकार की समस्याओं का जन्म हो जाता है जिस कारण जीवन और अधिक कष्टकारी होने लगता है। जब साठोत्तर वृद्धों से आर्थिक विपन्नता के कारण उत्पन्न समस्याओं को जानने का प्रयास किया गया तो इस सम्बन्ध में उनसे जो तथ्य प्राप्त हुए उन्हें एकत्र कर तालिका संख्या 6.17 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१७
आर्थिक संकट से मुक्ति पाने हेतु साठोत्तर वृद्धों के विचारों का विवरण

क्र.सं.	साठोत्तर वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	सन्तानों से आर्थिक सहायक मिलनी चाहिए।	179	96
2	पैतृक सम्पत्ति में वैधानिक हिस्सा होना चाहिए।	78	41
3	व्यक्तियों द्वारा लिया गया उधार वापस मिल जाये तो अच्छा।	19	10
4	गुजारा भत्ता।	160	86
5	संसार में जीवित रहने की इच्छा शेष नहीं।	42	22

नोट **- खुला प्रश्न होने के कारण योग नहीं होगा। कुल सूचनादाता = 187**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 96 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि अनेक प्रकार की आर्थिक समस्याओं से छुट्कारा पाने के लिए परिवार की सन्तानों से ही उन्हें आर्थिक सहायता मिलनी चाहिए उनका मानना है कि सन्तानों को अपनी माता की आर्थिक सहायता करना ही हमारी परम्परा रही है उनका यह भी मानना है कि सन्तानों के रहते हमें अन्य व्यक्तियों से आर्थिक सहायता लेने की आवश्यकता क्यों? यदि हमारी संतानें ही हमारी सहायता नहीं करती तो दूसरे हमारी सहायता क्यों करें? जबकि 86 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह स्पष्ट करते हैं कि जब सरकार राज्य के समस्त कार्यो के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध कराती है तो वह हम जैसे साठोत्तर वृद्धों के लिए गुजारा भत्ता की समुचित व्यवस्था करें जिससे इस मँहगाई के दौर में गुजारा सम्भव हो सके; 41 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि यदि पैतृक सम्पत्ति में उनका वैधानिक हिस्सा हो तो उन्हें वित्तीय संकट का अधिक सामना नहीं करना पड़ेगा। ज्ञातव्य हो कि नगरीय क्षेत्रों में पैतृक सम्पत्ति से किराये तथा ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध कृषि भूमि से नियमित है इसके विपरीत 22 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों ने बड़े ही दुखित मन से व्यक्त किया कि हमसे सम्बन्धित समस्त

समस्याएँ इस संसार से विदा होते ही समाप्त हो जायेगी; शेष 10 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों का कहना था कि उन्होंने अपनी कुछ धनराशि को अन्य व्यक्तियों को उधार के रूप में दिया था जो उन व्यक्तियों द्वारा वापस नहीं हुआ है यदि वह धन वापस मिल जाये तो आर्थिक समस्याओं का समाधान सम्भव हो सकता है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि साठोत्तर वृद्धों की विभिन्न आर्थिक समस्याओं का समाधान उनकी सन्तानों द्वारा एवं शासन द्वारा प्रदान की जाने वाली आर्थिक सहायता से ही सम्भव हो सकता है।

सम्प्रेक्षणः अभाव जनित समस्यायें :

प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों से तथ्य एकत्र करते समय यह अनुभव किया गया कि वृद्धावस्था की अनेक समस्याओं में सम्प्रेषण अभाव की अनेक समस्याएँ ही प्रमुख हैं जैसे उनमें श्रवण शक्ति की क्षीणता, दृष्टि हीनता की स्थिति, शरीर संचालन में असमर्थता आदि के कारण वृद्धों को अपेक्षित सूचनाएँ प्राप्त नहीं हो पाती हैं और न ही साठोत्तर वृद्धों के विचारों, भावनाओं आदि का अन्य व्यक्तियों के साथ सम्प्रेक्षण सम्भव हो पाता है। प्रत्येक वृद्ध की यह इच्छा होती है कि यह घर गृहस्थी उन्हीं के द्वारा निर्मित एवं स्थापित की गयी है अतः इसकी प्रत्येक अद्यतन जानकारी भी उन्हें अवश्य ही होनी चाहिए क्योंकि उस परिवार के केन्द बिन्दु वही है। इसके साथ-साथ अधिक समय तक उनके समान आयु के वृद्धों का वैचारिक आदान-प्रदान न होने के कारण उनमें खालीपन रहने लगता है अतः वह अपने इस खालीपन को समाप्त करने के लिए किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश में रहते हैं जो उनके इस समय को व्यतीत करने में सहायक हो। अतः इस प्रकार की अनेक समस्यायें अध्ययन के दौरान दृष्टिगत हुई जो साठोत्तर वृद्धों की सम्प्रेषण अभाव जनित समस्याओं को स्पष्ट करती है।

सामाजिक जीवन में असहभागिता की समस्यायें :

सामान्यतः व्यक्ति वृद्धावस्था को एक ऐसी अवस्था मानते हैं जो बोझ स्वरूप है वस्तुतः वृद्धावस्था जीवन के क्रम की वह अवस्था है जो नितान्त प्राकृतिक एवं अनिवार्य है जिसे यह सहज रूप में स्वीकार करने की यदि मनोवृत्ति बना ली जाये तो यह अवस्था कदापि बोझ स्वरूप दिखाई नहीं पड़ेगी तथा इस अवस्था का भी सकारात्मक एवं सार्थक प्रयोग अपने तथा समाज के लिए सम्भव

हो जायेगा। वास्तव में जीवन के प्रत्येक चरण में घर-परिवार की अनेकों जिम्मेदारियाँ, तथा आवश्यकताओं को निभाने के लिए क्षमताओं के विकास की आवश्यकता होती है। प्रत्येक सामाजिक भूमिका को निभाने के लिए नवीन परिस्थितियों के अनुसार स्वभाव एवं व्यवहार को भी बदलना पड़ता है तभी वह सम्भव है और जीवन का क्रम भी है। वास्तव में वृद्धावस्था समस्या तब बन जाती है जब हम पुरातन पराम्पराओं का ही अनुसरण करते रहते हैं तथा नवीन सन्तति को उत्तरदायित्व नहीं सौंपते या फिर उनके नवीन विचारों के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं करते हैं यह स्थिति उस समय और भी अधिक गम्भीर और समस्याप्रद हो जाती है जब वृद्धावस्था में व्यक्ति सब कुछ अपने में बटोरे रखने की लालसा के कारण अपनी युवा सन्तानों को नवीन दायित्व सौंपने का विश्वास तक नहीं करते तथा स्वयं ही समस्त पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वाहन करते रहते हैं। इसके अतिरिक्त युवा सन्तति के काम करने के तरीकों में हस्तक्षेप करना, निरन्तर कमियाँ निकालना, बिना किसी उचित कारण के क्रोध करना, यह व्यवहार वृद्धों की प्रस्थिति को और अधिक प्रभावित करता है क्योंकि एक ओर उनकी शारीरिक शिथिलता तथा दूसरी ओर अधिकार न छोड़ने की इच्छा; वृद्ध एवं युवा के मध्य कार्य प्रणाली एवं सोच का अन्तर उनके लिए समस्या का कारण बन जाता है। वृद्धावस्था में घर परिवार के उत्तरदायित्वों को वहन करने में अपनी ऊर्जा को नष्ट करना उचित नहीं है क्योंकि इस आयु तक आते-आते वे समस्त जिम्मेदारियाँ निभा दी गयी हैं अतः अब घर परिवार के दायित्वों को निभाने की जिम्मेदारियाँ युवा सन्तानों को सौंपकर स्वयं को ईश्वरीय आराधना, पठन-पाठन, अपनी रुचि के अनुसर कार्यों को करना तथा अपने जीवन के महत्वपूर्ण अनुभवों का लाभ अन्य व्यक्तियों को प्रदान करना ही सही है वस्तुतः हर नई पीढ़ी अपने से बड़ों के अनुभव से लाभ तो चाहती है पर तब जब वह स्वयं चाहें वरना तो उसे अपने यत्नों से अनुभव पाना ही पसन्द आता है। यदि व्यर्थ की टोका-टाकी न की जाये तथा भौतिक पदार्थों से आसवित्त की मानसिकता बना ली जाये तो वही सार्थकता का एहसास भी होगा। सुखपूर्वक वृद्धावस्था व्यतीत हो इसके लिए यदि ये भी व्यवस्था पूर्व में कर ली जाये कि सन्तानों पर आर्थिक निर्भरता न रहे तो बेहतर है क्योंकि आज का युग भौतिकता का है व्यक्ति भौतिकवादी हो गया

है। वह निरन्तर सोचता रहता है अतः प्रौढ़ता आते–आते अपनी आय से कुछ राशि को रोक लेना समझदारी है ताकि अपनी किसी भी आवश्यकता के लिए सन्तानों पर आश्रित नहीं रहना पड़े। इसके साथ–साथ अपनी भावनाओं को व्यापकता देना भी जरूरी है इस आयु में भी घर परिवार के मोह में फँसे रहने से बेहतर है कि किसी उद्देश्य के लिए, रुचि के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया जाये। यदि किसी रचनात्मक कार्य के सहारे जीवन क्रम को आगे बढ़ाया जाये तो वृद्धावस्था बोझ नहीं बन सकती जीवन के इन खाली क्षणों का सार्थकतापूर्ण सद्उपयोग भी सम्भव है। वृद्धावस्था विश्राम काल रहेगा। जो स्वागत से सहज रूप में जिया जा सकता है कतिपय वृद्धों के उपरोक्त विचार असहभागिता की समस्या को कम करने में सहायक हो सकते हैं।

<u>समायोजन सम्बन्धी समस्यायें</u> :

एच.के. रावत (1980)[21] का मानना है कि व्यक्तियों, समूहों, सांस्कृतिक तत्वों एवं सांस्कृतिक संकुलों के बीच सुसंगत, सद्भावपूर्ण तथा सन्तोषजनक सम्बन्धों की व्यवस्था अथवा प्रक्रियाओं को जिनके द्वारा इस प्रकार के सम्बन्धों की रचना होती है; सामाजिक समायोजन कहते हैं। सामान्यतः कभी–कभी समायोजन की अवधारणा का प्रयोग सामाजिक अनुकूलन अथवा सामंजस्य के अर्थो में भी कर लिया जाता है जबकि इनमें पर्याप्त अन्तर है। समायोजन वह स्थिति है जिसमें विभिन्न व्यक्ति या समूह निरन्तर एक विशेष पर्यावरण में रहने के कारण या एक दूसरे के सम्पर्क में रहने के कारण अपनी अभिरुचियों हितों एवं लक्ष्यों के मार्ग में आने वाली बाधाओं को सहन करने में अभ्यस्त हो जाते हैं ताकि वे सामाजिक प्रणाली की आशाओं के अनुरूप व्यवहार करते हुए उसमें अपना समुचित स्थान बना सकें। इसका विपरीत कुसमायोजन होता है जो एक ऐसी स्थिति का संकेत करता है जिसमें विभिन्न व्यक्ति या समूह समाज में प्रचलित मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मापदण्डों के अनुरूप व्यवहार नहीं कर पाते और इस प्रकार वह अपने आस–पास के माहौल के साथ समायोजन नहीं कर पाते। इसके परिणाम स्वरूप उनका व्यवहार सामान्य नहीं रह जाता इसके साथ–साथ अनुकूलन शब्द का प्रयोग जैविकी अर्थ में किया जाता है। जैविकीय अर्थ में किसी जीव का अपने पर्यावरण के साथ समायोजन की प्रक्रिया को

अनुकूलन कहते हैं जब एक व्यक्ति अथवा समूह अपने व्यवहार को सामाजिक पर्यावरण अर्थात् अन्य समूहों, संस्थाओं तथा सम्पूर्ण समाज के अनुरूप इस प्रकार स्थापित करता है कि उसका अस्तित्व बना रहे तब यह प्रक्रिया सामाजिक अनुकूलन कहलाती है।

वास्तव में वृद्धावस्था की प्रक्रिया को सही ढंग से अध्ययन करने में सामाजिक समायोजन एक प्रमुख अध्ययन पक्ष माना जाता है जैसा कि विदित है कि भारतीय समाज अत्यन्त जटिल, गतिशील एवं परम्परावादी प्रकृति का है। भारतीय समाज की भाँति विश्व के किसी भी समाज में वृद्धावस्था को सर्वाधिक समस्या प्रधान माना एवं अनुभव किया जाता है। इसका महत्वपूर्ण कारक यह है कि वृद्धों के लिए परम्परागत मूल्यों एवं सामाजिक आदर्शों से विमुख होना तथा नवीन प्रकार की उत्पन्न होने वाली आधुनिक मूल्य व्यवस्था एवं सामाजिक आदर्शों को आत्मसात करना अत्यन्त ही कठिन कार्य प्रतीत होता है यदि साठोत्तर वृद्ध व्यक्ति अपनी परम्परागत परम्पराओं से अन्ध लगाव रखते हैं तो पारिवारिक सदस्यों के साथ उनका समायोजन ठीक से नहीं हो पाता है इसके विपरीत यदि यही वृद्ध आधुनिक नवीन सामाजिक मूल्यों को स्वीकार करने का प्रयास करते हैं तो वे अपने को असमर्थ पाते हैं अतः यह दोनों ही विपरीत परिस्थितियाँ हमारे वृद्धों को दुविधा में डालकर विंसयुजता की स्थिति में ले आती है। इस दशा में समाज के नवीन प्रकार्यों एवं संरचना के विषय में साठोत्तर वृद्धों के वे दृष्टिकोण जो उन्हें आधुनिक नवीन मूल्यों एवं सामाजिक आदेर्शों को स्वीकार या अस्वीकार करने के सन्दर्भ में स्पष्ट होते हैं उनकी सामाजिक समायोजन सम्बन्धी स्थिति की जानकारी करने में पर्याप्त सहायक होते हैं। इसी आधार पर समायोजन का अध्ययन करने में साठोत्तर वृद्धों की रहन–सहन की समरूप दशाओं का परीक्षण किया जाता है। सामान्यतः यह माना जाता है कि व्यक्ति की आन्तरिक स्थिति में समरूपता तब तक वही आ सकती जब तक उसका बाह्य जगत या बाहरी समरूपता सुरक्षित नहीं है। जबकि वास्तविकता यह है कि साठोत्तर वृद्ध की आन्तरिक मनोदशाओं का निर्धारण अधिकांश रूप से उसकी बाह्य दशाओं पर निर्भर होता है।

साठोत्तर वृद्धों के समायोजन को सामान्यतः सामाजिक समायोजन के नाम से सम्बोधित किया जाता है **सरस्वती मिश्रा** (1987)[22] का मानना है कि यह वृद्धों की उन समरूप (हारमोनियस) जीवन दशाओं का परिचायक है जिसमें अन्तिम निर्बल सामाजिक भूमिका के आधार पर किसी समाज द्वारा साठोत्तर वृद्ध को किसी विशिष्ट स्थान (स्तर) पर रखा गया है। सफल समायोजन को व्यक्ति की वैयक्तिक प्रसन्नता एवं वर्तमान जीवन में मिलने वाले संतोष की विशिष्ट स्थिति के आधार पर समझा जाता है। साठोत्तर वृद्धों के सन्दर्भ में प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक काटरेल फ्रेड ने स्पष्ट किया है कि सेवानिवृत्त (वृद्ध) द्वारा निर्वाह की गयी सामाजिक भूमिका के आधार पर उत्पन्न तनाव एवं व्यग्रता की मात्रा को व्यक्ति की अपनी भूमिका की अनुक्रमणिका माना जाता है जिससे उसके सामाजिक समायोजन का संज्ञान हो जाता है। इसी प्रकार विद्वान **डोनाह्यू विलमा** (1963)[23] का मानना है कि शोधार्थियों द्वारा प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से प्रसन्नता की मात्रा एवं दशा को ही साठोत्तर वृद्धों के सामाजिक समायोजन का प्रबल संकेतक माना गया है। समाजशास्त्र एवं वृद्ध विज्ञान पर शोध करने वाले वैज्ञानिकों ने यह स्पष्ट किया है कि व्यवहार की आदर्शात्मक संरचना के अन्तर्गत ही व्यक्ति सुख एवं दुःख की अनुभूति करते हैं। इसी आधार पर यह भी विचार किया गया कि समायोजन की माप मात्र सन्तुष्टि की मात्रा के सन्दर्भ में किया जाना चाहिए। इसका कारण यह है कि भारतवर्ष सदृश्य परिवर्तनशील देश में वृद्धों के अपेक्षित व्यवहार एवं कार्य–कलापों को जानने के लिए कुछ विशिष्ट आचरण का क्रमवृद्ध ज्ञान आवश्यक है बिना इसके साठोत्तर वृद्धों के व्यवहार की सामाजिक ग्राहता का सही–सही अध्ययन करना कठिन कार्य प्रतीत होता है। **चौधरी डी.पाल** (1992)[24] ने स्पष्ट किया है कि एक वृद्ध व्यक्ति ने समायोजन की प्रकृति एवं विस्तार उसके उस व्यक्तित्व के आधार पर परिवर्तित हो सकता है जो उसके अनुभवों, पारिवारिक एवं सामुदायिक वातावरण तथा अन्य सन्दर्भो पर आधारित होता है साथ ही वे समस्त परिस्थितियाँ जिनके मध्य वह साठोत्तर वृद्ध जीवन व्यतीत करता है। व्यक्तिगत स्तर पर निरन्तर वृद्धावस्था की ओर बढ़ने का भय भी उसमें निराशावादी विचारों को उत्पन्न कर सकता है। यही कारण है कि उसकी कुछ भूमिकाओं का न्यूनीकरण किया जाता है जिससे साठोत्तर वृद्ध प्रायः आचार

भ्रष्टीकरण (डी. मॉरलाइज) की स्थिति का अनुभव करने लगते हैं। आय में कमी तथा शारीरिक शिथिलता उन्हें पराश्रयता की स्थिति में ले आती है नियमित अंतःक्रियाओं की कमी तथा पारिवारिक सदस्यों का उदासीन व्यवहार वृद्धों की एकान्तता के साथ–सा उद्देश्य पूर्ण कार्य–कलापों की वंचना भी वृद्धों के शेष जीवन को समस्या ग्रस्त बना देती है इस प्रकार पुनः वृद्धों के समक्ष समायोजन की समस्या उत्पन्न होती रहती है।

साठोत्तर वृद्धों के समायोजन के सन्दर्भ में **उन्कन मिशैल** (1984)[25] ने स्पष्ट किया है कि यह एक ऐसा शब्द है जो समाजशास्त्रीय होने की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक अधिक दृष्टिगत होता है जिसे अनेक मनोवैज्ञानिकों द्वारा ऐसी समायोजन प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त किया गया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपने भौतिक एवं सामाजिक पर्यावरण के साथ स्वस्थ या समरूपी सम्बन्धों का सृजन करता है। समाजशास्त्रियों ने इसे कभी–कभी सामाजिक इकाई, समूह या संगठन के साथ तादात्म्य स्थापित करने के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया है। यद्यपि इस सन्दर्भ में होने वाली वार्ताओं में अनेक जटिलताओं एवं समस्याओं पर चिन्तन किया गया है जैसे स्वस्थ एवं समरूपवादी समायोजन का क्या तात्पर्य है आदि। कभी–कभी साहित्य में इस पक्ष की उपेक्षा भी की गई है। विभिन्न अनुशासनों के विद्वानों के सफल वृद्धावस्था के दो महत्वपूर्ण परन्तु परस्पर विरोधी उपागमों का उल्लेख किया है यथा–

(अ) क्रियाशील जीवन से सम्बद्धता या कार्यकारी उपागम।

(ब) क्रियाशील जीवन से असम्बद्धता या कार्यकारी उपागम।

कार्यकारी उपागम (एक्टिव स्प्रोच) के अनुसार यह माना जाता है कि साठोत्तर वृद्ध व्यक्ति स्वयं अपने आपको किसी न किसी ऐसे कार्य में संलग्न कर सकते हैं जिसे उन्होंने स्वयं वृद्धावस्था का अनुभव करते हुए छोड़ दिया है। इससे साठोत्तर वृद्धों के अन्तिम जीवन काल में सामाजिक समायोजन अच्छी प्रकार से सम्भव हो सकता है। यह उपागम इस मान्यता पर आधारित है कि वृद्धों द्वारा विभिन्न पारिवारिक एवं सामाजिक भूमिकाओं से सम्बद्ध रहना अधिक लाभदायक सिद्ध होता है क्योंकि इससे वे अनेक संकुचित सीमाओं से बाहर रहते हैं तथा एक सफल वृद्धावस्था को व्यतीत करते हैं जबकि इसके विपरीत निष्क्रिय उपागम,

जिससे **कूमिंग एवं हेनरी** (1971)[26] ने विकसित किया था इस मान्यता पर आधारित है कि साठोत्तर वृद्धों को वृद्धावस्था से समस्त सामाजिक कार्यो से अपने आपको हटा लेना (तटस्थ) चाहिए। हेनरी ने अमेरिका के कन्यास नगर के वृद्धों का अध्ययन कर इस अवधारणा का उपागम को विकसित किया था। वृद्धावस्था में साठोत्तर वृद्धों की स्थिति द्वैतीयक होती है अतः उन्हें अपने समस्त उत्तरदायित्व परिवार के युवाओं को हस्तान्तरित करते जाना चाहिए इसके साथ-साथ साठोत्तर वृद्ध व्यक्ति को विभिन्न सांसारिक इच्छाओं से भी विमुख होते जाना चाहिए तथा इसी प्रकार समाज को भी साठोत्तर वृद्ध व्यक्ति से काम नहीं लेना चाहिए जिससे उसका उचित सामाजिक समायोजन सुनिश्चित हो सके।

वस्तुतः व्यावहारिक जीवन में यह पाया गया है कि कार्यकारी उपागम को अधिक स्वीकार किया जाता है क्योंकि इसी से सामान्य चेतना निर्णय एवं अनुभवों को उपयोगी बनाया जा सकता है यही कारण है कि वृद्ध विज्ञानशास्त्रीय साहित्य में इस उपागम के प्रति जितना मतैक्य है उतना अन्य किसी उपागम के प्रति नहीं है। इसके विपरीत निष्क्रिय उपागम ने वृद्ध विज्ञानशास्त्रियों के मध्य संवाद के अनेकानेक पक्ष उपस्थित किये हैं। अतः आवश्यक हो जाता है कि इस उपागम से सम्बद्ध उन छिपे हुए तथ्यों और मूल्यों की ओर ध्यानाकर्षण किया जाये तथा इस दिशा में किये गये महत्वपूर्ण अध्ययनों का पुनरावलोकन कर किसी निश्चित एवं कार्यकारी निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है जो प्रस्तुत अध्ययन से सम्बन्धित साठोत्तर वृद्धों के सामाजिक समायोजन की वस्तुस्थिति को उद्घाटित करने में सहायक सिद्ध हो सके।

सामान्यतः कार्यकारी उपागम के विपरीत निष्क्रिय उपागम क्यूमिंग एवं हेनरी द्वारा किये गये अध्ययन पर आधारित प्रतीत होता है जिसमें दोनों ही अध्येताओं ने संकेत किया है कि समाज ही वृद्ध व्यक्ति को सामाजिक कार्यकलापों से मुक्त नहीं करता प्रत्युत वृद्ध व्यक्ति स्वयं अपने आपको सामाजिक उत्तरदायित्वों से मुक्त करने का प्रयास करने लगता है। जैसे-जैसे अवस्था बढ़ती जाती है वैसे-वैसे अपने समस्त सामाजिक परिवेश को प्रत्युत्तर देने सम्बन्धी अहं क्षमता (इगो इनरजी) का भी क्षय होने लगता है यही कारण है कि साठोत्तर वृद्धजन आन्तरिक प्रत्युत्तर क्षमता तक सीमित रह जाते हैं तथा बाह्य जगत से उद्दीपन

शून्यता प्रारम्भ हो जाती है। परिणामतः साठोत्तर वृद्ध लौकिक चुनौतियों से विमुख होकर प्रयासों एवं संवेगात्मक जगत से पलायन करने लगते हैं। शनैः शनैः स्थिति यह आ जाती है कि समाज एवं साठोत्तर वृद्धों के मध्य तटस्थता, निष्क्रियता या उदासीनता के सम्बन्ध ही शेष रह जाते हैं।

सामान्यतः वृद्धावस्था में सामाजिक मूल्य व आदर्श नियम ही अन्तः क्रियाओं के सम्पादन में सहायक सिद्ध होते हैं लेकिन अन्तःक्रियाओं के घटित होने की मंदता जीवन एवं व्यवहार के विविध पक्षों में विद्यमान आदर्शात्मक व्यवस्था से स्वतन्त्र करने में उपयोगी भूमिका निभाती है। जो स्वयं स्थिर करने वाली प्रक्रिया बन जाती है इसी आधार पर निष्क्रिय उपागम इस तथ्य की सम्पुष्टि करता है कि वृद्ध व्यक्तियों एवं समाज के अन्य सदस्यों के मध्य परस्पर अलगाववादी सम्बन्धों का अभ्युदय होने लगता है चूँकि पुरुषों एवं महिलाओं की केन्द्रीय भूमिकाओं का निर्धारण एवं स्वीकृति समाज की सामाजिक व्यवस्था के आधार पर ही होना सम्भव होती है अतः इन भूमिकाओं से अलगाव की प्रकृति भी स्त्रियों एवं पुरुषों में अलग-अलग होती है। यह उपागम इस तथ्य पर भी संकेत करता है कि सक्रिय जीवन से अवकाश की पहल या तो समग्र समाज द्वारा की जाती है या स्वयं वृद्ध अथवा वृद्धा द्वारा की जाती है। जिस समय वृद्ध एवं समाज दोनों ही इसके लिए तैयार होते हैं सक्रिय जीवन से सन्यास मिल जाता है जैसे सेवानिवृत्ति की स्थिति में व्यक्ति को कार्यमुक्त कर दिया जाता है या वह स्वयं कार्यमुक्ति ले लेता है। इसी उपागम ने प्रायः बहुत बड़े संवाद को जन्म दिया है जिसके आधार पर वृद्धावस्था में व्यक्ति के सामाजिक समायोजन को भली-भाँति समझाया जा सकता है। इस सन्दर्भ में **जार्ज मैड्राक्स** (1966)[27] ने लिखा है कि एक प्रारूप के रूप में निष्क्रियता को पुष्ट करने वाले कुछ उच्चतर आनुभविक साक्ष्य जो कि वृद्धावस्था की प्रक्रिया हेतु अनिवार्य एवं यथार्थ है ने इस उपागम के समर्थ को भी संतुष्ट नहीं किया है। इस विषय में आपने प्रमुख रूप से दो सैद्धान्तिक आपत्तियों का उल्लेख किया है।

(अ) प्रथम मूलभूत आपत्ति यह है कि इसमें सामाजिक परिवेश तथा अनुभवों के उन संचयी प्रतिमानों जिनके द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्धारण होता है पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है तथा प्रारम्भिक निष्क्रियता निर्माण की

प्रवृति को सापेक्षिक अप्रासंगिकता के रूप में माना गया है।

(ब) दूसरी मूलभूत समस्या या आपत्ति यह रही है कि इस उपागम में स्थितिजन्य घटकों में होने वाले परिवर्तनों पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है।

इस सन्दर्भ में **क्राफोर्ड एम.** (1972)[28] ने सेवानिवृत्त व भूमिका निर्वाह प्रवृति सम्बन्धी अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि सेवानिवृत्त व्यक्ति के जीवन की प्रमुख भूमिकाओं से हट जाने से सम्बन्धित एक ऐसा स्वरूप है जो पति–पत्नी के जीवन को सर्वाधिक प्रमाणित करता है। इस प्रकार स्वैच्छिक निष्क्रियता बहुत कम व्यक्तियों में पायी जाती है। अपने अध्ययन में **एरनोल्ड रास** (1964)[29] ने स्पष्ट किया कि विशेष रूप से वृद्धों के सम्बन्ध में यह एक सामाजिक तथ्य है न कि प्राकृतिक अनिवार्यता; जिसमें अमेरिकावासी 65 वर्ष की आयु तक पहुँचकर निष्क्रिय होने लगते हैं प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक क्यूमिंग के निष्क्रिय सिद्धान्त की आलोचना करते हुए **टन्सटाल जे.** (1966)[30] ने स्पष्ट किया है कि सामाजिक पृथक्करण की सम्पूर्ण समस्या को मात्र सक्रिय जीवन से अवकाश के आधार पर ही नहीं देखा जाना चाहिए क्योंकि इस सिद्धान्त के समर्थकों ने आर्थिक कारकों की अनदेखी की है अतः उनके अधिकांश सूचनादाता अपेक्षाकृत अन्य अमेरिकी जनसंख्या से आर्थिक रूप में सम्पन्न थे। अतः ग्रोविंग ओल्ड के लेखकों ने वैधव्य जीवन की समस्याओं पर खास ध्यान नहीं दिया है तथा इस पक्ष पर अपनी टिप्पणी प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। टन्सटाल द्वारा प्रस्तुत अध्ययन निष्कर्ष का सबसे रुचिकर पक्ष यह है कि यह सिद्धान्त इस मान्यता पर अधिक बल देता है कि मृत्यु ही कार्य की तार्किक समाप्ति एवं अलगाव की पूर्णता है। इन दोनों विरोधी उपागमों की तुलना करते हुए **गिलवर्ट डूहे** (1971)[31] ने कहा कि उपरोक्त दोनों ही सिद्धान्त या उपागम परस्पर विरोधी न होकर एक दूसरे के पूरक ही हैं। कार्यावकाश (निष्क्रियता) को एक ऐसी दशा के रूप में माना जाना चाहिए जिसमें एक विशिष्ट उपसंस्कृति जन्म लेती है तथा वृद्धों के मध्य स्थायित्व प्राप्त करती है। वृद्धों की संख्या में होने वाली निरंतर वृद्धि तथा घनिष्ठता के सम्बन्धों की प्रकृति जो इन समूहों में पायी जाती है निश्चय ही सदस्यों को एक सुदृढ़ स्थिति में रखती है और यही स्थिति वृद्धों को

उस समाज में पुनः एकीकृत करने का कार्य करती है जिस समाज से वे अपने को पृथक मानने लगते हैं। वृद्धों के सन्दर्भ में **क्लीश ए.आर.** (1972)[32] ने निष्क्रियता की अवधारणा को मृत्यु से सम्बद्ध करते हुए यह स्पष्ट किया कि वृद्धों की जनसंख्या में बढ़ती हुई मृत्यु की प्रवृत्ति तथा मृत प्रायः जीवनयापन की दशाओं ने अन्य कारकों को साथ–साथ जीवन के सामाजिक मूल्यों को प्रभावित किया है इससे वृद्धों में निष्क्रियता की वृद्धि हुई है। इसके साथ ही **विधुर्ट आर.जे.** (1965)[33] में अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट किया कि जब व्यक्ति 60 वर्ष की आयु को पार करते हैं वे उन भूमिकाओं की तलाश करने लगते हैं जिनमें उनके अहम की सर्वाधिक सन्तुष्टि हो। वास्तविकता यह है कि वृद्धावस्था में सक्रियता का ह्रास नहीं होता अपितु वृद्धों की उच्चाकांक्षाओं एवं अहम् की मात्रा की अधिकाधिक वृद्धि के कारण ऐसा प्रतीत होने लगता है। प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक **पुरकल एच.** (1972)[34] ने सक्रियता एवं निष्क्रियता के दोनों उपागमों का तुलनात्मक अध्ययन एक आयु एकीकृत नगरीय समुदाय तथा एक आयु पृथक्कृत सेवानिवृत्त समुदाय के सन्दर्भ में दोनों उपागमों की सफल वृद्धापन के लिए उपयोगिता की परख के लिये किया और यह निष्कर्ष निकाला कि कार्यालगाव उपागम उपयोगी प्रतीत होता है। क्योंकि यह वृद्धावस्था के लिए नैतिकता के निम्न स्तर पर आवश्यक रूप से प्रतिबिम्वत नहीं होता है। इसी प्रकार **ग्रान्ट वाई.ई** (1966)[35] ने नगरीय एवं ग्रामीण समुदायों में रहने वाले गैर संस्थाकृत वृद्ध लोगों के मध्य विद्यमान आर्थिक कार्यालगाव की स्थिति का परीक्षण व्यक्तिनिष्ठ एवं वस्तुनिष्ठ परिप्रेक्ष्यों में किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि उपरोक्त दोनों ही क्षेत्रों में रहने वाले वृद्ध व्यक्ति कार्यकारी भूमिकाओं में बहुत अल्प मात्रा में सम्बद्ध पाये गये तथा युवा वर्ग की तुलना में उनकी औसत मासिक आय भी काफी कम थी। युवा वर्ग की तुलना में वृद्धों का आर्थिक स्तर कम होने पर भी वे युवाओं की अपेक्षा अपनी व्यक्तिगत आर्थिक वंचना का आभास नहीं करते थे और यदि अनुभव भी करते थे तो युवा वर्ग की तुलना में बहुत कम मात्रा में करते थे। अतः यह निष्कर्ष इस बात की ओर संकेत करता है कि साठेत्तर वृद्ध व्यक्तियों ने अपेक्षाकृत अधिक अच्छी तरह आर्थिक कार्यालगाव (मुक्ति) से अपना समायोजन एवं अनुकूलन स्थापित कर लिया था। इस सम्बन्ध

में आपने पुनः संकेत किया कि किसी निश्चित प्रारम्भिक संक्रमण काल के उपरान्त आर्थिक भूमिकाओं से अलगाव निश्चय ही वृद्धावस्था में अत्यधिक संतोष एवं सन्तुष्टि प्रदान करता है।

उपरोक्त अध्ययन निष्कर्षों के आधार पर किसी भी निश्चित निष्कर्ष तक पहुँचना अत्यन्त कठिन कार्य प्रतीत होता है क्योंकि इनमें से अनेक अध्ययन कुछ विशिष्ट सन्दर्भो एवं परिप्रेक्ष्यों तक सीमित है। इस कार्य में सबसे अधिक परेशानी इस बात की है कि इन अध्ययनों में वर्णित निष्कर्षो के आधार पर किसी मान्यता प्राप्त या सर्वाधिक मान्य सामान्यीकरण को तब तक स्पष्ट नहीं किया जा सकता है जब तक लगाव एवं अलगाव के दोनों उपागमों से सम्बद्ध विविध व्यवहारवादी सन्दर्भो का विस्तृत उल्लेख एवं निर्धारण न किया जाये।

<u>साठोत्तर वृद्धों के सामाजिक समायोजन की स्थिति</u> :

वृद्धावस्था में सामाजिक समायोजन की समस्या सबसे अधिक गम्भीर समय मानी जाती है। समायोजन की स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए प्रायः कुछ प्रमुख कारकों का निर्धारण किया जाता है जैसे– सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति, स्वास्थ्य की स्थिति, पारिवारिक सदस्यों से सम्बन्धों की प्रकृति, सामाजिक सम्बन्धों की स्थिति, विभिन्न मानव समूहों से होने वाली अन्त क्रियायें, वृद्धों की इच्छायें, उनका धार्मिक दृष्टि, सामाजिक सहभागिता की स्थिति आदि। सामान्यतः समायोजन का आशय है कि वृद्धावस्था समरूप जीवनयापन करना। वैसे वृद्ध विज्ञान में समायोजन शब्द का प्रयोग वृद्धों की समस्याओं के निदानार्थ बनाये गये कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रमों एवं कार्य–नीतियों के सम्बन्ध में किया जाता है। इस सन्दर्भ में किये गये अध्ययनों से यह संकेत मिले हैं कि अच्छी शिक्षा व सम्पन्न व्यावसायिक पृष्ठभूमि, सामाजिक परिवर्तन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण, युवा पीढ़ी के कार्यो में अनावश्यक हस्तक्षेप न करना जीवन के प्रति सन्तोषमय आशावादी दृष्टिकोण प्रायः वृद्धों को स्वस्थ समायोजन के लिए प्रेरित करता है। अतः इसी स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए प्रतिचयित समस्त साठोत्तर वृद्धों से पूछा गया कि वे अपने सामाजिक समायोजन के विषय में विचार व्यक्त करें तथा प्राप्त तथ्यों को तीन–बिन्दु पैमाने के द्वारा तालिका संख्या 6.18 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या- ६.१८

परिवार में समायोजन के प्रति प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के विचार

क्र.सं.	साठोत्तर वृद्धों के विचार	कुल सूचनादाता	प्रतिशत
1	स्वस्थ समायोजन है।	202	67
2	स्वस्थ समायोजन नहीं है।	83	28
3	कुछ नहीं कह सकते हैं।	15	05
	योग	**300**	**100**

उपरोक्त तालिका का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 67 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध यह मानते हैं कि उनका स्वस्थ पारिवारिक समायोजन है। इसके विपरीत 28 प्रतिशत सूचनादाता यह मानते हैं कि उनका पारिवारिक समायोजन अस्वस्थ प्रकृति का है; शेष मात्र 5 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध इस विषय में तटस्थ भाव व्यक्त करते हैं।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अधिकांश वृद्धों का स्वस्थ पारिवारिक समायोजन है।

पारिवारिक दायित्वों को वहन करते हुए वृद्धावस्था जीवन में जब प्रवेश कर जाती है तब व्यक्ति को परिवार और समाज से आर्थिक एवं मानसिक सहारे की आवश्यकता पड़ने लगती है परन्तु विडम्बना यह है कि इसी मोड़ पर आकर व्यक्ति दैहिक, पारिवारिक, आर्थिक एवं समाजिक स्तर पर धीरे-धीरे अकेला होने लगता है। सन्तानों का लालन-पालन करते समय प्रत्येक व्यक्ति यह अवश्य सोचता है कि जीवन के अन्तिम चरण में यही सन्तानें उसका सहारा बनेगी परन्तु भौतिकवादी संस्कृति के प्रभाव में आने के कारण यही संतानें उन्हें अकेला छोड़ देती है। वर्तमान का सच भी यही है कि आज साठोत्तर वृद्धों को समाज के हाशिये पर रखा जा रहा है अपने ही घर से दूर रहकर किसी वृद्धाश्रम में या अन्यत्र उन्हें जीवनयापन करने के लिए मजबूर होना पड़ रहा है जो उनके लिए गहन सन्ताप का विषय है। किसी कठोर संवैधानिक प्रावधान के अभाव में नई पीढ़ी के युवाओं का अपने वृद्ध माता-पिता के प्रति अन्याय बढ़ता जा रहा है। इस विषय में हिमाचल प्रदेश सरकार की ओर से पारित विधेयक एक महत्वपूर्ण पहल

मानी जा सकती है हिमाचल प्रदेश सरकार ने इस ऐतिहासिक विधेयक के द्वारा बच्चों को उनके वृद्ध माता-पिता तथा अन्य आश्रितों को गुजारा भत्ता देने के निर्देश दिये हैं। यह विधेयक इस मापने में भी महत्वपूर्ण है क्योंकि माता-पिता के हितों की रक्षा के लिए विश्व में सम्भवतः पहली बार ऐसा महत्वपूर्ण निर्णय लिया है।

साठोत्तर वृद्धों की निरन्तर विघटित होती प्रस्थिति का मुख्य कारण संयुक्त परिवारों का विघटन और एकल परिवारों का बढ़ता प्रचलन है। वृद्धों की उपेक्षा का एक और कारण उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रति युवा पीढ़ी का बढ़ता आकर्षण है। उपभोक्तावादी संस्कृति मौज-मस्ती को बढ़ाने वाली संस्कृति है। इस संस्कृति के प्रभाव के कारण युवा पीढ़ी अपनी जिम्मेदारियों को भूलती जा रही है। वस्तुतः उन्हें वृद्धों से कोई विशेष लगाव नहीं रह गया है चाहे वह उनके माता-पिता ही क्यों न हो। आज युवा पीढ़ी जिस नये समाज, संस्कृति और परम्परा को विकसित कर रही है उसमें धैर्य, त्याग तथा सहिष्णुतता जैसे शाश्वत गुणों का पर्याप्त अभाव है तथा वह भौतिकवादी संस्कृति का निर्माण करने में जुटी हुई जहाँ भावनाओं का कोई स्थान नहीं है। जिस कारण निरन्तर वृद्धों की उपेक्षा बढ़ती जा रही है। इसके अतिरिक्त अपाहिज एवं आजीवन बेरोजगार रहने वाले साठोत्तर वृद्धों की स्थिति तो और भी दयनीय है उन्हें किसी का भी सहारा नहीं मिलता तथा उदर पूर्ति के लिए उन्हें भिक्षा पर निर्भर रहना पड़ता है। मध्यम एवं निम्न वर्गीय परिवारों के साठोत्तर वृद्ध खाली हाथ परिवार के व्यक्तियों की दया पर अपनी जिन्दगी जीने के लिए विवश होते हैं। क्योंकि उनके जीवनभर की पूँजी सन्तानों के लालन-पालन तथा उनके विवाह आदि में व्यय हो जाती है तथा उनके द्वारा बनायी गयी अचल सम्पत्ति का बँटवारा हो जाने के कारण वह वृद्ध परिवार के लिए बेकार हो जाते हैं और उन्हें परिवार पर बोझ समझा जाने लगता है।

वृद्धावस्था में शरीर में व्याधियाँ जन्म ले लेती हैं। शारीरिक शिथिलता के साथ-साथ मानसिक शिथिलता भी आने लगती है ऐसी स्थिति में वृद्ध व्यक्ति यह उम्मीद करता है कि इस अवस्था एवं दशा में कोई पारिवारिक व्यक्ति उनकी देखभाल करें तथा उन्हें सहारा प्रदान करें, इसके अतिरिक्त हमारे देश में ऐसी सरकारी एवं सामाजिक संस्थाओं का अभाव है जो वृद्धों की जिम्मेदारियों को उठा

सकें जबकि अमेरिका में वृद्धों को सरकार की ओर से प्रत्येक सुविधा उपलब्ध करायी जाती है। अमेरिका में किसी भी व्यक्ति को 55 साल के पश्चात् पूरक सामाजिक आय प्राप्त होनी आरम्भ हो जाती है इस धन से वह व्यक्तिगत रूप से खर्च कर सकता है वह मैडीकेड की सहायता से हर प्रकार की डॉक्टरी सलाह, दवायें तथा अच्छा इलाज बिना किसी खर्च के करवा सकता है। अमेरिका में वृद्धों को फूट स्टैम्प की भी सुविधा प्रदान की जाती है। वह इन टिकटों की सहायता से सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त दुकानों से अपनी पसन्द की खाद्य सामग्री ले सकते हैं। इसके अतिरिक्त अमेरिका के प्रत्येक नगर में वरिष्ठ नागरिक देखभाल केन्द्र है जिनमें वृद्धों को निःशुल्क प्रवेश दिया जाता है तथा उनके जीवनयापन का प्रत्येक खर्च सरकार वहन करती है। इसके विपरीत हमारे देश में साठोत्तर वृद्धों को अपने शेष जीवनयापन के लिए अपने विवाहित, अविवाहित सन्तानों पर या रिश्तेदारों पर आश्रित रहना पड़ता है। यदि उनकी देखभाल के लिए हिमाचल प्रदेश सरकार की ही भाँति अन्य राज्यों में भी कानून बना दिये जाये तब भी वृद्धों की समस्याओं का पूर्णतः समाधान हो पाना कठिन मालूम होता है। क्योंकि अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाहन ठीक ढंग से न करने पर वृद्ध व्यक्ति द्वारा शिकायत दर्ज करायी जा सकती है परन्तु उनके मोहवश यह सम्भव नहीं हो पाता है। इसलिए इस प्रकार के संवैधानिक प्रावधानों के लिए यह आवश्यक है कि सामाजिक जागरूकता लायी जाये क्योंकि इसके अभाव में यह कानून अधिक प्रभावी नहीं हो पायेगा।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

(1) राबएर्ल एवं सेल्जनिक जी.जे. (1959) : मेजर सोशल प्रोब्लम्स, रा पीटरसन एण्ड कम्पनी इलनोइस

(2) देशमुख नानाजी (1999) : राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी जे.एन.यू., नई दिल्ली

(3) पाठ्क जे.डी. (1982) : हेल्थ प्रोब्लम्स ऑफ द एजेड इन इण्डिया टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेस, बम्बई

(4) पाठ्क जे.डी. (1982) : हेल्थ प्रोब्लम्स ऑफ द एजेड इन इण्डिया टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेस, बम्बई

(5) सक्सेना आर. प्रसाद (1984) : प्रोब्लम्स ऑफ द एजेड इन इण्डिया सम रिफलेक्सन्स, अजन्ता पब्लिकेशन, दिल्ली

(6) सूडान कृपाल सिंह (1955) : एजिंग इन इण्डिया मिनर्वा एसोसिएट्स प्रा. लि., कलकत्ता

(7) चौधरी डी. पाल (1992) : एजिंग एण्ड द एजेड इण्टर इण्डिया पब्लिकेशन, नई दिल्ली

(8) देसाई के. जी. (1970) : प्रोब्लम्बस ऑफ रिटायर्ड प्यूपल इन ग्रेटर बाम्बे टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेस, बम्बई

(9) डिशूजा विक्टर एस. (1971): चेन्जेज इन सोशल स्ट्रक्चर एण्ड चेजिंग सेल्स ऑफ ओल्डर प्यूपल इन इण्डिया सोशियोलाजी एण्ड सोशल रिसर्च 55 (3)

(10) भटनागर जी. एस. (1987) : सोशल एडजेस्टमेन्ट एमांग रिटायर्ड परसन्स टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज, बम्बई

(11) **नन्दल डी. एस. (1967)** : एजिंग प्रोब्लब्स इन द स्ट्रकचरल कान्टेक्ट टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज, बम्बई

(12) **जोनी सी. जोसेफ (1988)** : इण्टरएक्शन विटवीन द ओल्ड एण्ड द यंग सोशल बेलफेयर भाग 35 नं. 6 सेन्ट्रल सोशल बेलफेयर वाई, नई दिल्ली

(13) **नायर पी. के. बी. (1987)** : एजिंग एण्ड सोसायटी सोशल वेलफेयर मात्र 34 नं. 2 व 3 मई–जून, नई दिल्ली

(14) **एलफ्रेड डिशूजा (1982)** : द सोशल आर्गनाइजेशन ऑफ एजिंग एमांग द अरबन पुअर इण्डियन सोशल इन्स्टीट्यूट, नई दिल्ली

(15) **एडवार्ड जे.एस. (1951)** : द परसनल चैलेन्ज : बायोलॉजीकल चेन्जेज एण्ड मेन्टीनेन्स ऑफ हेल्थ, यूनीवर्सिटी ऑफ मिशीगन प्रेस, एन आरबर

(16) **टाउन्सेण्ट पी. (1957)** : द फैमिली लाइफ ऑफ ओल्ड फूपल रट्लेच एण्ड कगनपाल, लन्दन

(17) **इथेल शान्स (1968)** : ओल्ड प्यूपल इन थ्री इण्डस्ट्रियल सोसाइटीज रट्लेच कगनपाल, लन्दन

(18) **लोवेन्थल एम. एफ (1964)** : सोशल आइसोलेशन एण्ड मेन्टल इलनेस इन ओल्ड एज अमेरिकन सोसियोलोजिकल रिव्यू, फरवरी

(19) **टन्सटाल जे. (1966)** : ओल्ड एण्ड एलोन : ए सोशियोलाजिकल स्टडी ऑफ ओल्ड प्यूपल रट्लेच एण्ड कगनपाल, लन्दन

(20) **मिश्रा एल. एस. (1982)** : द इरोजन ऑफ अथॉरिटी ऑफ एजेड इन व फैमिली इन इण्डिया पेपर प्रेजेन्टेड इन

टैन्थ वर्ड कांग्रेस ऑफ सोशियालोजी मैक्सिको 16–21 अगस्त

(21) रावत एच. के. (1980) : इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशियालोजी रावत पब्लिकेशन, जयपुर

(22) मिश्रा सरस्वती (1987) : सोशल एडजेस्टमेन्ट इन ओल्ड एच.बी.आर. पब्लिशिंग कारपोरेशन, दिल्ली

(23) विलमा डोनाह्यू (1963) : रिहैबिलीटेशन ऑफ लांग टर्म एजेड पेशेन्ट्स आर्थर प्रेस, शिकागो

(24) चौधरी डी. वी. (1992) : एजिग एण्ड द एजेड : ए सोर्स बुक इण्टर इण्डिया पब्लिकेशन, नई दिल्ली

(25) मिशैल जी. डी. (1984) : ए निव डिक्शनरी ऑफ सोशियॉलोजी रटलेच एण्ड कगनपाल, लन्दन

(26) क्यूमिंग इ. (1961) : ग्रोविग ओल्ड बेसिक बुक्स, न्यूयार्क

(27) जार्ज मैडाक्स एल. (1966) : रिटायरमेन्ट ऐज ए सोशल इपेन्ट इन द यूनाइटेड स्टेटस एप्लीटन सेन्चुरी, न्यूयार्क

(28) थ्राडफोर्ड एम. (1972) : रिटायरमेन्ट एण्ड द रोल प्लेइंग सोशियोलोजी, सोशियोलोजीकल एब्सट्रेक्ट, दिसम्बर 2006 नं. 2

(29) एरनोल्ड आर. एम. (1964) : ए केरन्ट थ्योरेटिकल इश्यू इन सोशल जेरेन्टालाजी द जेरेन्टालाजिस्ट, मार्च नं. 4

(30) टन्सटाल जे. (1966) : ओल एण्ड एलोन : ए सोशियोलोजीकल स्टडी ऑफ ओल्ड प्यूपल रटलेच एण्ड कगनपाल, लन्दन

(31) गिलवर्ट डी. (1971) : द थ्योरी ऑफ डिस्इन्गेजमेन्ट एण्ड द सब कल्चर ऑफ इल्डरली प्यूपल ऐज ए सोशियोलोजीकल बेसिस फॉर द स्टडी द प्रोब्लेम ऑफ द एजेड सोशियोलोजीकल एब्सट्रेक्ट

(32) **कलीश ए. आर. (1972)** : ऑफ सोशल वैल्यूज एण्ड द डाइंग ए डिफेन्स ऑफ डिइन्गेजमेन्ट सोशियोलोजिकल एवस्ट्रेक्ट, मई

(33) **हैविघुरर्ट आर. जे. (1965)** : इसे ऑन बॉड़ी सेल्फ एण्ड सोसायटी, सोशियोलोजी एण्ड सोशल रिसर्च भाग 49 न. 3, अप्रैल

(34) **पुरकल एच. (1972)** : सोशल साइकोलॉजीकल फैक्टर्स एण्ड सक्सेसफुल एजिंग सोशियोलॉजीकल एण्ड सोशल रिसर्च भाग 56 न. 3, अप्रैल

अध्याय-७

सामान्यीकरण

निष्कर्ष एवं सुझाव :

प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन में मुख्य रूप से चार अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है जिसमें बचपन, युवा, प्रौढ़ तथा वृद्धा अवस्थाएँ आती हैं इन सभी अवस्थाओं में सबसे सोचनीय एवं विचारणीय स्थिति वृद्धावस्था होती है जिसे सबसे अधिक सम्मानजनक माना जाता है। इस अवस्था को सम्मानजनक माना जाने का कारण यह है कि मनुष्य के जीवन का अनुभव भी इसी अवस्था में कार्य करता है परन्तु समयानुसार मनुष्य के जीवन के परिवेश में इस अवस्था में सामंजस्य बिठाने के लिए वृद्धों को आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण, नगरीकरण तथा संचार के माध्यमों के साथ जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है जिसके अन्तर्गत वृद्धों को दिन-प्रतिदिन अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

वृद्धावस्था स्वयं एक समस्या मानी जाती है। साठोत्तर आयु को प्राप्त करने के पश्चात् व्यक्ति जब अपनी इन्द्रियों की क्षमता में निर्बलता का अनुभव करने लगता है तो वह जीवन से उदासीन हो शिथिल हो जाता है। उसके अतीत के समस्त अनुभव नवीन विशेषीकृत अवस्था एवं ज्ञान के आगे असफल सिद्ध होने लगते हैं। सन्तति-अन्तराल एवं मूल्य संघर्ष अनेक विषय स्थितियों को जन्म देकर साठोत्तर वृद्धों के समक्ष सामाजिक समायोजन की चुनौती प्रस्तुत करने लगते हैं परिणामतः शनैः शनैः साठोत्तर वृद्धों का जीवन विखण्डित होने लगता है।

सामान्यतः यह देखा गया है कि विवाहोपरान्त एक नव वधू जब अपने ससुराल में प्रवेश करती है तो उसके समक्ष एक नया परिवेश एवं परिस्थितियाँ होती हैं जिनके साथ उसे तादात्म्य स्थापित करना होता है। घर में पूर्व से ही उपस्थित वृद्धा (सास) जो कभी इस घर में बहू के रूप में आयी थीं अपने अतीत की खट्टी-मीठी स्मृतियों के साथ अपनी अधिसत्ता, प्रभुत्व, प्रभाव एवं शासन तन्त्र

को स्थापित करना चाहती है जबकि नवागंतुक बहू अपनी इन नवीन परिस्थितियों के साथ तादात्मय को बनाना चाहती है अतः पुरातन एवं अद्यतन मूल्यों की संघर्षात्मक स्थितियाँ प्रायः बहू तथा वृद्धों (विशेषकर सास) के मध्य तनाव, संघर्ष, अविश्वास, ईर्ष्या, घृणा जैसी अनेक प्रवृत्तियों एवं स्थितियों को जन्म देकर पारिवारिक व्यवस्था को अव्यवस्थित बनाने का प्रयास करती है। इस प्रकार परिवार में उत्पन्न शक्ति परीक्षण अस्मिता की रक्षा या प्रतिष्ठा प्रभुत्व, स्वाभिमान को अपने–अपने तरीके से स्थापित करने के लिए परस्पर प्रतिस्पर्धायें आरम्भ हो जाती हैं जो साठोत्तर वृद्धों के सामाजिक समायोजन को ही पंगु बनाने का प्रयास करती हैं अतः साठोत्तर वृद्धों की इसी स्थिति का अध्ययन करने के लिए मैंने प्रस्तुत अध्ययन विषय का चयन किया।

जनपद झाँसी पाँच तहसीलों में विभक्त है जनपद झाँसी की कुल साक्षरता 66.06 प्रतिशत है। जनपद झाँसी में विभिन्न जातियों के व्यक्ति निवास करते हैं अतः दैव निदर्शन पद्धति के द्वारा 300 साठोत्तर वृद्धों का प्रतिचयन (समग्र का 50.00 प्रतिशत) किया गया। इस अध्ययन के उद्देश्यों के अनुसार एक साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण कर साठोत्तर वृद्धों से तथ्य संकलित की प्रक्रिया प्रारम्भ की जो 2 अक्टूबर 2006 से प्रारम्भ होकर 24 जनवरी 2007 को अनेक कठिनाइयों का सामना करने के उपरान्त समाप्त हुई। प्राप्त तथ्यों को संकलित कर तालिकाबद्ध किया और पुनः विश्लेषित किया। इस हेतु विश्लेषणात्मक शोध प्रचना का आश्रय लिया गया।

(अ) अध्ययन निष्कर्ष :

प्रतिचयित समस्त साठोत्तर वृद्धों की सामाजिक दशाओं के विविध पक्षों से सम्बन्धित प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से जो निष्कर्ष प्रकाश में आये वे निम्नलिखित हैं :–

(1) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध एकाकी परिवारों के हैं।

(2) चयनित साठोत्तर वृद्ध व्यक्तिगत आवासों में एवं किराये के मकानों में निवास करते हैं।

(3) अधिकांश परिवारों में एक या दो पीढ़ी के ही लोग रहते हैं।

(4) सामान्यतः साठोत्तर वृद्धों के परिवारों का मुख्य व्यवसाय व्यक्तिगत व्यापार, नौकरी एवं व्यक्तिगत काम ही है।

(5) लगभग 67 प्रतिशत परिवार आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ तथा शेष 31 प्रतिशत आर्थिक दृष्टि से कमजोर पाये गये।

(6) लगभग 67 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध 60 से 70 वर्ष की आयु के हैं जो मानक आयु मानी जाती है।

(7) 61 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों की औसत मासिक आय 2000-3000 रुपये के मध्य है जो व्यक्तिगत खर्चा के लिए तो उचित है परन्तु पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने की दृष्टि से कम है।

(8) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध विवाहित हैं किन्तु विधुर/विधवा की स्थिति को भी नकारा नहीं जा सकता है।

(9) प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध अशिक्षित कम हैं, वे शिक्षित हैं तथा उच्च शिक्षा प्राप्त भी हैं।

(10) प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के परिवारों में अधिकांश शाकाहारी भोजन ही पसन्द किया जाता है।

(11) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों के सन्तानें हैं।

(12) लगभग 68 प्रतिशत साठोत्तर वृद्ध केन्द्रीय परिवार व्यवस्था एवं शेष 32 प्रतिशत एकाकी एवं मिश्रित परिवार व्यवस्था में जीवनयापन कर रहे हैं।

(13) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध जनसंख्या वृद्ध एवं नौकरी के कारण अपनी सन्तानों के साथ नहीं रह पाते हैं।

(14) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपने विवाहित बच्चों से अलग रहने को अधिक उपयोगी मानते हैं तथा आपसी समझ के आधार पर अलग रहते हुए भी सम्बन्धों को बनाये रखना ही श्रेयष्कर समझते हैं।

(15) परस्पर एक दूसरे की सहायता करना, विवाह आदि से सम्बन्धित उचित सुझाव देना आदि अलग रहने वाले पारिवारिक सदस्यों से स्थायित्व के सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

(16) सन्तानों का अन्यत्र निवास करना एवं वैचारिक मतभेद ही वह प्रमुख कारण है जिनसे साठोत्तर वृद्धा ने अपनी सन्तानों से सम्बन्ध समाप्त हो चुके हैं।

(17) कुछ साठोत्तर वृद्ध महिलाओं को छोड़कर अधिकांश वृद्धाएँ परिवार के महत्वपूर्ण मामलों में निर्णायक सदस्य की भूमिका का निर्वाह करती हैं अर्थात् परम्परागत पारिवारिक अधिसत्ता उनके पास सुरक्षित है क्योंकि वे जनतांत्रिक तरीके से ही निर्णय लेने में विश्वास रखती है। यदि पारिवारिक सदस्य भी निर्णय लेते हैं तो वृद्धाओं की सहायता, निर्देशन एवं परामर्श द्वारा ही करते हैं।

(18) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों का पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में उच्च स्थान है जो परम्परागत मान्यताओं को प्रतिबिम्बित करता है।

(19) पारिवारिक निर्णय प्रक्रिया में अपना वर्चस्व बनाये रखने के लिए साठोत्तर वृद्ध महिलाएँ एवं पुरुष परिस्थितियों के अनुसार निर्णय लेते हैं तथा वह मध्य मार्ग का अनुसरण करते हैं।

(20) साठोत्तर वृद्धों की दृष्टि में पारिवारिक निर्णय लेने वाले श्रेष्ठ व्यक्ति समस्त पारिवारिक सदस्य (समूह) है।

(21) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध यह व्यक्त करते हैं कि परिवार की सन्तानों के श्रेष्ठ हित में वृद्धों की अपेक्षा वे पारिवारिक सदस्य जिनकी सन्तानों के विषय में निर्णय लेना हो तथा वे सन्तानें जिनके विषय में निर्णय होना हो, ही श्रेष्ठ निर्णायक व्यक्ति हो सकते हैं। यदि इन दोनों पक्षों द्वारा पारिवारिक स्तर पर सामूहिक रूप से निर्णय हो तो अधिक व्यवहारिक सिद्ध हो सकता है।

(22) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों द्वारा लिये गये पारिवारिक निर्णयों को यथावत स्वीकार न करके आधुनिक सन्दर्भो के अनुकूल पारिवारिकजनों द्वारा किये गये कार्यो को उनमें यथा सम्भव आंशिक संशोधन करके स्वीकार कर लिया जाता है अर्थात् अन्तिम स्वीकृति युवा सन्तति के अनुसार ही होती है जो परम्परागत पारिवारिक अधिसत्ता के परिवर्तन का प्रतीक है।

(23) अधिकांश 57 प्रतिशत साठोत्तर वृद्धों के अनुसार परिवार में उनकी पूर्ण (सबल) अधिसत्ता एवं प्रभाव स्थापित है जबकि 43 प्रतिशत इसके विपरीत अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हैं। साठोत्तर वृद्धों की सबल अधिसत्ता एवं प्रभाव का कारण वृद्धों के परिवार के सदस्यों के प्रति दृष्टिकोण, व्यवहार, जीवन-आदर्श, नियंत्रण की विधियाँ आदि के साथ-साथ वे तौर-तरीके हैं जो

न केवल परम्परागत पारिवारिक अधिसत्ता को अक्षुण्य बनाये रखने हेतु उपयोगी होते हैं।

(24) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपने खाली समय में अपने मित्रों एवं सहेलियों साथ गप-शप करना, मनोरंजन सम्बन्धी कार्य को सम्पन्न करना, ईश्वर का भजन-पूजन आदि करके व्यस्त रहते हैं।

(25) परिवार में अपना प्रभुत्व और अधिसत्ता बनाये रखने तथा सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए अधिकांश साठोत्तर वृद्ध परम्परावादी मूल्यों में होने वाले परिवर्तनों को भी पारिवारिक स्तर पर स्वीकार लेते हैं।

(26) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध घर परिवार (गृहस्थी) के रख-रखाव स्वच्छता, शिशुओं की देखभाल, युवा पीढ़ी को प्रशिक्षण, भोजन निर्माण एवं वितरण सम्बन्धी गृहस्थी के विधि दायित्वों का निर्वाह करते हैं।

(27) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपने नाते-रिश्तेदारों से सम्पर्क एवं सम्बन्ध बनाये हुए हैं।

(28) उन्हें विभिन्न पारिवारिक एवं वैवाहिक समस्याओं में परामर्श लेकर, एक दूसरे के यहाँ आ-जाकर, दूसरों के द्वारा उनके सम्पर्क में रखकर तीज-त्यौहारों पर नियमित रूप से आमंत्रित करके तथा विभिन्न अवसरों पर (आवश्यकतानुसार) एक-दूसरे की सहायता करके आदि तकनीकों के माध्यम से वृद्धावस्था में नाते-रिश्तेदारों से परस्पर सम्बन्ध बनाये रखने में सहायता मिलती है।

(29) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों का परिवार में अभी भी पूर्ण प्रभाव है।

(30) सभी के साथ समानता का व्यवहार करना, किसी के मार्ग में बाधक न बनना, स्वयं आदर्श व्यक्तित्व रखना तथा कुशल नियन्त्रण व निर्देशन ही वे कारण हैं जिनसे वृद्धों का परिवार में पूर्ण प्रभाव रहता है।

(31) पारिवारिक सदस्यों के साथ पक्षपातपूर्ण व्यवहार करना, स्पष्ट एवं लचीला दृष्टिकोण न होना, शारीरिक असमर्थता, कठोर पारिवारिक नियंत्रण एवं निर्देशन की प्रवृत्ति आदि ऐसे कारण जिनके परिणामस्वरूप साठोत्तर वृद्ध परिवार में प्रभावहीन प्रतीत होते हैं।

उपरोक्त समस्त निष्कर्ष इस तथ्य का संकेत करते हैं कि वृद्धावस्था में स्वस्थ समायोजन, प्रभाव एवं अधिसत्ता बनाये रखने के लिए युवा पीढ़ी की भावनाओं का आदर करते हुए परिस्थितियों से यथासम्भव सामंजस्य स्थापित करना ही अत्यधिक प्रासंगिक है।

प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के जीवन से सम्बद्ध विविध आर्थिक पक्षों के विषय में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करने से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए।

(1) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध आर्थिक दृष्टि से सामान्य प्रकृति के प्रतीत होते हैं।

(2) अधिकांश परिवारों में वित्तीय नियंत्रण एवं प्रबन्धन का अधिकार विवाहित सदस्यों को है जो परम्परागत अधिसत्ता में होने वाले परिवर्तन का प्रतीक है।

(3) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध बच्चों की शिक्षा, रोजगार, विवाह, आवास, सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने ऋण मुक्ति जैसी अनेकों जिम्मेदारियों का वहन कर रहे हैं।

(4) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों की देखभाल उनके जीवन–साथियों एवं युवा पीढ़ी के द्वारा की जा रही है। युवा पीढ़ी में मुख्यतः उनके विवाहित पुत्र एवं बहुएँ तथा विवाहित पुत्री एवं दामाद ही प्रमुख हैं।

(5) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों की देखभाल पहले की भाँति था उससे अधिक हो रही है जो उनके स्वस्थ समायोजन का ही परिचायक प्रतीत होता है।

(6) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध आर्थिक रूप से पराश्रित है।

(7) आर्थिक सन्दर्भ में पराश्रित अधिकांश साठोत्तर वृद्ध अपने विवाहित पुत्रों पर ही आश्रित है। यह पारिवारिक परम्परा के निर्वाहन का प्रतीक है।

(8) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों को आसानी से अपनी मूल आवश्यकताओं को पूर्ण करने की सुविधा नहीं है जिससे उनका जीवन अत्यन्त कष्टकारी रहता है।

(9) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों की आकांक्षायें धार्मिक क्रियाकलापों को सम्पन्न करने तथा सन्तानों को स्वावलम्बी बनाने से सम्बन्धित है लेकिन बहुत से ऐसे साठोत्तर वृद्ध हैं जिनकी कोई आकांक्षा शेष नहीं है। वे सुखद जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

(10) सन्तोषपूर्वक मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करना, शान्ति से मात्र घर पर रहना तथा सर्वदा प्रसन्न रहना एवं दूसरों को रखना आदि वृद्धाओं के वे प्रयास हैं जो उनके स्वस्थ समायोजन हेतु उपयोगी प्रतीत होते हैं।

(11) एकाकी परिवार, पर्दाप्रथा का उन्मूलन, विधवा पुनर्विवाह तथा नारी स्वातन्त्रय के प्रति साठोत्तर वृद्धाओं ने अपने परिवर्तित दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है जबकि अन्तर्जातीय विवाह व विवाह विच्छेद के प्रति परम्परावादी दृष्टिकोण स्पष्ट किया है।

(12) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध सूचनादाताओं के वृद्धावस्था के अनुभव एवं बोधगम्यता की प्रकृति सकारात्मक एवं स्वस्थ ही है फिर भी उनकी नकारात्मक अभिव्यक्ति को नकारा नहीं जा सकता है।

उपरोक्त निष्कर्ष यह संकेत करते हैं कि समस्त प्रतिचयित सूचनादाता निम्न मध्यम आर्थिक स्थिति वाले परिवारों के हैं तथा उनकी पराश्रयता परम्परानुसार अपने वृद्ध जीवन साथी एवं समर्थ सन्तानों पर ही है तथा उनका दृष्टिकोण उभयवादी होने के कारण कट्टरवादिता की विरोधी है। न तो अधिक परम्परावादी और न अधिक उदारवादी होना ही सुखी जीवन का निष्कर्ष/आधार प्रतीत होता है।

प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों के व्याधिकीय जीवन से सम्बद्ध विविध पक्षों पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुए वे निम्नानुसार हैं :-

(1) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध किसी न किसी रोग (व्याधि) से पीड़ित हैं।

(2) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध पाचनक्रिया, रक्तचाप, हृदय रोग, दृष्टिहीनता, श्रवणहीनता, अनिन्द्रा जैसी बीमारियों से पीड़ित हैं।

(3) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों की विभिन्न बीमारियों का इलाज स्थानीय सरकारी अस्पतालों या स्थानीय चिकित्सकों के द्वारा ही होता है।

(4) अधिकांश साठोत्तर वृद्धों का स्वास्थ्य अनिश्चित की स्थिति वाला अच्छा या बहुत अच्छा प्रतीत रहता है।

(5) अधिकांश सूचनादाता समायु व्यक्तियों के साथ मिल–बैठकर अपना समय व्यतीत करते हैं जो उनके अएकान्तता का प्रतीत ही माना जायेगा।

(6) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध सामाजिक स्तर पर आयोजित होने वाले विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों में यथाशक्ति सहभागी होते रहते हैं जो उनके सक्रिय जीवन का परिचायक है।

(7) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध घर-गृहस्थी से समय निकाल कर यथा शक्ति सामाजिक कार्यक्रमों में अधिक से अधिक सहभागी होते रहते हैं जिससे उनकी एकान्तता एवं पृथक्तव जैसी समस्याओं का निदान भी होता रहता है।

(8) प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध एकान्तता या अकेलेपन का अनुभव नहीं करते हैं।

(9) कुछ साठोत्तर वृद्धों का अन्य व्यक्तियों से वैचारिक वैभिन्य, अन्य व्यक्तियों की व्यस्तता से जनित समयाभाव, शरीर की शिथिलता एवं कठोर पारिवारिक नियंत्रण आदि ही एकान्तता के आधारभूत कारण प्रतीत होते हैं।

(10) पारिवारिक सदस्यों से घिरा रहना, पास पडौसियों का अच्छा व्यवहार होना, वैचारिक आदान-प्रदान का अभाव न होना तथा किसी पर भी आश्रित न होना ही वे प्रमुख कारण या स्थितियाँ हैं जो एकान्तता को समाप्त करते रहते हैं।

(11) अधिकांश प्रतिचयित सूचनादाताओं ने यह व्यक्त किया कि वृद्धों की देखभाल उनकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व पारिवारिक सदस्यों एवं सरकार पर ही होना चाहिए।

(12) पारिवारिक सदस्यों के साथ सामन्जस्य रखना, विवाहित युवा सन्तानों को पारिवारिक उत्तरदायित्व सौंपना तथा परिस्थितिनुसार व्यवहार करना ही अधिसत्ता एवं प्रभुत्व को बनाये रखने में सार्थक सिद्ध होते हैं।

(13) दैनिक क्रिया-कलापों के अतिरिक्त पारिवारिक कार्यो में यथा सम्भव सहयोग प्रदान करना, शिशुओं के व्यक्तित्व विकास में सहयोग प्रदान करना, स्वाध्याय करना, ईश्वर उपासना एवं सामुदायिक कार्यो में यथा सम्भव योगदान करना यह सभी कार्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वृद्धों की सामाजिक एवं पारिवारिक अधिसत्ता एवं प्रभुत्व को बनाये रखने में सहायक सिद्ध होते हैं।

(14) अधिकांश साठोत्तर वृद्ध आर्थिक समस्याओं का अनुभव कर रहे हैं।

(15) धनाभाव के कारण प्रतिचयित साठोत्तर वृद्ध विभिन्न पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह न कर पाने, अपने रोग का सही इलाज न करवा पाने, धार्मिक क्रिया-कलापों को सम्पन्न न कर पाने तथा परिवार में अपना अस्तित्व स्थापित न कर पाने से सम्बद्ध विभिन्न समस्याओं का सामना करते रहते हैं।

(16) प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों की आर्थिक समस्याओं का समाधान उनकी सन्तानों द्वारा एवं सरकार द्वारा प्रदत्त आर्थिक सहायता द्वारा ही सफलतापूर्वक सम्भव हो सकता है।

(17) प्रतिचयित साठोत्तर वृद्धों में अधिकांश वृद्धों का स्वस्थ पारिवारिक समायोजन है।

उपरोक्त अध्ययन निष्कर्ष प्रस्तावित प्राक्कल्पना की जाँच (सत्यापन) करने हेतु पर्याप्त प्रतीत होते हैं।

सुझाव मूलक पक्ष :

किसी भी व्यक्ति की वृद्धावस्था का सहारा कौन है? क्या विवशता तिरस्कार, अपमान ही इनकी ममता, त्याग और स्नेह का प्रतिफल है? यह विडम्बना ही है कि भारतीय संस्कृति परिवेश में युगों-युगों से चली आ रही परम्परागत सभ्यता, संस्कृति का अनुपालन यथारूपेण नहीं हो पा रहा है। वर्तमान में एक ओर अकेले रहने की विवशता, छटपटाहट है तो दूसरी ओर आधुनिक भौतिकवादी संस्कृति के प्रभाव के कारण समस्त सुख सुविधाओं को प्राप्त करने की ललक दंभ, और अहंकार है। संसार का प्रत्येक माता-पिता अपनी सन्तानों के पालन-पोषण में अनेक कष्ट सहन करते हैं तथा यह स्वप्न भी संजोते हैं कि युवा होने पर सब दिन यही सन्तानें उनका सहारा एवं संम्बल बनेगी। शारीरिक शिथिलता, दृष्टिहीनता, श्रवणहीनता तथा अनेक गम्भीर बीमारियों से ग्रसित होने के साथ-साथ प्रथा आर्थिक समस्याओं के साथ जीवनयापन करते समय हमारी यही युवा सन्तानें हमें मानसिक, आर्थिक एवं शारीरिक सहारा प्रदान करेंगी परन्तु स्वयं में लिप्त, निष्ठुर जब युवा सन्तानें अपने में ही केन्द्रित हो जाती है तो परिवार के यह वृद्ध अपने ही घर में मेहमानों के रूप अपनी जिन्दगी व्यतीत करने को विवश हो जाते हैं तथा अपनी इस वृद्धावस्था को कोसते रहते हैं।

वर्तमान में आवश्यकता इस बात की है कि एक मजबूत आर्थिक आधारशिला देकर भारत सदृश्य देश में पुनः फैमिली कलवर आरम्भ किया जाये जिसमें वृद्धजन परिवार व समाज में सम्पूर्ण आर्थिक स्वावलम्वन तथा आत्मसम्मान के साथ जीवनयापन कर सकें। साठोत्तर वृद्धों के प्रति अलगाववाद; विचारों में परिवर्तन के कारण तीव्रगति से हो रहा है इसके लिए उत्तरदायी व्यर्थ की आधुनिकता, सीमित सन्तान, गाँव से शहर की ओर पलायन, शासकीय सेवारत, आर्थिक समस्या आदि के अनेक कारण हैं। सन्तानें या तो उसी शहर में नहीं रहते हैं और यदि रहते भी हैं तो वे अपने वृद्धों को भार स्वरूप समझते हैं; इसलिए वृद्ध अपने को असहाय महसूस करते हैं घर का मुख्य कक्ष (ड्राइंग रूम) केवल युवाओं के लिए है वृद्धों को वहाँ बैठने का कोई अधिकार नहीं होता है। स्थिति और भी अधिक विचारणीय तब हो जाती है जब उन्हें किसी उत्सव आदि पर आमंत्रित करने की आवश्यकता न के बराबर रह जाती है। वस्तुतः युवा और परिपक्व पीढ़ी की मंजिल एक है एक राहें भिन्न है जो आज युवा है वह कल परिपक्व होगा ही। प्रत्येक मानव बाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था को पूर्ण करने के उपरान्त जीवन के अन्तिम सोपान वृद्धावस्था में प्रवेश करता है। इस अवस्था में उनके पास अपने जीवन के महत्वपूर्ण विचार, विविध जानकारियाँ, उतार–चढ़ाव, आचार–विचार आदि से सम्बन्धित अनेकों अनुभव होते हैं वे अपना ज्ञान एवं अनुभव समाज की युवा सन्तति को प्रदान करना चाहते हैं किन्तु युवा समाज वैज्ञानिकता की दौड़ में उनके इस ज्ञान की पुरातन, तथा दकियानूस की संज्ञा प्रदान करके उनके साथ समय व्यतीत करना व्यर्थ समझता है। यह शाश्वत सत्य है कि वृद्धावस्था में प्रत्येक मनुष्य का शरीर शिथिल हो जाता है तथा अनेकों रोग उसके शरीर पर आधिपत्य करने लगते हैं जिससे उसकी मानसिक दशा में तीव्रता के साथ परिवर्तन आने लगता है किस कारण वह चिड़चिड़ा हो जाता है, इन्द्रिय शिथिलता की दशा में वह अपने पाल्यों की करुणा, सहानुभूति, स्नेह, सम्मान एवं त्याग की आवश्यकता को महसूस करने लगता है।

विश्व में सर्वाधिक वृद्धों की संख्या चीन में है। वहाँ की सरकार वृद्धों के कल्याणार्थ हेतु जो सुविधा प्रदान करती है उनमें उनके आवास, स्वास्थ्य, मनोरंजन आदि शामिल हैं। इसके अतिरिक्त जापान, नेपाल, इंग्लैण्ड आदि देशों में भी

साठोत्तर वृद्धों की अनेकों समस्याओं को दृष्टिगत करते हुए अनेक सरकारी प्रयास किये जा रहे हैं। विद्यालयों में बच्चों को कमर झुकाकर, लाठी पकड़कर चलना, कम्पित शरीर से कार्य करना आदि अनेक प्रकार के प्रशिक्षण दिये जा रहे हैं जिससे परिवारों में निवास कर रहे वृद्धों की समस्याओं को समझा जा सके।

भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था थी जो अब विकास और प्रगति के कारण सकल परिवारों में परिवर्तित हो रहे हैं। परम्परागत संयुक्त परिवार प्रणाली में परिवार हो रहे हैं। परम्परागत संयुक्त परिवार प्रणाली में परिवार के वृद्धों का सम्मान किया जाता था परन्तु एकाकी परिवारों के कारण हमारे चिन्तनशील और अनुभवी साठोत्तर वृद्धों की उपेक्षा आरम्भ हो गयी। परिणामतः वृद्धावस्था एक गम्भीर सामाजिक समस्या के रूप में दृष्टिगत होने लगी है।

भारत सरकार ने सेवानिवृत्ति की आयु सीमा साठ वर्ष निर्धारित की है परन्तु यह विचारणीय प्रश्न है कि एक दो पूर्व तक जो व्यक्ति किसी उच्च पद पर आसीन होता है सेवानिवृत्त होने के पश्चात् परिवार में उसकी प्रस्थिति कुछ भी नहीं रहती अतः इसमें सुधार की अति आवश्यकता है। सेवानिवृत्त होने की आयु सीमा को बढ़ाया जाना चाहिए। क्योंकि वृद्धावस्था आयु से नहीं मन की एक दशा है। इस स्थिति से निपटने के लिए सरकार, सामाजिक संस्थाओं व युवा पीढ़ी को महत्वपूर्ण ठोस कदम उठाने चाहिए और ऐसी संस्थाओं का निर्माण करना चाहिए जिनसे साठोत्तर वृद्ध अपने जीवन को नीरस, व्यर्थ तथा नरकीय न समझे जिसका चयन उनकी रुचि के अनुसार किया जाना चाहिए। जिससे उसका पुनः सामाजिक समायोजन सम्भव हो सके तथा वह सम्मानपूर्वक जीवनयापन कर सकें। साठोत्तर वृद्ध समाज व परिवार की आधारशिला होते हैं वृद्धों की सेवा का उत्साह परिवार के प्रत्येक युवा में होना चाहिए विशेषकर युवा महिलाओं को अपने घर के वृद्धों की सेवा हार्दिक स्नेह से अपना कर्त्तव्य समझ कर करनी चाहिए। साठोत्तर वृद्धों की समस्या के निराकरण हेतु डे केयर सेन्टर, परिवार परामर्श केन्द्र, दादा–दादी अपनाओ, रैन–बसेरा तथा वृद्धा आश्रमों की स्थापना आदि से ही हम उदासीन जीवन को मुस्कुराहट प्रदान कर सकते हैं।

इस सन्दर्भ में सरकारी स्तर से जन दृष्टिकोण परिवर्तित करने की आवश्यकता है जिससे सन्तति अन्तराल, जनित मूल्य संघर्ष को कम किया जा

सके। विभिन्न सामाजिक संस्थाओं एवं संगठनों आदि को संगोष्ठियाँ आयोजित कर उन महत्वपूर्ण पक्षों पर विचार विमर्श करना चाहिए जिससे युवा एवं वृद्धों की परस्पर समस्याओं का निदान करना सम्भव हो सके क्योंकि वृद्धों का सम्मान करना, उन्हें प्रतिष्ठा देना एवं उनका पालन-पोषण करना हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। अपनी युवा पीढ़ी के मध्य इस भावना का प्रचार-प्रसार करना अत्यन्त आवश्यक है। जिससे प्रत्येक वृद्ध का जीवन सुखमय व्यतीत हो सके।

"साठोत्तर वृद्धों की जीवनचर्या एवं समस्याओं का एक समाज वैज्ञानिक अध्ययन"
(झाँसी जनपद के विशेष सन्दर्भ में)

शोध निर्देशक :
डॉ. बी.डी.एस. गौतम
उपाचार्य, समाजशास्त्र विभाग
नारायण (पी.जी.) कॉलेज,
शिकोहाबाद - 205135

अनुसंधित्सु :
कु0 चन्द्रकान्ता दत्तात्रेय

साक्षात्कार-अनुसूची

(1) आयु

(2) लिंग — पुरुष / स्त्री

(3) **धर्म एवं जाति :**

- (क) हिन्दू — ब्राह्मण/क्षत्रिय/वैश्य/अनूसूचित जाति
- (ख) मुस्लिम ( )
- (ग) ईसाई ( )
- (घ) पारसी ( )
- (ङ) अन्य ( )

(4) मूल निवासी — कस्बा/गाँव/नगर

(5) **शिक्षा का स्तर :**

- (क) पूर्णतया निरक्षर ( )
- (ख) केवल अक्षर मात्र ( )
- (ग) प्राथमिक ( )
- (घ) माध्यमिक ( )
- (ङ) हाईस्कूल ( )
- (च) इण्टरमीडिएट ( )
- (छ) स्नातकोत्तर ( )
- (ज) इससे भी अधिक क्या ( )

(6) **वैवाहिक स्थिति :**

- (क) अविवाहित ( )
- (ख) विवाहित ( )
- (ग) विधुर ( )
- (घ) परित्यक्त ( )
- (ङ) विधवा ( )

(च) तलाकशुदा ( )

(7) **परिवार की रचना :**

(अ) (क) अकेला व्यक्ति ( )

(ख) केवल वृद्ध पति ( )

(ग) अविवाहित सन्तानों के साथ ( )

(घ) विवाहित पुत्रियों के साथ ( )

(ङ) विवाहित पुत्रों के साथ ( )

(छ) अन्य किसी के साथ किसके ( )

जनजाति/अन्य

(ब) **सन्तानें कहाँ रहती हैं :**

(क) आपके साथ ( )

(ख) इसी मौहल्ले में ( )

(ग) इसी शहर में ( )

(घ) पास के किसी नगर में ( )

(ङ) दूर के शहर में ( )

(छ) विदेश में ( )

(8) **परिवार का आकार :**

(क) कुल संख्या ( )

(ख) स्त्री ( )

(ग) पुरुष ( )

(घ) बच्चे 15 वर्ष से कम ( )

(9) **व्यवसाय :**

स्वयं का		**परिवार का**
( )	व्यापार	( )
( )	खेती	( )
( )	उद्योग	( )
( )	मजदूरी	( )
( )	शासकीय सेवा	( )
( )	अर्ध शासकीय सेवा	( )
( )	अशासकीय सेवा	( )
( )	अन्य कोई	( )

(10) **कुल मासिक आय :**

स्वयं की रुपये .... पारिवारिक रुपये ....

(11) **स्वयं की आय के स्रोत :**

(क) वेतन ( )

(ख) वचन ( )

(ग) व्याज ( )

(घ) सरकारी पेंशन ( )
(ङ) स्वयं अर्जित आय ( )
(च) मकान का किराया ( )
(छ) अन्य कोई क्या ( )
(ज) कोई नहीं ( )

(12) **(अ) क्या यह आय आपके लिये पर्याप्त होती है :**
(क) हाँ पूरी तरह पर्याप्त होती है ( )
(ख) प्रायः पर्याप्त होती है ( )
(ग) कभी–कभी दिक्कत आती है ( )
(घ) प्रायः पर्याप्त नहीं होती है ( )
(ङ) बिल्कुल पर्याप्त नहीं होती है ( )

(ब) अब अपर्याप्त होती है तो आप क्या करते हैं :
(क) बचत की राशि में से निकालते हैं ( )
(ख) ऋण लेते हैं ( )
(ग) वस्तुयें बेचते हैं ( )
(घ) अतिरिक्त श्रम करते हैं ( )
(ङ) अन्य किसी से सहायता लेते हैं ( )

किससे–
(क) अविवाहित पुत्रों से ( )
(ख) विवाहित पुत्रों से ( )
(ग) अविवाहित पुत्रियों से ( )
(घ) विवाहित पुत्रियों से ( )
(ङ) अविवाहित भाई से ( )
(च) विवाहित भाई से ( )
(छ) रिश्तेदार से ( )
(ज) मित्रों से ( )
(झ) पड़ोसियों से ( )
(ञ) किसी संस्था से ( )
(ट) या दूर किसी से ( )

(13) क्या आप पर कोई ऋण है .... हाँ ( ) .... नहीं ( )
यदि हाँ तो कितना रुपये ....

(14) **(अ) आपके ऋण लेने के क्या कारण हैं :**
(क) घरेलू आवश्यकतायें ( )
(ख) बीमारी ( )
(ग) कृषि सम्बन्धी ( )
(घ) मुकद्दमे बाजी ( )
(ङ) बच्चों की शिक्षा ( )

(च) बच्चों के विवाह ( )
(छ) अन्य कोई ( )

(ब) **ऋण अदायगी की क्या व्यवस्था है :**
(क) अतिरिक्त श्रम करके ( )
(ख) वस्तुयें गिरवी रख के ( )
(ग) सन्तानें इसकी व्यवस्था करेगी ( )
(घ) कहीं से आपकी कोई शेष राशि आने की उम्मीद है ( )
(ङ) प्रावीडेन्ट फण्ड ( )
(च) बीमें की रकम ( )
(छ) या अन्य कोई ( )

(15) **वेश भूषा :**
(अ) (क) परम्परागत हिन्दुस्तान ( )
(ख) प्रचलित वेश भूषा ( )
(ब) साधारण तथा वस्त्रों के प्रकार :
(क) खादी ( )
(ख) सूती ( )
(ग) सिन्थेटिक ( )

(16) **वर्तमान भोजन :**
(क) जैसा हमेशा करते थे ( )
(ख) पहले की अपेक्षा कुछ हलका ( )
(ग) बहुत हल्का ( )

(17) (अ) **आपके परिवार में भोजन कौन बनाता है :**
(क) स्वयं ( )
(ख) पत्नी ( )
(ग) परिवार का कोई सदस्य ( )
(घ) नौकर ( )
(ङ) बाजार से आता है ( )

(ब) भोजन बनाते समय पर में तथा आपके मत से किस बात की प्राथमिकता दी जाती है .... कृपया प्राथमिकता क्रम दे।

घर में		**आपका मत**
( )	स्वाद	( )
( )	आकर्षणता	( )
( )	मितव्यता	( )
( )	पौटिकता (पौष्टिकता)	( )
( )	व्यक्तिगत इच्छा	( )
( )	सामाजिक प्रतिष्ठा	( )
....	अन्य कोई बात क्या	

(18) (अ) **आप साधारणतया किस स्थिति में भोजन ग्रहण करते हैं :**

(क) बहुत प्रसन्नता पूर्वक ( )
(ख) कुछ प्रसन्नता पूर्वक ( )
(ग) तटस्थता पूर्वक ( )
(घ) कुछ अप्रसन्नता पूर्वक ( )
(ङ) बहुत अप्रसन्नता पूर्वक ( )

(ब) **यदि आपको भोजन पसन्द नहीं आता है तो कोई व्यवस्था की जाती है :**

(क) हमेशा ( )
(ख) प्रायः ( )
(ग) कभी-कभी ( )
(घ) साधारणतया नहीं ( )

(स) **यदि की जाती है तो :**

(क) आपके लिए विशेष रूप से बनाया जाता है ( )
(ख) बाजार से मंगाया जाता है ( )
(ग) अन्य कोई व्यवस्था की जाती है क्या ( )

(19) (अ) **आपके परिवार के सभी सदस्य एक ही बार में भोजन करते हैं**

हाँ ( ) नहीं ( )
केवल आप अलग भोजन करते हैं

(ब) **यदि नहीं तो अब सदस्य अलग-अलग भोजन करते हैं तो :**

( ) पुनः भोजन बनाया जाता है ( )
( ) गरम करके परोसा जाता है ( )
( ) जैसा है वैसा ही परोसा जाता है ( )

(20) **भोजन से आपको सन्तोष :**

(क) पूर्णतया सन्तुष्ट है ( )
(ख) सन्तुष्ट है ( )
(ग) असन्तुष्टों अनिश्चित मत ( )
(घ) असन्तुष्ट हैं ( )
(ङ) बिल्कुल असन्तुष्ट है ( )

(21) (अ) **आदतें :**

चाय ( ) सुपारी ( )
पान ( ) तम्बाकू ( )
सिगरेट ( ) बीड़ी ( )
हुक्का ( ) भांग ( )
मास्का ( ) मादक पेय ( )
अन्य क्या ....

(ब) **क्यों लेते हैं :**

स्फूर्ति ( )
कठोर परिश्रम ( )
दुःख दर्द भूलने के लिए ( )
अन्य कारण ....

(22) **व्यायाम आप प्रतिदिन व्यायाम करते हैं :**
हाँ ( ) नहीं ( )
यदि हाँ तो कैसा :
(क) हल्का, पुल्का व्यायाम करते हैं ( )
(ख) आसन लगाते हैं ( )
(ग) घूमने जाते हैं ( )

(23) (अ) **आपका स्वास्थ्य कैसा है :**
(क) प्रायः स्वास्थ्य रहते हैं ( )
(ख) कभी-कभी बीमार रहते हैं ( )
(ग) प्रायः बीमार रहते हैं ( )
(घ) बीमार ही रहते हैं ( )

(ब) **दि आप स्वस्थ नहीं हैं तो क्या बीमारी है :**
(क) ब्लडप्रेसर ( )
(ख) लकवा ( )
(ग) बबासीर ( )
(घ) गठिया ( )
(ङ) मोतिया बिन्द ( )
(च) मधुमेह ( )
(छ) प्रोस्टेट ग्रेड (पौरुष ग्रन्थ) ( )
(ज) कैंसर ( )
(झ) पैरों में सूजन ( )
(त्र) केवल कमजोरी ( )
(ट) अन्य कोई क्या ....

(24) (अ) **आप बीमार होते हैं तो क्या तुरन्त उपचार की व्यवस्था होती है :**
(क) हाँ ( )
(ख) प्रायः होती है ( )
(ग) कभी-कभी होती है ( )
(घ) नहीं होती है। ( )

(ब) **यदि होती है तो किसके द्वारा :**
(क) स्वयं के द्वारा ( )
(ख) सन्तानों के द्वारा ( )
(ग) पति या पत्नी के द्वारा ( )
(घ) अन्य किसी के द्वारा किसके ....

(25) (अ) **स्वास्थ्य के लिये आपको चिकित्सा सम्बन्धी सुविधायें साधारणतया कहाँ प्राप्त होती हैं :**

(क) घर में ( )
(ख) निजी अस्पताल में ( )
(ग) सरकारी अस्पताल में ( )

(ब) **बीमारदारी की क्या व्यवस्था होती है?**

(क) आप स्वयं करते हैं ( )
(ख) परिवार के सदस्य करते हैं ( )
(ग) पति-पत्नी एक दूसरे की (आपस) में कर लेते हैं ( )
(घ) अस्पताल में होती है ( )
(ङ) अन्य कोई करता है कौन ....

(26) (अ) **आप चिकित्सा किस प्रकार की पसन्द करते हैं :**

(क) झाड़-फूकी ( )
(ख) प्राकृतिक ( )
(ग) आयुर्वेदी ( )
(घ) यूनानी ( )
(ङ) एलोपेथी ( )
(च) होम्योपेथी ( )

(ब) **क्या आप इस पसन्द का कारण बता सकते हैं**

....

(27) **चिकित्सा व्यवस्था से आपको सन्तोष है :**

(क) पूर्णतया सन्तुष्ट ( )
(ख) सन्तुष्ट ( )
(ग) अनिश्चित की स्थिति ( )
(घ) असन्तुष्ट ( )
(ङ) अत्याधिक असन्तुष्ट ( )

(28) (अ) **आपका मकान किस प्रकार का है :**

(क) पक्का ( )
(ख) अर्द्ध पक्का ( )
(ग) कच्चा ( )

(ब) **आप किसके मकान में रहते हैं :**

(क) सरकार द्वारा प्रदान किये गये मकान में ( )
(ख) मिल मालिक द्वारा प्रदान किये गये मकान में ( )
(ग) किराये के मकान में ( )
(घ) स्वयं द्वारा बनाये मकान में ( )
(ङ) पुत्रों द्वारा बनाये मकान में ( )
(च) पुश्तेनी मकान में ( )

(छ) किसी रिश्तेदार के मकान में ( )

(स) **आप कितने समय से इस मकान में रह रहे हैं** ....

(द) **मकान का किराया प्रतिमाह** ....

(य) **यदि आपने स्वयं मकान बनवाया है तो मकान के लिए धन राशि** ....

(क) स्वयं लगाई है ( )

(ख) कर्ज लेकर लगाई है ( )

किससे :

(क) शासन है ( )

(ख) फैक्ट्री से ( )

(ग) किसी संस्था से ( )

(घ) दोनों प्रकार की लगाई है ( )

(र) **यदि कर्ज लिया है तो चुका :**

(क) दिया है ( )

(ख) शेष है ( )

तो चुकाने के लिए क्या-क्या व्यवस्था है

(क) स्वयं की बचत से ( )

(ख) कोई किरायेदार रखा है ( )

(ग) स्वयं के खर्च में कटौती करती है ( )

(घ) आय का कोई अतिरिक्त साधन है ( )

(ङ) कर्ज चुकाने में स्वयं को असमर्थ महसूस करते हैं ( )

(च) सन्ताने कर्ज चुका देगी ( )

(29) **अपने मकान से आपको सन्तोष है :**

(क) बहुत सन्तुष्ट है ( )

(ख) सन्तुष्ट है ( )

(ग) अनिश्चित मत ( )

(घ) असन्तुष्ट ( )

(ङ) बहुत असन्तुष्ट ( )

(30) **पारिवारिक जीवन में कार्य कैसे करते हैं :**

व्यक्तिगत कार्य		**घरेलू कार्य**
( )	स्वयं करते हैं	( )
( )	कुछ कार्य करते हैं	( )
( )	परिवार के सदस्य करते हैं	( )
( )	नौकर करते हैं	( )

(31) (अ) **क्या आप किसी प्रकार की नियोग्यता महसूस होते / करते हैं :**

हाँ ( ) नहीं ( )

(ब) **यदि हाँ तो कौन-सी :**

(क) शारीरिक : ( )

(1) आँख से दिखाई न देना ( )
(2) कम दिखाई देना ( )
(3) सुनाई न पड़ना ( )
(4) कम सुनाई पड़ना ( )
(5) दाँतों का अभाव ( )
(6) ठीक से भोजन न चबा पाना ( )
(7) हाथ से काम न कर पाना ( )
(8) हाथ कांपने के कारण ठीक से काम न कर पाना ( )
(9) पाँव से न चल पाना ( )
(10) ठीक से न चल पाना ( )
(11) अन्य कोई ( )

(ख) आर्थिक : ( )
(1) आजीविका न कमा पाना ( )
(2) कम कमा पाना ( )
(3) अन्य कोई ( )

(ग) पारिवारिक : ( )
(1) परिवार के कार्यों में सहयोग न कर पाना ( )
(2) कम कर पाना ( )
(3) अन्य कोई .... यथा शक्ति करते हैं ( )

(32) **विवाह :**

(अ) (क) अपनी सन्तानों के विवाह अवकाश प्राप्ति के पहले ही कर दिये ( )
(ख) बाद में किये ( )
(ग) कुछ के बाद में किये ( )
(घ) अभी भी शष हैं ( )
कौन .... पुत्र कितने ( )
पुत्रियाँ एक ( )

(ब) उनके विवाह की क्या व्यवस्था है :
(क) करने ही वाले हैं ( )
(ख) उपयुक्त व्यक्ति मिलते ही कर देंगे ( )
(ग) अवसर आयेगा तब देखेंगे ( )
(घ) पुत्र-पुत्री स्वयं कर लेंगे ( )
(ङ) अभी इस विषय पर कुछ ध्यान नहीं दिया ( )

(स) उनके जीवन साथ के चुनाव में क्या आप उनकी राय लेना चाहेंगे :

पुत्र की		पुत्री की
( )	हाँ	( )
( )	नहीं	( )

(द) उनके विवाह में दहेज :

लड़कों के

(क) अवश्य लेंगे ( )
(ख) यदि मिला तो अच्छा ही है ( )
(ग) यदि मिल गया तो लेंगे ( )
(घ) यदि नहीं मिला तो भी ठीक है ( )
(ङ) नहीं लेना चाहेंगे ( )
(च) बिल्कुल नहीं लेंगे ( )

लड़कियों के

(क) अवश्य लेंगे ( )
(ख) देना अच्छा ही है ( )
(ग) यदि देना पड़ा तो देंगे ( )
(घ) यदि नहीं देना पड़ा तो ठीक है ( )
(ङ) देना नहीं चाहेंगे ( )
(च) बिल्कुल नहीं देंगे ( )

(य) यदि देना पड़ता तो क्या व्यवस्थायें हैं :
(क) पूरी है ( )
(ख) पूरी तरह नहीं है ( )
(ग) दूसरी सन्तानें करेगी ( )
(घ) कोई व्यवस्था नहीं है ( )

(33) **वृद्धावस्था में सामाजिक जीवन में परिवर्तन :**

(अ) आपके प्रति लोगों के व्यवहार में परिवर्तन
हाँ ( ) नहीं ( )
यदि हाँ तो क्या

पहले की अपेक्षा परिवर्तन	पति	पत्नी	भाई	बहन	पुत्र	पुत्री	रिश्तेदार	मित्र	पड़ौसी	अन्य परिचित
1. सहानुभूति										
2. घृणा										
3. हीनता										
4. कोसना										
5. निरापर										
6. उदासीन										
7. अन्य कोई परिवर्तन क्या										

(अ) अन्य लोगों के प्रति आपके व्यवहार में परिवर्तन ....
हाँ ( ) नहीं ( )
यदि हाँ तो कैसा ....

परिवर्तन	पति	पत्नी	भाई	बहन	पुत्र	पुत्री	रिश्तेदार	मित्र	पड़ौसी	अन्य परिचित
प्रेम अधिक										
घृणा										
हीनता										
कोसना										
निरादर										
उनसे सम्पर्क न्यूनतम										
उनके प्रति क्रोध अधिक आना										
अन्य कोई										

(34) (अ) वृद्धावस्था में सबसे अधिक सहानूभूति व आत्मीयता किससे मिली ....

(ब) क्या आप इसका कारण बना सकते हैं

....

(स) इस सहानुभूति एवं आत्मीयता की प्रतिक्रिया स्वरूप आप उनके प्रति क्या करते हैं :

(क) स्नेह ( )

(ख) इज्जत ( )

(ग) तटस्थ ( )

(घ) अन्य कुछ क्या ....

(35) (अ) वृद्धावस्था के कारण आपके धार्मिक जीवन में कोई परिवर्तन,

हाँ ( ) नहीं ( )

(क) नियमित पूजा अर्चना ( ) प्रारम्भ वृद्धि ( )

(ख) धार्मिक पुस्तकों का पाठ्न ( ) प्रारम्भ वृद्धि ( )

(ग) सत्संग आदि में जाना ( ) प्रारम्भ वृद्धि ( )

(घ) मन्दिर जाना ( ) प्रारम्भ वृद्धि ( )

(ङ) दान देना ( ) प्रारम्भ वृद्धि ( )

(च) सन्यास विरक्ति ( ) अधिकांशतया पूर्ण ( )

(छ) तीर्थ यात्रा ( ) कितनी बार ( )

(ज) अन्य कोई परिवर्तन ....

(ब) क्या आप उस परिवर्तन का कोई कारण बता सकते हैं ....

(36) **विशेष अवसरों पर आपकी उपस्थिति कैसी समझी जाती है :**

	अनिवार्य	शुभ	सामान्य	अशुभ	अनावश्यक
1. परिवार के सदस्यों द्वारा					
2. रिश्तेदारों द्वारा					
3. पड़ौसियों द्वारा					
4. परिचितों द्वारा					
5. समाज के अन्य व्यक्तियों द्वारा					

(37) **आप मनोरंजन किस प्रकार करते हैं :**

(क) रेडियो ( )
(ख) सिनेमा ( )
(ग) पढ़ने ( )
(घ) गपशप ( )
(ङ) संगीत ( )
(च) बागवानी ( )
(छ) पशु पक्षी पालन ( )
(ज) बच्चों के साथ मन बहलाना ( )
(झ) खेलना ( )
(अ) घर के अन्दर खेलना ( )
(ब) घर के बाहर खेलना ( )
(स) नियमित ( )
(द) अनियमित ( )
अन्य किसी रूप में ....

(38) (अ) **आपको अवकाश मिलता है हाँ / नहीं** ( )
(ब) अवकाश का उपयोग कैसे : ( )
(क) आराम करने में ( )
(ख) धनोपार्जन में ( ) क्या ( )
(ग) पढ़ने में ( ) क्या ( )
(घ) मनोरंजन में ( )
(ङ) अन्य किसी रूप में ....
(स) अवकाश के उपयोग से सन्तोष है :
(क) पूर्णतया सन्तुष्ट ( )
(ख) सन्तुष्ट ( )
(ग) अनिश्चय की स्थिति ( )

(घ) असन्तुष्ट ( )
(ङ) अत्यधिक असन्तुष्ट ( )

(द) यदि असन्तोष है तो कैसे उपयोग करना चाहते हैं :
(क) ....
(ख) ....
(ग) ....

(य) इस प्रकार मन के अनुसार अवकाश का उपयोग कर पाने में क्या बाधायें हैं :
(क) आर्थिक ( )
(ख) शारीरिक ( )
(ग) पारिवारिक .... क्या ( )
(घ) सामाजिक .... क्या ( )
(ङ) अन्य कोई .... क्या ( )
(घ) असन्तुष्ट ( )
(ङ) अत्यधिक असन्तुष्ट ( )

(39) **क्या परिवार में आप अपनी स्थिति से सन्तुष्ट हैं :**
(क) पूर्णतया सन्तुष्ट ( )
(ख) सन्तुष्ट ( )
(ग) अनिश्चय की स्थिति ( )
(घ) असन्तुष्ट ( )
(ङ) अत्यधिक असन्तुष्ट ( )

(40) **क्या आप प्रौढ़ साक्षरता की आवश्यकता महसूस करते हैं :**
हाँ ( ) नहीं ( )
यदि हाँ तो किस प्रकार की शिक्षा :
(क) शैक्षणिक ( )
(ख) व्यवसायिक ( )
(ग) अन्य कोई ....

(41) (अ) **क्या आप राजनीति में रुचि रखते हैं :**
हाँ ( ) नहीं ( )
(ब) यदि हाँ तो किस रूप में : ( )
(क) सक्रिय कार्यकर्त्ता हैं ( )
(ख) केवल सदस्य हैं ( )
(ग) केवल जानकारी प्राप्त करन में रुचि है ( )
(घ) अन्य किसी रूप में क्या ....
(स) यह रुचि वृद्धावस्था में :
(क) पूर्व से ही है ( )
(ख) बाद में पैदा हुई है ( )
(ग) बढ़ गयी है ( )

(42) वसीयत :

(अ) (क) अपनी वसीयत अपने हाथों करना पसन्द करते हैं ( )

(ख) इस विषय पर विशेष ध्यान नहीं दिया है ( )

(ग) वसीयत करना पसन्द नहीं करते हैं ( )

(ब) यदि वसीयत करना पसन्द करते हैं तो किसको :

(क) सन्तानों को ( )

(ख) किसी संस्था को ( )

(ग) सन्तानों व संस्था दोनों को ( )

(घ) अन्य किसी को .... किसको ....

	पुत्र–पुत्रियाँ दोनों हैं	केवल पुत्र है	केवल पुत्री है
1. सभी को समान रूप से			
2. केवल पुत्रों को			
3. केवल कुछ पुत्रों को			
4. केवल कुछ पुत्रियों को			
5. किसी एक को			

किसको ....

(43) (अ) **क्या आप जानते हैं कि पश्चिमी देशों में और भारत के भी बहुत बड़े नगरों में कहीं–कहीं वृद्धावस्था गृहों (ओल्ड पीपुल्स हाउसेस) की व्यवस्था है :**

(क) हाँ ( )

(ख) नहीं जानते ( )

(ग) कुछ ठीक से नहीं ( )

(घ) थोड़ा बहुत जानते हैं ( )

(ब) **यदि हाँ तो क्या आप ऐसे वृद्ध गृहों में निवास करना पसन्द करोगे :**

(क) हाँ ( )

(ख) नहीं ( )

(ग) अनिश्चित मत ( )

(स) **यदि नहीं तो क्यों :**

(क) अपने घर में सब सुख सुविधायें हैं ( )

(ख) अपना घर ही अच्छा लगता है चाहे कुछ भी दिक्कत हो ( )

(ग) वृद्धा गृह पता नहीं कैसे हों ( )

(घ) शायद वृद्ध गृहों में मन नहीं लगेगा ( )

(ङ) वृद्धा गृह बेकार है ( )

(44) **वृद्धावस्था की स्थिति में सुधार करने के लिए आपके पास कोई प्रस्ताव है :**

परिवार द्वारा क्या किया जाये	सरकार द्वारा क्या किया जाय	समाज सेवी संस्था द्वारा क्या किया जाये	अन्य किसी के द्वारा क्या किया जाये जिसके द्वारा
1.			
2.			
3.			
4.			
5.			

(45) सामाजिक सुरक्षा का दृष्टि से सरकार ने आपको क्या-क्या सुविधायें प्रदान की हैं :

(क) ....

(ख) ....

(ग) ....

(घ) ....

(ङ) ....

(46) उक्त जानकारी के अतिरिक्त भी क्या वृद्धों की समस्याओं तथा उनके निवारण के विषय में आप कुछ कहने के इच्छुक हैं :

(क) ....

(ख) ....

(ग) ....

(घ) ....

(ङ) ....

BIBLIOGRAPHY

1. **Ackoff, R.L. (1953)** : The Design of Social Research, Chicago.
2. **Altekar, A.S. (1962)** : The Position of Women in Hindu Civilization, Motilal Banarsidas, Delhi.
3. **Alfred de Souza (1982)** : The Social Organization of Aging Among The Urban Poor, Indian Social Institute, New Delhi.
4. **Anderson Nels (1961)** : Work and Leisure, Routledge and Kegan Paul London.
5. **Bhatnagar, G.s. and Randhawa Mohinder (1987)** : Social Adjustment Among Retired Persons in Aging in India, edited by Desai, K.G. TISS Bombay.
6. **Bhatia, H.S. (1983)** : Aging and Society, Arya's Book Centre Publishers, Udaipur.
7. **Birren James, E. (1964)** : The Psychology of Aging, Englewood Cliffs N.J. Prentice Hall.
8. **Blau, Zena (1956)** : Changes in Status and Age Identification, American Sociological Review, New Series– 21.
9. **Chapin Stuart (1947)** : Experimental Designs in Sociological Research, New York.
10. **Chowdhary, D.P. (1992)** : Aging and the Aged, Inter-India Publications, New Delhi.
11. **Clark Tibbitts (ed) (1951)** : Living Through The Older Years, University of Michigan Press, Ann Arbor.
12. **Cottrell, Fred (1960)** : Governmental Functions and the Politics of Age, in Handbook of Social Gerontology edited by Clark T. University of Chicago Press.
13. **Desai, K.G. and Naik, R. D. (1970)** : Problems of Retired People in Greater Bombay, Tata Institute of Social Science Bombay.
14. **Desai, I.P. (1964)** : Some Aspects of Family in Mahuwa, Asia Publishing House, Bombay.
15. **Desai, K.G. (1982)** : Aging in India, Tata Institute of Social Sciences Bombay.
16. **Dinkel Robert, M. (1944)** : Attitudes of Children Towards Supporting Aged Parents, American Sociological Review, New Series – 9.

17. **D. Souza Victor S. (1971)** : Changes in Social Structure and Changing Roles of Older People in India, Sociology and Social Research, Vol. 55, No. 3.

18. **Edward A. Shils (1984)** : Authority : Legitimation of Authority in a New Dictionary of The Social Aciences edited by G. Duncan Mitchell, Routledge & Kegan Paul London.

19. **Ethel Shanas (1968)** : Old People in Three Industrial societies, Routledge and Kegan Paul, London.

20. **George Soule (1957)** : The Economics of Leisure, Annals of The American Academy of Political and Social Science, Vol. 313. Sept.

21. **George Maddox, L. (1966)** : Retirement as a Social Event in The United States, in John C. Mc Kinney etc. 'Aging and Social Policy,' Appelton Century Crofts – New York.

22. **Gilbert Dooghe (1971)** : The Theories of Disengagement and the Subculture of Elderly People as a Sociological Basis for The Study of the Problem of the Aged, as reported in Sociological Abstract.

23. **Goldfarb, A.I. (1965)** : Psychodynamics and The Three Generation Family – in E. Shanas and others (eds) – Social Structure and The Family, Gerontological Relations, N.J. Prentice-Hall, Englewood Cliffs.

24. **Gur Sharan Kaur (1964)** : The Problems of Aged Women in Batala, Punjab University Chandigarh.

25. **Havighurst, R.J. (1965)** : Essay on Body, Self and Society, Sociology and Social Research, Vol. 49, No. 3, April.

26. **Herman, T. Blunmenthal (1962)** : Aging Around The World : Medical and Clinical Aspects of Aging, Columbia University Press New York.

27. **Jagjit Singh (1962)** : Problems of Old Women in a Village, Punjab University Chandigarh.

28. **Jha, V.S. (1996)** : Indian Women Today : Tradition, Modernity and Challenge – 'Aavishkar Publishers Jaipur.

29. **Kaur Satnam and Kaur Malkit (1987)** : Psyschosocial Problems of The Aged in Aging in India, Edited by Sharma and Dak, Ajanta Publication Delhi.

30. **Kalish, A.R. (1972)** : Of Social Values and The Dying : A Defence of Disengagement, Family Co-ordinator, Vol. 21, No. 1, reference from Sociological Abstract, May 1973.

31. **Kanungo, M.S. (1982)** : The Biological Aspects of Aging in 'Aging in India' (ed) Desai, K.G., Tata Institute of Social Sciences Bombay.

32. **Krishna Kumari (1987)** : Status of Single Women in India, Uppal Publishing House, New Delhi.

33. **Lowenthal, M.F. (1964)** : Social Isolation and Mental Illness in Old Age, American Sociological Review, Feb.

34. **Lundberge George, A. (1943)** : Leisure : A Sub-Urban Study in Anderson's Book – Wook and Leisure – Routledge and Kegan Paul London.

35. **Margaret Blanker (1969)** : Cultural Values and Dependency in Later Life in Kalish, R.A. (ed.) Dependencies of Old People, University of Michigan.

36. **Max Weber (1947)** : The Theory of Social and Economic Organization, The Free Press Glencoe.

37. **Mehta, Sushila (1982)** : Revolution and Status of Women in India, Metropolitan Book Co. New Delhi.

38. **Mehta, Rama (1987)** : Socio Legal Status of Women in India, Mittal Publication, Delhi.

39. **Minna Field (1968)** : Aging with Honour and Dignity Spring Field; Charles C. Thomas.

40. **Mishra, L.S. and Agnihotri, U.S. (1982)** : The Erosion of Authority of Aged in Family in India, Paper Contributed in Xth World Congress – Maxico.

41. **Mishra, S. (1994)** : Status of Women in Changing Urban Hindu Family, Aavishkar Publishers Jaipur.

42. **Nayar, P.K.B. (1980)** : A Study of The Working of Old Age Pension Schemes in Kerala, University of Kerala.

43. **Nayar, P.K.B. (1987)** : Aging and Society, Social Welfare, Vol. 34 No. 2 and 3 Central Social Welfare Board New Delhi.

44. **Poorkaj, H. (1972)** : Social Psychological Factors and Successful Aging, Sociology and Social Research Vol. 56, No. 3, April.

45. **Punia, R.K. and Others (1987)** : Aging Problems : A Study of Rural Urban Differentials in Aging in India edited by Sharma & Dak, Ajanta Publications Delhi.

46. **Raab, Earl and Selzknick, G.J. (1959)** : Major Social Problems, Row Peterson and Company Illinois.

47. **Rane, A.J. (1988)** : Rehabilitation of Widow : Problems and Perspectives, Janta shikshana Samiti Dharwad.

48. **Rawat, H.K. (1980)** : Encyclopaedia of Sociology, Rawat Publications, Jaipur.

49. **Reddy, C.R. (1986)** : Changing Status of Educated Working Women : A Case Study, B.R. Publishing Corporation Delhi.

50. **Sarswati, Mishra (1987)** : Social Adjustment in Old Age, D.K. Publishers, New Delhi.

51. **Saxena, P.C. & Bose A.B. (1964)** : Some Characteristics of The Aged Population in Rural Society, Journal of Family Welfare, June Part 10.

52. **Saxena, R. Prasad (1984)** : Problems of The Aged in India : Some Reflections in Aging in India : Challenge for The Society edited by Sharma, M.L. and Dak, T.M., Ajanta Publications Delhi (1987).

53. **Tissue Thomas (1972)** : Old Age and The Perception of Property, Sociology and Social Research, Vol. 56.

54. **Townsent, P. (1957)** : The Family Life of Old People – An Inquiry in East London, Routledge and Kegan Paul London.

55. **Tripathi, Shambhoo Ratan (1963)** : Bhartiya Sanskriti Avam Samaj, Kitabghar, Acharya Nagar Kanpur.

56. **Thompson Wayne, F. and Others (1960)** : The Older Person in a Family Context in Handbook of Social Gerontology edited by Clark, T., University of Chicago Press.

57. **William, J. Goode and Paul k. Hatt (1952)** : Methods in Social Research, McGraw Hill Book Com. Inc. New York.

58. **Wilma Donahue and Others (eds.) (1962)** : New Frontiers of Aging, University of Michigan Press, Ann Arbor.
    (1969) : Living in The Multigenerational Family, University of Michigan, Division of Gerontoloty, Ann Arbor.

59. **Wilma Donahue (1963)** : Rehabilitation of Long Term Aged Patients Process of Aging, Vol. I, edited by Richard H. Williams and Others, Atherton press Chicago.

60. **Young, P.V. (1949)** : Scientific Social Survey and Research, New York.

❖❖❖❖❖